व्यापारिक पद्धति और यंत्र

भाग २

[इन्टरमीडियेट परीक्षा के लिए यू० पी० बोर्ड, पटना विश्वविद्यालय, हिन्दू विश्वविद्यालय, राजपूताना बोर्ड, मध्यभारत बोर्ड, काउन्सिल आव टेक्निकल ऐज्यूकेशन, आदि द्वारा स्वीकृत]

लेखक

अमर नारायण अग्रवाल, एम० ए०, बी० काम०

रीडर, वाणिज्य विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय, प्रयाग

लेखक, "अर्थशास्त्र का परिचय", "वाणिज्य अर्थशास्त्र" आदि।

छठवाँ संशोधित और विस्तृत संस्करण

मूल्य ३) रु०

किताब महल, इलाहाबाद

छठवें संस्करण की भूमिका

इस संस्करण में बहुत-कुछ सुधार तथा उलट फेर किये गये हैं। इसमें से व्यापारिक विधान की शाखा निकाल दी गई है क्योंकि अधिकांश परीक्षा-संस्थाओं ने इन्टरमीडियेट के पाठ्य क्रम से इस विषय को बहिष्कृत कर दिया है। उसके स्थान पर दो नये अध्याय "पेटेन्ट, डिजाइन्स तथा ट्रेडमार्क" और "क्रम-बन्धन (Grading) तथा प्रमापीकरण (Standardisation) दे दिये गये हैं। ये विषय व्यापारियों के लिये बहुत महत्व के हैं, और इन्हें इतने आसान ढंग पर समझाया गया है कि विद्यार्थी इन्हें सरलता से हृदयंगम कर लें। Indian Patents and Designs Act 1941, Indian Trade Marks Act, 1940, Indian Agricultural (Grading and Marketing) Produce Acts 1937 तथा Indian Standards Institute के विषय में जो सूचना दी गई है उससे पाठक को इन उपयोगी बातों का ज्ञान हो सकेगा। साझेदारी के अध्यायों में 'ख्याति' (Goodwill) नाम की एक नई शाखा जोड़ दी गई है। एक नया अध्याय "कम्पनी के सेक्रेटरी का काम" भी लिखा गया है क्योंकि वाणिज्य के विद्यार्थियों को इस महत्वपूर्ण विषय का ज्ञान आवश्यक है। नवीन परीक्षा प्रश्नों को अध्यायों के हिसाब से वर्गीकृत कर दिया गया है। आशा है शिक्षक एवं विद्यार्थी समाज इन नवीन अंशों को स्वीकार करेगा, और विविध परीक्षा-मंडल इन्हें (विशेषतया पेटेंट, डिजाइन्स ट्रेडमार्क, आदि को) अपने पाठ्य क्रमों में सम्मिलित करने पर विचार करेंगे।

४, बलरामपुर हाउस,
जुलाई १, १९५६

अमर नारायण अग्रवाल

पहले संस्करण की भूमिका से

हमारे पूर्वजों के समय में व्यापार बहुत सुगम और आसान था क्योंकि उस समय में कोई भी व्यापारी कैसा ही सामान लेकर दूकान खोल कर बैठ सकता था और ग्राहकों से अपनी रुचि के अनुसार शिष्ट या अशिष्ट व्यवहार कर सकता था। खरीदार फिर भी उसे घेरे रहते थे क्योंकि तब दुकानें थोड़ी थीं और स्पर्द्धा कम थी। किन्तु वर्तमान युग में जहाँ विशिष्टीकरण और अन्तर्राष्ट्रीय बाजारों, बहुसख्यक तथा विभाजित स्टोरों, वैज्ञानिक तथा कलापूर्ण बिक्री एव तीक्ष्ण स्पर्द्धा का बोलबाला है, यह सब अतीत की स्मृति मात्र होकर रह गई है। गई-बीती व्यापारिक रीतियाँ तथा अशिष्ट व्यवहार आधुनिक व्यापारिक रीतियों और वैज्ञानिक विक्रय कला की विरोधी हैं, और आधुनिक जगत में आधुनिक रीतियों द्वारा ही सफलता मिल सकती है। अत आधुनिक व्यापारिक पद्धति का महत्व व्यापार में पदार्पण करने वाले युवक के लिए कितना महान् है, यह आसानी से समझा जा सकता है।

कुछ काल पूर्व आधुनिक व्यापारिक रीतियों का अध्ययन विदेशों में व्यर्थ समझा जाता था, और आजकल हमारे देश में भी ऐसी ही धारणा उपस्थित है। यह बहुधा कहा जाता है कि हमारे औद्योगिक सम्राटों ने महान् पद बिना व्यापारिक शिक्षा के प्राप्त किये हैं और इसी प्रकार भावी युवक भी सफल हो सकते हैं। यह भी कहा जाता है कि पढ़ लिख कर विद्यार्थियों को सैद्धान्तिक ज्ञान का तो लाभ हो जाता है किन्तु उनमें व्यापार करने की योग्यता विकसित नहीं होती। अब यह समय आ गया है कि हम इस प्रकार के दृष्टिकोण से स्वयं को मुक्त करें। वास्तव में यदि हमारे औद्योगिक सम्राटों को शिक्षा प्राप्त करने का अवसर मिला होता, तो कदाचित् उन्हें और भी अधिक सफलता मिलती। हमारे महाविद्यालयों की शिक्षा व्यापारिक पद्धति के विषय में केवल सैद्धान्तिक ज्ञान तो देती है, किन्तु यह रचनात्मक क्षेत्र में प्रवेश

करने पर बहुत काम आती है। आजकल के विशिष्टीकरण के युग में जिस प्रकार डाक्टर को डाक्टरी विज्ञान का तथा वकील को विधान का अध्ययन आवश्यक है, उसी प्रकार व्यापारी को व्यापारिक शिक्षा प्राप्त करना अभीष्ट है।

ऐसे विचारों के फलस्वरूप अनेक व्यापारिक परीक्षाओं के पाठ्यक्रम में आधुनिक व्यापारिक पद्धति का समावेश कर दिया गया है। इस विषय की विस्तृत लोकप्रियता के होते हुए भी हमारे देशवासियों ने बहुत थोड़ी ही पुस्तकें इस पर लिखी हैं। पर पाश्चात्य देशों में ऐसा नहीं है। इंगलैंड और खासकर अमेरिका में, कुछ मेधावी पुरुषों ने अपनी प्रतिभा को व्यापारिक पद्धति को विज्ञान और कला का रूप देने में समर्पित कर दिया है और वहाँ ऐसी पुस्तकें निकली हैं जिन्हें व्यापार में प्रवेश करने वाले नवयुवक पढ़कर लाभ उठा सकते हैं। अतः उस पुस्तक के लिखने के के लिये कदाचित किसी क्षमा याचना की आवश्यकता नहीं। यह पुस्तक मुख्यतया इंटरमीडिएट के विद्यार्थियों के लिये लिखी गई है। यू० पी०, राजपूताना, पटना, बनारस, अलीगढ़, मध्य प्रदेश, दिल्ली, नागपुर, सागर आदि के विश्वविद्यालयों या शिक्षा मंडलों द्वारा निर्धारित पाठ्यक्रमों को ध्यान में रखते हुये इस पुस्तक की विषय सामग्री का निर्णय किया गया है।

पुस्तक के लिखने में मैंने इस बात की बराबर चेष्टा की है कि व्यावहारिक दृष्टिकोण को सामने रखा जाय और उसे प्रधानता दी जाय। विषय को स्पष्ट करने के लिये और उसे सुव्यवस्थित बनाने के लिये कई प्रकार के शीर्षकों और उपशीर्षकों का प्रयोग किया गया है। किसी भी विषय के समझाने के लिये "दृष्टिगत सहायता" (visual aids) जैसे रेखा-चित्र, चार्ट, आदि बहुत उपयुक्त होते हैं और इनका इस पुस्तक में स्वतंत्रता-पूर्वक प्रयोग किया गया है। व्यापारी जिन विशेष फार्मों का इस्तेमाल करते हैं, उनके उदाहरण भी पुस्तक में दिये गये हैं।

विषय-सूची

शाखा १० : फुटकर

व्यापारिक संगठन के स्वरूप

अध्याय ३३

प्रारम्भिक

"व्यापारिक सगठन" शब्द का अर्थ आसानी से समझा जा सकता है। वे समस्त मानवीय क्रियायें, जो माल के क्रय विक्रय के उद्देश्य से की जाती हैं, व्यापार के नाम से पुकारी जाती हैं। दिये हुये उत्पत्ति के साधनों में किसी उद्देश्य की प्राप्ति के लिये प्रभावपूर्वक सहयोग स्थापित करने का नाम संगठन है। अत. व्यापारिक सगठन का अर्थ व्यापार के विभिन्न साधनों के बीच में प्रभावपूर्ण सहयोग स्थापित करना ही है।

व्यापारिक सगठन के कई स्वरूप हो सकते हैं। इनमें से सब से महत्वपूर्ण स्वरूप निम्नलिखित हैं :(१) एकाकी व्यापारिक भवन, (२) साझेदारी के फर्म और (३) सयुक्त पूँजी की कम्पनियाँ। इन तीनों स्वरूपों के प्रमुख भेद व्यापारिक इकाई के स्वामित्व एव वैधानिक (या कानूनी) बनावट से सम्बधित हैं।

व्यापारिक सगठन के और नये-नये रूप भी तेजी से उदय हो रहे हैं। बड़े पैमाने की उत्पत्ति के वर्तमान युग में, बड़ी-बड़ी व्यापारिक इकाई स्थापित करने के उद्देश्य से बहुधा दो या दो से अधिक व्यापारिक भवन सयुक्त हो जाते हैं। ऐसी सयुक्त व्यापारिक इकाइयों को सघ (Combination) कहा जाता है। सघ आन्दोलन वैसे तो ससार के प्रत्येक प्रगतिशाल देश में प्रचलित है किन्तु इसका संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में विशेष जोर है।

आधुनिक काल में सहकारिता के आन्दोलन ने भी काफी उन्नति की है, और बहुत से व्यापारिक भवन सहकारी सिद्धान्त पर खोले गये हैं। उदाहरण के लिये, कभी-कभी किसी स्थान के उपभोक्ता आपस मे मिलकर एक "सहकारी उपभोक्ता स्टोर" खोल लेते हैं जिसका सारा लाभ क्रेताओं में उनकी वार्षिक क्रय के अनुपात में विभाजित कर दिया जाता है।

व्यापारिक भवन का क्या स्वरूप हो, यह उसके स्वामी तथा अन्य व्यापारियों के लिये बहुत महत्व की बात होती है। व्यापार का स्वामी इसे बहुत महत्वपूर्ण इसलिये समझता है कि उसे लाभ का मिलने वाला भाग, व्यापार में उसके अपने प्रबन्ध और अधिकार की मात्रा तथा उसके जोखिम की मात्रा आदि बातें व्यापारिक संगठन पर ही निर्भर होती हैं। दूसरे, व्यापारियों की इसमें इसलिये दिलचस्पी होती है क्योंकि उन्हें यह जानना आवश्यक होता है कि स्वामियों का उत्तरदायित्व सीमित है अथवा असीमित, व्यापार का प्रबन्ध कौन करेगा, इस प्रबन्ध का भविष्य कैसा होगा, आदि।

अध्याय २४

एकाकी व्यापारी (SOLE TRADER)

अर्थ

जो व्यक्ति केवल अपने हित के लिये और स्वयं अपनी जोखिम पर व्यापार करता है, वह एकाकी व्यापारी कहलाता है।[1] दूसरे शब्दों में, किसी व्यापारिक इकाई का अकेला स्वामी एकाकी व्यापारी कहलाता है। यदि आप अपने परिचय की व्यापारिक कोठिया को देखें, तो आप को पता चलेगा कि उनमें से बहुत सी एकाकी व्यापारिक संस्थाएँ हैं। आप के बीमार हो जाने पर आप के उपचार करने के लिये आने वाला डाक्टर और चटपटे वाला जिसकी चटपटी चाट को देख कर आपके मुँह में पानी भर आता है, साधारणतया एकाकी व्यापारी होते हैं। हमारे देश मे संयुक्त परिवार प्रणाली का प्रचार बहुत है और बहुत सी व्यापारिक कोठियों का स्वामी एक व्यक्ति के स्थान पर एक परिवार होता है। ऐसी व्यापारिक संस्थाएँ भी एकाकी व्यापारिक कोठियों की श्रेणी में

---

[1] व्यक्तिगत स्वामित्व (Individual Proprietorship) वह व्यापारिक उपक्रम है जिसका स्वामी केवल एक ही व्यक्ति होता है जो स्वामी होने के साथ साथ व्यापार का प्रबन्धकर्ता एवं धुरी भी होता है।—Charles W. Gerstenberg, *Principles of Business Organization* p. 104. व्यापारिक सगठन का व्यक्तिगत साहसी वाला स्वरूप वह सगठन है जिसका अध्यक्ष केवल एक व्यक्ति होता है जिस पर सारा उत्तरदायित्व होता है, जो व्यापार का परिचालन करता है और जो व्यापार के असफल हो जाने की जोखिम भी झेलता है। —Lewis Henay, *Business Organisation and Combination*, p. 47.

सम्मिलित होती हैं।[२] एकाकी व्यापारी को "व्यक्तिगत साहसी" या "व्यक्तिगत स्वामी" भी कहते हैं।

एकाकी व्यापारिक संस्था के लक्षण

एकाकी व्यापारिक संस्था का स्वामी केवल एक ही व्यक्ति होता है। स्वामित्व और जोखिम सहगामी होते हैं। अतः व्यापार की सारी जोखिम एकाकी व्यापारी को स्वयं झेलनी पड़ती है। यदि व्यापार में बहुत लाभ हुआ, तो वही अकेला उसका अधिकारी होगा; इसके विपरीत यदि व्यापार में हानि हुई, तो उसी अकेले को यह सहन करनी पड़ती है। अकेला स्वामी और साहसी होने के अतिरिक्त साधारणतया वह व्यापार का संगठनकर्ता तथा मैनेजर भी होता है। साधारण रूप से, एकाकी व्यापारिक संस्था एक विशेष स्थान मे ही काम करती है। किन्तु ऐसे भी एकाकी व्यापारी होते हैं, जिनका व्यापार समस्त देश में ही नहीं प्रत्युत विदेशों में भी फैला होता है। किन्तु ऐसे व्यापारी विरले ही होते हैं।

साधारण रूप से फुटकर विक्रेता, फेरीवाले और प्रत्यक्ष सेवा करने वाले जैसे डाक्टर, एकाकी व्यापारी की भाँति काम करते हैं।

वैधानिक प्रतिबन्ध (Legal Provisions)

एकाकी व्यापार से सम्बध रखने वाले कोई विशेष वैधानिक प्रतिबन्ध नहीं। केवल दो ही बातें ऐसी हैं जिनका स्मरण रखना आवश्यक है। पहली बात तो यह है कि एकाकी व्यापारी का उत्तरदायित्व असीमित होता है। अन्य शब्दों में, उसकी व्यापारिक देनदारियाँ (Liabilities) उसकी व्यापारिक सम्पत्ति में से ही नहीं प्रत्युत उसकी व्यक्तिगत सम्पत्ति में से भी भुगतान की जा सकती हैं।

---

[२] भारतीय साझेदारी विधान सन् १६४२ की धारा ५ में लिखा है: "साझेदारी का सम्बन्ध स्थिति का परिणाम नहीं, प्रत्युत प्रसंविदे (Contract) का परिणाम होता है; और विशेषतया पारिवारिक व्यापार के करने वाले किसी अविभाजित हिन्दू परिवार के सदस्य, व्यापार करने वाले बर्मा निवासी दम्पति, ऐसे व्यापार के साझेदार नहीं होते।"

उदाहरण के लिए, यदि किसी एकाकी व्यापारी को अपने ऋणदाता के १०,००० रु० देने हैं किन्तु उसकी व्यापारिक सम्पत्ति ८,००० रु० ही की है, तो उसका ऋणदाता उसकी व्यक्तिगत सम्पत्ति में से २,००० रु० ले सकता है। दूसरी बात यह है कि क्योंकि एकाकी व्यापारी को बहुत से प्रसंविदे (Contracts) करने पड़ते हैं, अतः उसमें प्रसंवेदन की योग्यता[3] (Competence to Contract) होना आवश्यक है, अन्यथा उसके किये गये प्रसंविदे वैध (Legal) नहीं होंगे। जो व्यक्ति बालिग है और जिसका मस्तिष्क ठीक है, वह प्रसंवेदन योग्य होता है और वही एकाकी व्यापारिक संस्था स्थापित कर सकता है।[4]

इसके लाभ

एकाकी व्यापारिक संस्था से निम्नलिखित लाभ होते हैं :

(१) इसे बहुत सुगमता और शीघ्रतापूर्वक स्थापित किया जा सकता है। जो भी व्यक्ति एकाकी व्यापारिक संस्था स्थापित करना चाहे, वह ऐसा कर सकता है : उसको ऐसा करने से कोई रोक नहीं सकता। कोई विधान यह भी

---

[3]विधवाएँ और विवाहित स्त्रियाँ प्रसंवेदन-योग्य (Competent to Contract) होती हैं और वे अपनी अलग सम्पत्ति की सीमा तक उत्तरदायी ठहरायी जा सकती हैं।

[4]भारतीय प्रसंविदा विधान (सन् १८७२ का नवाँ विधान) की धारा ११ इस प्रकार है : जो भी व्यक्ति उस पर लागू होने वाले विधान के अनुकूल बालिग है, और जिसका मस्तिष्क ठीक है और जो उस पर लागू होने वाले किसी विधान द्वारा प्रसंवेदन के अयोग्य घोषित नहीं हुआ है वह प्रसंवेदन योग्य है।

[5]यह साधारणतया संसार के सभी देशों पर लागू होता है। किन्तु अमेरिका के कुछ स्टेटों में व्यापार प्रारंभ करने के लिए कुछ थोड़ी-सी फीस देकर लाइसेंस लेना आवश्यक होता है।

नहीं कहता कि उसे रजिस्ट्री करना या कोई वैधानिक कागजात भरकर देना आवश्यक है और स्थापना में उसे इस सम्बन्ध में कोई व्यय भी नहीं करना पड़ता।

(२) एकाकी व्यापारी अपने व्यापार का एकमात्र सूत्रधार होता है। उसके मार्ग में कोई बाहरी बाधा नहीं आती। वह किसी भी बात का स्वयं ही शीघ्र निर्णय करके आवश्यक काम कर सकता है, जो व्यापारिक सफलता में बहुत सहायक होता है।

(३) एकाकी व्यापार के सारे लाभ का, स्वामी स्वयं ही अधिकारी होता है। अतः वह लाभ को अधिकतम करने के लिये बहुत परिश्रम, लगन और चतुराई से काम करता है। एकाकी साहसी की व्यापारिक कार्यक्षमता अधिकतर प्रशंसनीय होती है।

(४) एकाकी व्यापारी भेदों को गुप्त रख सकता है। उसके प्रतिद्वंद्वियों को उसके अतिरिक्त और कोई भी उसके भेद नहीं बता सकता।

इसके दोष

व्यापारिक संगठन के इस स्वरूप के निम्नलिखित दोष भी होते हैं जिनका ध्यान में रखना आवश्यक है —

(१) सामान्यतया एकाकी व्यापारिक संस्थाओं की पूंजी कम होती है। इसकी मात्रा स्वयं स्वामी की अपनी निजी पूँजी तथा उसको मिल सकने वाले ऋण तक ही सीमित रहती है। आधुनिक समय के बड़े बड़े कारखानों में करोड़ों रुपये लगते हैं और उन्हें साधारण रूप से एकाकी व्यापारिक संस्था के आधार पर स्थापित नहीं किया जा सकता।

(२) पूँजी की भांति, प्रबन्ध सम्बन्धी चतुराई और योग्यता की मात्रा भी थोड़ी होती है। एक व्यक्ति की निर्णय शक्ति, विवेक शक्ति तथा बुद्धिमानी बहुत सीमित होती है, और यह बात व्यापार के प्रसार में बाधक हो सकती है।

(३) व्यापार की सफलता स्वयं स्वामी की उपस्थिति और उसके व्यक्तिगत प्रबन्ध तथा देख रेख पर निर्भर होती है। यदि कारणवश उसकी अनुपस्थिति अनिवार्य हो जाय, तो व्यापार को धक्का लगने का भय होता है।

(४) एकाकी व्यापारी का असीमित उत्तरदायित्व उसके लिये बहुत डर की बात है। ऋणदाता, व्यापार में लगी हुई पूँजी से नहीं वरन् स्वामी की व्यक्तिगत सम्पत्ति से भी भुगतान करा सकते हैं। यह साहसी की जोखिम झेलने की प्रवृत्ति को हतोत्साहित करता है।

इसका क्षेत्र और वर्तमान अवस्था

उपरोक्त लाभ और दोषों के विवेचन से हम एकाकी व्यापारिक संस्था का क्षेत्र बता सकते हैं। **यह उन व्यापारों के उपयुक्त है जो छोटे होते हैं, जिनमें कम पूँजी एव योग्यता की आवश्यकता होती है और जिनमें व्यक्तिगत देख-रेख महत्वपूर्ण होती है, और जिनमें उत्तरदायित्व अधिक नहीं होता।** आजकल यह स्थानीय व्यापार जैसे फुटकर व्यापार, कृषि, प्रत्यक्ष सेवा वाले पेशों जैसे डाक्टरों का पेशा, कारीगर के काम और बैंकिंग आदि में प्रचलित है। किन्तु इसका क्षेत्र अभी काफी है और रहेगा, यद्यपि व्यापारिक संगठन के अन्य स्वरूपों की सापेक्षिक उन्नति वेग से हो रही है।

एकाकी व्यापारी के भविष्य के विषय में डाक्टर हैने ने ऐसा लिखा है. यह स्वरूप उस विस्तृत क्षेत्र में जीवित रहेगा जिसमें पूँजी की कम आवश्यकता होती है, किन्तु व्यक्तिगत योग्यता की बहुत आवश्यकता होती है। क्योंकि इसके बहुत से लाभ और गुण हैं, इसलिए समाज को चाहिये कि ऐसी अवस्था प्रस्तुत करे जिसमें कि यह अधिक पूँजी और बड़े पैमाने के फर्मों से अच्छी तरह प्रतिद्वंद्विता कर सके। अर्थशास्त्री और राजनीतिज्ञ इस बात को विस्मृत नहीं कर सकते कि आत्मविश्वास और उत्तरदायित्व के गुण समाज के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं, और ये गुण एकाकी व्यापारियों में भली भाँति विकसित होते हैं।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१. एकाकी व्यापारी के वैधानिक प्रतिबन्धों पर प्रकाश डालिये। आधुनिक बड़े पैमाने के युग में एकाकी व्यापारिक संस्थाओं के लिये क्या स्थान है? (उ० प्र० १९५४)

२. एकाकी व्यापारी किसे कहते हैं ? एकाकी व्यापारी को किन हानियों और दोषों का सामना करना पड़ता है ? फिर भी एकाकी व्यापारी क्यों चलता जाता है ? (उत्तर प्रदेश, १९५३)

३. एकाकी व्यापारी संगठन से आप क्या समझते हैं ? साझेदारी व्यापार की अपेक्षा एकाकी व्यापारिक संगठन के क्या-क्या मुख्य गुण और दोष होते हैं ? संक्षेप में वर्णन कीजिये। (उत्तर प्रदेश, १९५२)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

४. एकाकी व्यापारिक के लाभ और दोषों की विवेचना कीजिये। व्यापार की किन शाखाओं में उसने अपना स्थान अब तक बनाये रक्खा है, और क्यों ? (१९५३)

उस्मानिया इन्टर कामर्स

५ एकाकी व्यापार भवन के लाभ और दोषों का वर्णन कीजिये। (उस्मानिया, १९५२)

६. एकाकी व्यापार का क्या अर्थ है ? उसके संगठन के क्या लक्षण होते हैं। (उस्मानिया, १९५१)

उत्कल, इन्टर कामर्स

७. एकाकी व्यापार भवन के लक्षण क्या होते हैं ? उसके लाभ और हानियों की विवेचना कीजिये। (१९५२)

मध्यभारत, इन्टर कामर्स

८. एकाकी अथवा व्यक्तिगत व्यापार से आप क्या अर्थ समझते हैं ? इस व्यापार की क्या मुख्य विशेषताएँ होती हैं ? उसके लाभ और दोषों का सविस्तार विवेचन कीजिये। (मध्यभारत १९५५)

अध्याय ३५

साझेदारी (१) : फर्म की स्थापना

§ १. साझेदारी का अर्थ और लक्षण

साझे को आवश्यकता

साझे का फर्म बहुत-कुछ एकाकी व्यापारिक कोठी की ही भाँति होता है : अन्तर इतना ही होता है कि फर्म के स्वामी दो या दो से अधिक होते हैं। व्यक्तियों से मिल कर काम करने की आवश्यकता कई कारणों से होती है। एकाकी व्यापारिक कोठी की पूँजी और कुशलता सीमित होती है और उसके आधार पर बड़े पैमाने का व्यापार नहीं किया जा सकता। अतः कई व्यक्ति इस कारण मिलकर काम करने लगते हैं कि उनके पास बड़े पैमाने पर व्यापार करने के योग्य साधन एकत्रित हो जायँ। ईसके अतिरिक्त, यह भी देखा जाता है कि एक ही व्यक्ति के पास व्यापारिक सफलता के समस्त आवश्यक गुण नहीं होते : पूँजीपतियों के पास कुशलता नहीं होती, और जिनमें व्यापारिक सफलता के आधारभूत गुण होते है उनके पास पूँजी का अभाव होता है। विभिन्न साधनों वाले व्यक्तियो के साझेदार हो जाने से प्रत्येक को लाभ होता है। फिर कुछ ऐसे व्यापार होते हैं जिनमें कई दिशाओं में काफी ध्यान की निरंतर आवश्यकता होती है; अतः उचित प्रबन्ध के लिए कई व्यक्ति चाहिये। उपरोक्त तीन कारणों के परिणामस्वरूप ही साझे के फर्म बनते हैं।[१]

---

[१] जैसे-जैसे उपक्रम (enterprise) विस्तृत होता जाता है, वैसे ही वैसे व्यक्तिगत स्वामित्व का तरीका अपर्याप्त होता जाता है। एक व्यक्ति के कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व इतने अधिक हो जाते हैं कि स्वामी की इच्छा अपने श्रेष्ठ सेवकों को व्यापार में सहगामी बना कर प्रोत्साहित करने की हो सकती है। उसकी इच्छा हो सकती है कि वह अपने साथ पूँजी या कुशलता वाले व्यक्तियों को ले;

साझेदारी का अर्थ

जब दो या दो से अधिक व्यक्ति पारस्परिक लाभ के लिए मिल कर व्यापार करने के लिए सहमत हो जाते हैं, तो कहा जाता है कि उन्होंने साझेदारी या साझा कर लिया है। हमारे देश में साझेदारी भारतीय साझेदारी विधान (Indian Partnership Act) द्वारा शासित होती है। इस विधान के अनुसार, **साझेदार उन व्यक्तियों का पारस्परिक सम्बन्ध है जो कि सब, या सब के लिए कुछ स्थानापन्न के रूप में, मिलकर व्यापार करने और उसके लाभ को आपस में विभाजित करने के लिए सहमत हो जाते हैं।** इस परिभाषा के अनुसार, साझेदारी के निम्नलिखित आवश्यक लक्षण हैं (१) साझेदारी एक से अधिक व्यक्तियों बिना नहीं हो सकती। (२) सम्बंधित व्यक्तियों को व्यापार[1] करने के लिए सहमत होना आवश्यक है। (३) उनमें व्यापार के लाभ को आपस में बाँटने की भी सहमति होनी चाहिये। (४) व्यापार या तो वे सब मिलकर करें या उनमें से कुछ सब के लिए करें। (५) साझेदारों की संख्या २० से अधिक नहीं होनी चाहिये, और बैंकिंग व्यवसाय में यह संख्या १० से नहीं बढ़नी चाहिये। यह पाँचवीं बात कानूनी परिभाषा में नहीं दी गई है, *किन्तु यह बहुत महत्वपूर्ण है। यदि साझेदारों की संख्या अधिकतम* संख्या से बढ़ जाय, तो साझा गैरकानूनी हो जाता है—वह प्रसंविदे के अयोग्य हो जाता है और न्यायालय में अभियोग चलाने का अधिकार खो बैठता है। यदि उपरोक्त बातों में से एक भी अनुपस्थित हो, तो व्यक्तियों के बीच का सम्बन्ध साझेदारी नहीं कहला सकता।

अतः धन सम्बन्धी, व्यक्तिगत पसन्द या व्यापारिक लाभ के कारणों के परिणाम स्वरूप साझेदारी बनाई जाती है। बड़ी बड़ी कोठियों के इस वर्तमान युग में साझेदारी जिन उद्देश्यों को लेकर बनाई जाती है व स्वयं स्पष्ट है। Dexter S Kemball *Principles of Industrial Organization*, p 53

[1] व्यापार के अन्तर्गत समस्त व्यापार, पेशे तथा प्रत्यक्ष सेवा वाले काम सम्मिलित हैं।

जो व्यक्ति एक दूसरे से मिल कर साझेदारी स्थापित करते हैं, उन्हें साझी या साझेदार (Partners) कहते हैं। सामूहिक रूप से उन्हें फर्म (Firm) कहा जाता है; और जिस नाम से वे व्यापार करते हैं उसे फर्म का नाम कहते हैं। उदाहरण के लिए, यदि राम और मुख्तार "राम मुख्तार एण्ड कम्पनी" के नाम से व्यापार करें, तो उनकी व्यापारिक दूकान फर्म कहलायेगी, उसका नाम "राम, मुख्तार एण्ड कम्पनी" होगा, और इन दोनों व्यक्तियों के बीच का सम्बन्ध साझेदारी कहा जायगा।

यहाँ पर दो बातों पर जोर देना आवश्यक है। (१) यदि दो या दो से अधिक व्यक्ति मिलकर एक सम्पत्ति के स्वामी हों और उसके लाभ को आपस में विभाजित करते हों, तो वे साझेदार नहीं कहलाये जा सकते।[२] ऐसे व्यक्तियों को वैधानिक भाषा में सह-स्वामी (Co-owners) कहा जाता है। सह स्वामित्व साझेदारी से कई बातों में भिन्न है। सह स्वामित्व पर यह प्रतिबन्ध नहीं कि उसका काम व्यापार करना ही हो या उसका उद्देश्य लाभ बाँटना ही हो अथवा उसमें सदस्यों की सबसे अधिक संख्या २० ही हो। इसके अतिरिक्त साझेदार अपने व्यापार के हित (interest) को अन्य साझेदारों की अनुमति के बिना बेच नहीं सकता या हस्तान्तरित नहीं कर सकता, किन्तु सह-स्वामी व्यापार के हित को बिना सह स्वामी की अनुमति के अपनी इच्छानुसार बेच सकता या हस्तान्तरित कर सकता है। (२) दूसरी बात यह है कि यदि कोई अवकाश-प्राप्त (Retired) साझेदार, या किसी मृत साझेदार की विधवा स्त्री, लाभ का एक भाग पाती है, तो इसका यह आशय नहीं कि वह फर्म की साझेदार है।

साझेदारी के लक्षण

अब हम नीचे साझेदारी के लक्षणों की विवेचना करेंगे :

(१) वैधानिक दृष्टि से साझेदार और फर्म एक दूसरे से अलग नहीं। अन्य शब्दों मे, विधान की दृष्टि में साझेदार और फर्म एक ही वस्तु है। यही कारण है कि प्रत्येक साझी फर्म की ओर से प्रसंविदे कर सकता है, प्रत्येक साझी

---

[२] देखिये भारतीय साझेदारी विधान, धारा ६।

पर फर्म के ऋणों के भुगतान के लिए अभियोग चलाया जा सकता है और किसी साझी की मृत्यु हो जाने पर या किसी प्रकार की वैधानिक अयोग्यता हो जाने पर साझा टूट जाता है। साधारण व्यक्ति इस बात को नहीं समझता। वह यह देखता है कि सब सौदे फर्म के नाम से किये जाते हैं और इससे यह निष्कर्ष निकालता है कि जिस प्रकार सयुक्त पूँजी की कम्पनी का अस्तित्व उसके सदस्यों से भिन्न है, उसी प्रकार फर्म का अस्तित्व साझेदारो से भिन्न होता है। विधान के अनुसार, साझे का साझेदारों से भिन्न कोई अस्तित्व ही नहीं। यह अविच्छिन्न उत्तराधिकार वाला कृत्रिम व्यक्ति (artificial person with perpetual succession) नहीं है।

(२) जैसा ऊपर बताया जा चुका है, साझे में कम से कम दो व्यक्ति और अधिक से अधिक २० व्यक्ति शामिल हो सकते हैं, केवल बैंकिंग व्यवसाय में अधिकतम सख्या १० है। यदि वास्तविक सख्या इससे अधिक हो जाय, तो फिर उस सस्था को अपनी रजिस्ट्री कम्पनी की हैसियत में करा लेनी चाहिये, अन्यथा वह सस्था अवैध (illegal) मानी जायगी और फिर यह विधान द्वारा प्रदत्त सुविधाओं और रक्षा का लाभ नहीं उठा सकती।

(३) सामान्य रूप से, साझेदारों का उत्तरदायित्व अपरिमित होता है। साझेदार फर्म के सारे ऋणों के लिये व्यक्तिगत एव सामूहिक दोनों रूपों में उत्तरदायी होते है। मान लीजिये एक फर्म की देनदारी २०,००० रु० की है, किन्तु उसकी सम्पत्ति केवल ११,००० रु० ही है। यदि एक को छोड़कर शेष सब साझेदार दिवालिये हो जायें, तो पहले वाले साझेदार को शेष ६,००० रु० अपनी जेब से देने होगे। विधान ने परिमित उत्तरदायित्व वाले साझेदारों की भी आयोजना की है, किन्तु एक फर्म के साझेदारों का उत्तरदायित्व परिमित नहीं हो सकता।

(४) कोई भी साझी अपने साझेदारों की अनुमति के बिना अवकाश ग्रहण नहीं कर सकता।

(५) पूँजी और व्यापारिक कुशलता की मात्रा की दृष्टि से, साझेदारी का स्थान व्यक्तिगत स्वामित्व तथा कम्पनी के मध्य में आता है, इसके साधन पहले

की अपेक्षा अधिक और दूसरे की अपेक्षा कम होते हैं। अकेले आदमी के व्यापार को मिल सकने वाली पूँजी तथा कुशलता बहुत सीमित होती है। इसी सीमा के कारण साझेदारी स्थापित की जाती है। किन्तु साझेदारी के साधन, अकेले व्यापारी के साधन से अधिक होने पर भी, काफी नहीं होते। केवल कम्पनी ही ऐसा व्यापारिक संगठन है। जिसके साधन अथाह हो सकते हैं और जिसने आधुनिक युग को महान् व्यापारिक उपक्रम (enterprises) भेंट में दिये हैं।

§ २. साझेदारी के गुण और दोष

साझे के लाभ

(१) साझा आसानी से किया जा सकता है : दो या दो से अधिक कोई भी व्यक्ति जो साथ साथ व्यापार करने के लिए सहमत हो जावें, साझेदारी स्थापित कर सकते हैं और फर्म की रजिस्ट्री करा सकते हैं। स्थापना की सुगमता इतनी तो नहीं होती जितनी कि एकाकी व्यापारिक कोठी में होती है क्योंकि ऐसे परिचित और विश्वासपात्र व्यक्ति जो साझी बन सकें, आसानी से नहीं मिलते और फिर रजिस्ट्री कराने के लिये वैधानिक रीतियों का भी पालन करना पड़ता है; किन्तु इस बात को यदि छोड़ दिया जाय, तो एकाकी व्यापारिक कोठी तथा साझे के फर्म समान सुगमता से स्थापित किये जा सकते हैं।

(२) लाभ को अधिकतम करने के लिये अपनी सम्पूर्ण शक्ति को संलग्न कर देने की प्रेरणा भी साझेदारी में काफी बलवती होती है। असीमित उत्तर-दायित्व के कारण जोखिम इतनी अधिक होती है, क्रिया और पुरस्कार में इतना प्रत्यक्ष और निकट सम्बन्ध होता है, साझेदारों में इतना घनिष्ठ व्यक्तिगत सम्बन्ध होता है कि अधिकाधिक उत्पत्ति की प्रेरणा बहुत शक्तिशालिनी हो जाती है; किन्तु यह प्रेरणा एकाकी व्यापारी के समान बलवती नहीं होती क्योंकि एकाकी व्यापार में एक व्यक्ति के परिश्रम का सारा लाभ उसी अकेले को मिलता है किन्तु साझेदारी में यह साझेदारों में बँट जाता है।

(३) साझेदारी बहुत लोचदार (flexible) होती है। फर्म के उद्देश्य, सदस्य तथा पूजी आदि का निर्धारण साझेदार आपस म ही निधारित कर लेते हैं और उनकी सम्मति से इन सब म परिवर्तन किये जा सकते हैं।

(४) एकाकी स्वामित्व की अपेक्षा फर्म के व्यापारिक साधन अधिक होते हैं। अधिक पूँजी और कुशलता की प्राप्ति एक स्पष्ट फायदा है। कुछ व्यापारो म बहुत सी पूँजी, या कई मस्तिष्को क सयुक्त परामर्श या कामा के विभाजन या विशिष्टीकरण की आवश्यकता होती है, साझेदारी म ये सब बातें आसानी से हो सकती हैं।

(५) साझेदारो का उत्तरदायित्व सामान्यतया असीमित होता है, अत एकाकी व्यापारी की अपेक्षा एक फर्म अधिक पूँजी उधार ले सकता है।

(६) फर्म क सम्बध का कोई भी महत्वपूर्ण निर्णय बिना समस्त साझेदारों की अनुमति के नहीं किया जा सकता। अत अल्पमत का प्रतिनिधित्व पर्याप्त प्रभाव वाला होता है।

साझे के दोष

(१) फर्म शीघ्र काम नहीं कर सकता क्योकि बहुधा समस्त साझेदारो की सम्मति लेनी आवश्यक होता है। यदि साझेदारा की सख्या अधिक हुई तो काम में बाधा अवश्य आवेगी और मतभेद होने पर निर्णय शून्यता का भी भय बना रहेगा। किन्तु साधारण रूप से प्रबन्ध सम्बधी मामलों में बहुमत मान्य होता है।

(२) साझेदारों की सख्या सीमित होती है, अत पूँजी की मात्रा भी सीमित होती है। यह एकाकी स्वामित्व की अपेक्षा तो अवश्य अधिक होती है, किन्तु एक कम्पनी की अपेक्षा, जिसके शेयरहोल्डर हजारों होते हैं, यह कम होती है। साझेदार का उत्तरदायित्व अपरिमित होता है जो साझेदारों के लिये बहुत कठिन बात है। फर्म के काम का पैमाना जितना अधिक होगा, जोखिम उतनी ही अधिक होगी।

(३) साझेदारी का अस्तित्व बहुत अनिश्चित होता है। किसी साझेदार

की मृत्यु, पागलपन या दिवालिया हो जाने की अवस्था म या उसके साझेदारी सलेख (Partneship Deed) के विरुद्ध काम करने पर फर्म टूट जाता है।

(४) कोई भी साझेदारी बिना अन्य साझेदारी की अनुमति क अपना हित (interest) वेच नहीं सकता और न हस्तातरित ही कर सकता है। यदि साझेदार बिक्री या हस्तातरण के लिए सहमत भी हों, तो भी क्रेता या हस्ता तरित व्यक्ति या तो शेष साझेदारों म से ही कोई हो सकता है या ऐसा व्यक्ति होना चाहिए जो सभी साझेदारो को मान्य हो। यह बिक्री का क्षेत्र बहुत सीमित कर देता है।

वर्तमान अवस्था

फुटकर व्यापार में तथा आधुनिक साइज के व्यावहारिक भवनो म साझेदारी काफी लोकप्रिय है। कुछ छोटे-छोटे कारखाने भी साझे के रूप में स्थापित किये जाते हैं। यह प्रत्यक्ष सेवा वाले पेशों (professions) में भी बहुत प्रचलित है। किन्तु साधारणतया इसका सापेक्षिक महत्व कम होता जा रहा है। हमारे देश में कुछ समय पूर्व साझेदारी का बहुत महत्व था। पर हाल में इसकी लोकप्रियता बहुत कम हो गई है। इसका पहला कारण यह है कि अब पहले की तरह की मित्रता, भाईचारा और परहित कामना नहीं रही। मनुष्य में स्वार्थ और अपनेपन की भावना बलवान हो गई है। दूसरा कारण यह है कि अब बड़े पैमाने के व्यवसाय का प्रचार हो रहा है और इसके लिए कम्पनी स्थापित करने म अधिक सुविधा होती है।

§ ३ साझे का राजीनामा और रजिस्ट्री

साझेदार का चुनाव

साझे का मूल तत्व साझेदारो का पारस्परिक विश्वास, भाईचारा और वास्तविक मित्रता है। साझियों को व्यापार का प्रबन्ध करने के लिये, नकद रुपये क मामले म, हिसाब बनाने में, लाभ बाँटने में, फर्म के और एक दूसरे के हित का पूरा-पूरा ख्याल रखना पड़ता है, नहीं तो फर्म चल नहीं सकता।

इसलिए साझेदार का चुनाव बड़ी सावधानी से करना चाहिए। साझेदार का चुनाव मुख्यतया सम्बंधित व्यक्ति के व्यापारिक साधनों के आधार पर किया जाता है। यदि कोई पूँजीपति व्यापार करना चाहे, तो उसे व्यापारिक कुशलता वाले साझी की आवश्यकता होगी और इसी प्रकार व्यापार-कुशल व्यक्ति किसी पूँजीपति को ही अपना साझी बनाना चाहेगा। दूसरी बात यह है जिस व्यक्ति का चुनाव किया जा रहा है, उसमें प्रसवेदन की योग्यता होनी चाहिए। किन्तु शायद सबसे महत्वपूर्ण ध्यान देने योग्य बात उस व्यक्ति का स्वभाव एव चरित्र है। उसे ईमानदार होना चाहिए और उसमें न्याय की भावना सजग होनी चाहिए, अन्यथा सम्भव है कि वह अपने साझी के शोषण की चेष्टा करे जिसके परिणामस्वरूप साझा शीघ्र ही तोड़ना पड़ेगा। उसे आँख मूँद कर परि-कल्पना या सट्टे (Speculation) में भाग नहीं लेना चाहिए, अन्यथा फर्म सकटमूलक प्रसविदे मे फँस जायगा। साझी करते समय यह बात अवश्य सोच लेनी चाहिए कि मनुष्य दिन प्रति-दिन व्यक्तिगत होता जा रहा है और धन का लोभ मनुष्यों को बेईमान बना देता है। यदि इतने फर्मों की जीवन-लीला इतनी शीघ्र ही समाप्त हो जाती है, तो यह बड़ी सीमा तक विवेकशून्यता तथा असावधानी से साझी बनाने का ही परिणाम होता है।

साझे का राजीनामा (Agreement)

उचित साझी का चुनाव कर लेने के पश्चात्, एक साझे का राजीनामा लिख लेना चाहिए और उस पर साझियों के हस्ताक्षर हो जाने चाहिए। ऐसा न करने से फर्म की अकालीन मृत्यु का भय सदैव बना रहेगा। व्यापार के आरम्भ में साझेदारों में बहुत मैत्री भाव होता है किन्तु बाद को उनमें आपस में मतभेद होने लगते हैं। उस अवस्था में यदि साझेदारी सलेख (Deed of Partnership) उपस्थित है, तो ये मतभेद उसे देखकर दूर किये जा सकते हैं। उसकी अनुपस्थिति में, व्यर्थ के झगड़े-झंझट आये दिन उठ खड़े हो सकते हैं, जो किसी भी दिन फर्म के लिए घातक सिद्ध हो सकते हैं।

साझे का राजीनामा (Agreement) लिखा भी जा सकता है और मौखिक

रीति द्वारा भी किया जा सकता है। किन्तु उसे लिखा लेना अच्छा होता है।[1] साझे के राजीनामे को "साझेदारी सलेख" (Partnership Deed) या "साझेदारी के अन्तर्नियम" (Articles of Partnership) भी कहते हैं।

साझे के राजीनामे मे निम्नलिखित बातें अवश्य होनी चाहिये :—

१. फर्म का नाम या वह नाम जिससे फर्म व्यापार करेगा,

२. किये जाने वाले व्यापार का स्वभाव;

३. साझे की अवधि (term)। यदि साझे की कोई अवधि निश्चित नहीं है, तो यह इच्छानुसार कभी भी तोडा जा सकता है। किन्तु यदि यह किसी निश्चित अवधि के लिये किया गया है, तो राजीनामे में इस अवधि का ठीक-ठीक हवाला अवश्य देना चाहिए;

४. प्रत्येक साझी द्वारा लगाई जाने वाली पूँजी;

५. आहरण (drawings) अर्थात् प्रत्येक साझी जितना रुपया निकाल सकने का अधिकारी हो, उसकी रकम या रकमें;

६. पूँजी पर दी जाने वाली या आहरण पर वसूल की जाने वाली ब्याज की दर।

७. साझियों के काम और अधिकारों का वर्णन,

८. साझियों का पुरस्कार;

९. लाभ और हानि के विभाजन की रीति,

१०. किसी साझी की मृत्यु या साझेदारी के भंग होने के समय जिस रीति का पालन किया जायगा वह रीति;

११. ख्याति (goodwill);

१२. हिसाब की बहियों को रखने और चिट्ठा (Balance sheet) बनाने के विषय की आवश्यक बातें; और

[1] फ्रास और इटली में साझे का राजीनामा अनिवार्य रूप से लिखित होना चाहिये। किन्तु भारत, इंगलैण्ड और अमेरिका में यह लिखित या मौखिक किसी भी प्रकार का हो सकता है।

१३ पंचायत वाक्य (arbitration clause) जिसमें झगड़े के समय पालन की जाने वाली रीति का ब्योरा दिया जाना चाहिये,

साझे के फर्म की रजिस्ट्री

सन् १६३१ ई० के पूर्व फर्मों का रजिस्ट्री कराना आवश्यक नहीं था। अतः वे बहुत कुछ गुप्त संस्थाएँ थीं जिन पर किसी भी प्रकार का नियंत्रण अथवा अधिकार नहीं था। किन्तु अब भारतीय साझेदारी विधान (सन् १६३२) ने फर्मों के रजिस्टर किये जाने के विषय में नियम बना दिये हैं।

गैर-रजिस्ट्री का प्रभाव—विधान यह नहीं कहता कि प्रत्येक फर्म का रजिस्टर्ड होना अनिवार्य है; किन्तु यदि किसी फर्म की रजिस्ट्री नहीं हुई तो (१) कोई भी साझी किसी भी न्यायालय में फर्म के विरुद्ध या अन्य किसी साझी के विरुद्ध अभियोग नहीं चला सकता,[२] और (२) किसी तीसरी पार्टी के विरुद्ध अभियोग नहीं चला सकता। स्पष्टतया, गैर रजिस्ट्री के परिणाम इतने गंभीर हैं कि कोई भी फर्म कदाचित बिना रजिस्टर्ड हुए न रहना चाहे।

रजिस्ट्री कराने की रीति—जो साझी अपने फर्म की रजिस्ट्री कराना चाहें, उन्हें चाहिये कि वे पहले इस काम के लिये नियत फार्म को भरें और फिर उसे नियत फीस सहित रजिस्ट्रार आव फर्म्स (Registrar of Firms) के यहाँ भेज दें। इस फार्म में निम्नलिखित मुख्य बातें लिखनी पड़ती हैं:

(अ) फर्म का नाम,

(आ) फर्म के व्यापार का स्थान या प्रमुख स्थान,

(इ) अन्य स्थानों का नाम जहाँ व्यापार करना है,

(ई) फर्म के प्रत्येक साझेदार के साझी बनने की तारीख,

(उ) साझेदारों के पूरे नाम और उनके स्थायी पते,

(ऊ) फर्म की अवधि।

---

[२]भारतीय साझेदारी विधान, सन् १६३२, धारा ६६।

इस पर सारे साझियों के हस्ताक्षर होने चाहिये और वे नियत विधि द्वारा प्रमाणित (verified) होने चाहिये।

फर्म के नाम में "Crown", "Emperor", "Empress", "Imperial", "King", "Queen", "Royal", या अन्य ऐसे शब्द जिनसे फर्म को *राजा या सरकार की स्वीकृति या सरक्षा* (Patronage) प्राप्त होने का आशय निकलता हो, होना वर्जित है। ऐसे शब्द राष्ट्रपति (President) की लिखित स्वीकृति प्राप्त करने पर ही प्रयुक्त किये जा सकते हैं।

जब रजिस्ट्रार को यह सतोष हो जाता है कि उपरोक्त समस्त प्रतिबन्ध सतुष्ट किये जा चुके हैं, तब वह रजिस्टर आव फर्म्स (Register or Firms) में प्रविष्टि (entry) कर लेगा और इस प्रकार फर्म रजिस्टर्ड हो जायगा।[3]

पश्चात् के परिवर्तनों की सूचना—फर्म की बनावट या स्वभाव में जब कभी भी परिवर्तन हो, तो उसकी तत्काल सूचना रजिस्ट्रार आव फर्म्स को देना आवश्यक है। परिवर्तन की सूचना निम्नलिखित अवस्थाओं में देनी चाहिये : (१) जब फर्म के स्थान या व्यापार करने के मुख्य स्थान में परिवर्तन किया जाय, (२) जब शाखाएँ खोली या बन्द की जायँ; (३) जब किसी साझेदार का नाम या स्थायी पता बदले; (४) जब किसी साझी के आगमन या गमन के कारण फर्म की बनावट में परिवर्तन हो; या (५) जब साझा भग हो।

प्रकाशन (Publicity)—अब साझेदारी केवल साझियों के ही चिन्तन और हित की वस्तु नहीं रह गई है और अब उनकी बनावट आदि बाहरी मनुष्यो के लिये गुप्त रहस्य नहीं रहे। नियत फीस देने पर कोई भी व्यक्ति रजिस्टर आव फर्म्स देख सकता है। नियत फीस देने पर उसे उस रजिस्टर की किसी भी प्रविष्टि अथवा भाग की रजिस्ट्रार द्वारा प्रमाणित नकल भी मिल सकती है।[4]

---

[3]भारतीय साझेदारी विधान धारा ५८ और ५९।

[4]प्रश्न अध्याय ३६ के अत में दिये गये हैं।

अध्याय ३६

साझेदारी (२): साझेदारों के कर्तव्य तथा अधिकार

§ ४. साझेदारों के पारस्परिक सम्बन्ध

साझेदारी के अंतर्नियम (Articles) साझेदारों के पारस्परिक सम्बध निर्णय करते हैं। अतर्नियम के अभाव में उनके पारस्परिक सम्बध भारतीय साझेदारी विधान की निम्नलिखित व्यवस्था के अनुकूल निश्चित होते हैं:

व्यापार का परिचालन—(अ) प्रत्येक साझी को व्यापार के चलाने में भाग लेने का अधिकार है। (आ) व्यापार के परिचालन में प्रत्येक साझी का कर्तव्य है कि वह अपना काम श्रमपूर्वक करे। (इ) यदि व्यापार से सम्बंध रखने वाले किसी साधारण मामले में मतभेद हो, तो यह साझेदारों के बहुमत से दूर होगा। किन्तु व्यापार का स्वभाव बिना सारे साझियों की राय के नहीं बदला जा सकता। (ई) साझेदार को फर्म की किसी भी किताब या बही की जाँच करने या नकल करने का अधिकार है।

पारस्परिक अधिकार और कर्तव्य—(अ) साझी को व्यापार में भाग लेने के लिए किसी पुरस्कार लेने का अधिकार नहीं। (आ) साझेदारों मे लाभ और हानि बराबर-बराबर विभाजित होंगे। (इ) यदि कोई साझी अपनी पूँजी पर ब्याज लेने का अधिकारी हो, तो उसे ब्याज केवल लाभ में से ही अदा की जायगी। ई) यदि कोई साझी राजीनामे के अनुसार दी हुई पूँजी के अतिरिक्त फर्म को या फर्म के लिए कुछ रुपया उधार दे या भुगतान करे, तो वह उस रकम पर ६ प्रतिशत के हिसाब से ब्याज पाने का अधिकारी होगा। (उ) यदि कोई साझी, व्यापार के साधारण और उचित परिचालन मे साधारण बुद्धिमानी से काम लेते हुए किसी सकट में फँस जाय, कुछ रुपया अदा करे या कोई देनदारी

ऊपर ले ले, तो फर्म उसकी क्षतिपूर्ति करेगा। (ऊ) फर्म के व्यापार के परिचालन में किसी साझी के जान बूझकर लापरवाही करने से फर्म को कोई क्षति हो, तो वह साझी उसे पूरा करेगा।

फर्म की सम्पत्ति—(अ) फर्म मे प्रारम्भ से ही आने वाली सम्पत्ति, या बाद को फर्म द्वारा या फर्म के लिये प्राप्त की गई या खरीदी गई सम्पत्ति, फर्म की सम्पत्ति में शामिल की जाती है। व्यापार की ख्याति (Goodwill) की भी गणना फर्म की सम्पत्ति में की जाती है। फर्म के रुपये से खरीदी गई सारी सम्पत्ति फर्म की सम्पत्ति समझी जाती है। (आ) साझेदार फर्म की सम्पत्ति को केवल व्यापार के लिए रक्खेंगे, और काम में न लावेंगे।

साझेदारों द्वारा कमाया गया व्यक्तिगत लाभ—(अ) यदि कोई साझेदार फर्म के किसी सौदे से या फर्म के सम्बन्धों से या फर्म के नाम के प्रयोग से स्वयं अपने हित के लिए कुछ लाभ कमाये, तो उसे फर्म को उस लाभ का हिसाब देना होगा और कमाया हुआ सारा लाभ भी उसे फर्म को अदा करना होगा। (आ) यदि कोई साझेदार फर्म के व्यापार के समान या उससे स्पर्द्धा करता हुआ कोई व्यापार करे तो उसे उस व्यापार द्वारा प्राप्त किये गये सारे लाभ का हिसाब फर्म को देना होगा और फर्म को सारा लाभ भी अदा करना होगा।

फर्म की बनावट—(अ) बिना समस्त साझेदारों की अनुमति के कोई भी नया साझी नहीं बनाया जा सकता। (आ) कोई यदि नया साझी लिया जाय अथवा कोई पुराना साझी हट जाय (अर्थात् फर्म की बनावट में कुछ परिवर्तन हो), तो पुनर्निर्मित फर्म में साझेदारों के अधिकार और कर्तव्य, यथासम्भव वैसे ही रहेंगे जैसे कि परिवर्तन के पूर्व थे।

निश्चित अवधि के पश्चात् फर्म की बनावट—(अ) जब कि एक निश्चित अवधि के लिए बनाया गया फर्म उस अवधि के पश्चात् भी व्यापार करता रहे, तो साझेदारों के पारस्परिक अधिकार और कर्तव्य पूर्व की भाँति ही रहते हैं। (आ) जब एक या एक से अधिक निश्चित उपक्रमों (under takings) के लिए बनाया गया फर्म अन्य उपक्रम करने लगे, तो इस अन्य उप

क्रम के सम्बध में साझेदारों के अधिकार और कर्तव्य वे ही रहेंगे जो कि मौलिक उपक्रम के सम्बध में थे।

तीसरे पक्ष के साथ साझेदारों के सम्बन्ध

जहाँ तक फर्म का बाह्य जगत से सम्बध है, प्रत्येक साझेदार व्यापार के मामलों में फर्म का एजेन्ट होता है। फर्म के व्यापार के सम्बध में या फर्म के नाम में कोई साझेदार चाहे जो काम करे, फर्म को वह मान्य होता है। इसे साझेदार का "अनुमानित अधिकार" (Implied Authority) कहते हैं। यह अधिकार साझेदार राजीनामे द्वारा घटा या बढ़ा सकते हैं। यदि फर्म के लिए काम करते समय कोई साझेदार गलत काम या उपेक्षा (Omission) द्वारा किसी तीसरे पक्ष को हानि या क्षति पहुँचाता है या उसके परिणामस्वरूप किसी दड का भागी होना पड़ता है, तो उसका फर्म देनदार होता है। किसी सकट के समय साझेदार का यह अधिकार होता है कि फर्म की हानि से रक्षा निजी मामले में करने के लिए वे सब काम करे जो कि एक साधारण बुद्धि वाला व्यक्ति अपने समान दशाओं में करेगा, और ये सब काम फर्म को मान्य होते हैं।

§ ५. साझेदारों के प्रकार

सामान्य (General) और सीमित (Limited) साझेदार—साधारणतया फर्म के समस्त साझेदारों का अपरिमित या असीमित उत्तरदायित्व होता है। ऐसे साझेदारों को *सामान्य साझेदारों* (General Partners) कहते हैं; और ऐसी साझेदारी को **सामान्य साझेदारी** कहा जाता है। किन्तु विधान यह आज्ञा देता है कि कुछ साझेदारों का उत्तरदायित्व उनकी दी हुई पूजी तक ही सीमित रक्खा जा सकता है। ऐसे साझेदार **सामान्य साझेदार** (Limited Partners) कहलाते हैं, और ऐसी साझेदारी को **सीमित साझेदारी** कहते हैं। एक फर्म के सारे साझेदार सीमित साझेदार नहीं हो सकते। कुछ न कुछ साझेदार का उत्तरदायित्व असीमित होना अनिवार्य है।

साधारणतया सीमित साझेदार के अधिकार घटा दिये जाते हैं। उसे

व्यापार के प्रबन्ध में किसी भी प्रकार से भाग लेने का अधिकार नहीं दिया जाता। वह अपनी राय दे सकता है, हिसाब की बहियाँ देख सकता है, किन्तु वह नियन्त्रण या कन्ट्रोल (Control) नहीं कर सकता। उसकी स्थिति उसके दृष्टिकोण से इस कारण और भी प्रभावशून्य हो जाती है कि यदि वह फर्म के व्यापार की रीतियों से सहमत नहीं, तो सम्भव है उसके हस्तक्षेप करने का कुछ भी असर न हो। सीमित साझेदार एक ऐसा अक्रिय (inactive) साझेदार है जो पूँजी लगाता है और केवल फर्म के लाभ हानि का भागी होने का अधिकारी होता है। साधारणतया एक पुराना साझी जब अवकाश प्राप्त करना चाहता है और वह अपने साझियों पर पूरा-पूरा विश्वास करता है, तब वह अपनी पूँजी फर्म में ही छोड़ जाता है और स्वयं सीमित साझी बन जाता है। फर्म को सीमित साझेदार से लाभ यह है कि उसे बिना कम्पनी का रूप ग्रहण किये हुए अधिक पूँजी मिल जाती है। यदि कोई आदमी नया-नया व्यापार प्रारम्भ करे और उसे अपने मित्रों और सम्बन्धियों से धन की सहायता आवश्यक हो, तो वह अपने सहायकों को सीमित साझेदार बना सकता है जिससे उन्हें पर्याप्त सुरक्षा और सीमित उत्तरदायित्व का लाभ प्राप्त रहे।

सक्रिय (Active) निष्क्रिय (Dormant) और नाममात्र (Nominal) साझेदार—(अ) सक्रिय साझेदार वे कहलाते हैं जो व्यापार में खुलेआम और क्रियात्मक रूप में भाग लेते हैं।[४] (आ) निष्क्रिय, सुप्त (Sleeping) या मौन (Silent) साझेदार वे होते हैं जो, सक्रिय साझेदारों के विपरीत, व्यापार में खुलेआम भाग नहीं लेते और जगत में वे साझेदार की हैसियत से नहीं जाने जाते, यद्यपि वे फर्म में अपनी पूँजी लगाते और हानि-लाभ के भागी होते हैं। (इ) नाममात्र साझेदार वे होते हैं जो न तो कुछ पूँजी लगाते हैं और न लाभ के अधिकारी ही होते हैं, किन्तु वे अपना नाम और

[४] सक्रिय या साधारण साझेदार वे होते हैं जो लाभ के लिए धन या श्रम मिल कर जुटाते हैं और जिन्हें जनता इस अवस्था में जानती है। Fieldhouse, *Business Methods*, p. 321.

अपनी ख्याति फर्म को दे देते हैं या ससार में यह झूठ-मूठ प्रसिद्ध (Hold out) कर देते है कि वे भी फर्म के एक साझी हैं। ऐसे साझी को फर्म से व्यापार करने वाली कोई तीसरी पार्टी उत्तरदायी ठहरा सकती है।

झूठ-मूठ प्रसिद्धि (Holding Out)—भारतीय साझेदारी विधान की २८वीं धारा ने नाममात्र साझी की स्थिति को स्पष्ट कर दिया है। इस धारा के अनुसार यदि कोई व्यक्ति मौलिक या लिखित शब्दों द्वारा या अपने आचरण द्वारा किसी फर्म मे स्वय के साझी होने का प्रसिद्धि करता है या जानबूझ कर, अपने को किसी फम का साझी होने की प्रसिद्धि होने देता है; तो वह ऐसे व्यक्ति को, जिसने इस प्रसिद्धि के आश्वासन पर फर्म को ऋण दिया है, उस फर्म के साझी की हैसियत में उत्तरदायी होगा। उदाहरण के लिए, यदि राम दास एक फर्म में, जिसका नाम कृष्णदास खेमदास है, साझी होने की बात प्रसिद्ध करने देता है और इस प्रसिद्धि के आधार पर कुछ व्यक्ति फर्म को ऋण दे देते हैं, ता रामदास उस ऋण के भुगतान के लिये उसी प्रकार उत्तरदायी होगा मानो कि वह फर्म म वास्तविक साझी है। जब कोई व्यक्ति स्वय को किसी फर्म का साझी होना प्रसिद्ध करता है या दूसरा को ऐसा प्रसिद्ध करने देता है, तो कहा जाता है कि उसके साझी होने की झूठ मूठ प्रसिद्धि (Holding out as a partner) हुई है।

नाबालिग साझी—यदि किसी फर्म के समस्त बालिग साझी सहमत हों, तो नाबालिग साझी भी फर्म में लिया जा सकता है। नाबालिग साझी को साझेदारी सलेख के अनुसार, फर्म के लाभ और उसको सपत्ति मे हिस्सा प्राप्त करने का अधिकार होता है, और वह फर्म के किसा भी हिसाब की परीक्षा या नकल कर सकता है। फर्म के ऋण के भुगतान के लिये उसका फर्म में जो हिस्सा है वह तो उत्तरदायी है, किन्तु वह व्यक्तिगत रूप से उसके लिए उत्तरदायी नहीं।

उसके बालिग हो जाने के छ महीने के अन्दर[१] इस बात की सार्वजनिक

---

[१]या उसे यह ज्ञान प्राप्त होने पर कि उसे साझी मान लिया गया है, जो भी तारीख बाद को आये।

सूचना देनी चाहिए कि वह फर्म का साझी रहेगा अथवा नहीं। यदि वह साझी रहने की सूचना दे तो (१) उसके नाबालिग अवस्था के अधिकार और कर्तव्य उसके साझी होने की तारीख तक जारी रहते हैं किन्तु उस तारीख से वह फर्म के *समस्त ऋणों का व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हो जाता है*, और (२) *उसका* फर्म के लाभ और उसकी सम्पत्ति में वही भाग होगा जो उसका नाबालिग अवस्था में था। यदि वह साझी न होने का निश्चय करे तो सार्वजनिक सूचना देने की तारीख तक उसके नाबालिग अवस्था क अधिकार और कर्तव्य जारी रहते हैं, और उस तारीख के पश्चात् फर्म के किसी भी काम के लिए उसका भाग उत्तरदायी नहीं होता।

§ ६. फर्म की सदस्यता में परिवर्तन

आनेवाला और जानेवाला साझी

निम्नलिखित अवस्थाओं में फर्म की बनावट में, उसके बिना भग (dissolve) किये, परिवर्तन किये जा सकते हैं :

(१) नये साझी का प्रवेश—यदि साझेदारी सलेख इसके विपरीत न हो, तो बिना समस्त विद्यमान साझेदारों की सम्मति के कोई भी नया साझी फर्म में नहीं लाया जा सकता। कोई भी नया साझी उसके साझी होने की तारीख के पूर्व फर्म द्वारा किये गये किसी भी काम के लिए उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सक्ता। नये साझी की सूचना तुरन्त ही रजिस्ट्रार को भेज देनी चाहिए।

(२) साझी का अवकाश ग्रहण—कोई भी साझी निम्नलिखित तीन रीतियों में से किसी एक मे अवकाश ग्रहण कर सकता है :

(अ) अन्य सब साझेदारों की सम्मति से।

(आ) साझेदारों के बीच किये गये स्पष्ट राजीनामे के अनुसार।

(इ) जब साझा इच्छानुसार भग किया जा सकता है, तब अवकाश ग्रहण के निश्चय की अन्य साझेदारों को लिखित सूचना देकर।

अवकाश ग्रहण करने वाला साझी फर्म छोड़ने के पूर्व के समस्त ऋणों के लिए उत्तरदायी बना आता है। किन्तु ऋणदाताओं तथा पुनःनिर्मित फर्म से राजीनामा हो जाने पर वह इस प्रकार के उत्तरदायित्व से मुक्त किया जा सकता है।

साझी को अपने अवकाशग्रहण करने की सूचना यथासभव शीघ्रातिशीघ्र देनी चाहिए; अन्यथा वह तीसरे पक्ष द्वारा उसके अवकाश ग्रहण करने के पश्चात् भी, फर्म द्वारा किये कामों के लिए उत्तरदायी ठहराया जा सकेगा। किन्तु यदि तीसरे पक्ष को नहीं मालूम था कि वह उस फर्म में साझी था, तो सूचना की अनुपस्थिति में ऐसा तीसरा पक्ष उसे उत्तरदायी बना सकता है।

(३) साझी का निकाला जाना—साझी, सद्विश्वास के साथ (in good faith) अपने अधिकार का प्रयोग करके किसी अनुचित साझी को निकाल भी सकते है। निकाले गये साझी का उत्तरदायित्व अवकाश-ग्रहण करने वाले साझी के ही समान होता है।

(४) साझी का दिवालिया हो जाना—जब कोई साझी कानूनी तौर पर दिवालिया घोषित कर दिया जाता है, तो कानूनी आज्ञा की तारीख से वह फर्म का साझेदार नहीं रहता। दिवालिया व्यक्ति की सम्पत्ति कानूनी आज्ञा की तारीख के पश्चात् फर्म द्वारा किए गये किसी भी काम के लिए उत्तरदायी नहीं होती। फर्म भी उस तारीख के बाद व्यक्ति द्वारा किये गये किसी भी काम के लिए उत्तरदायी नही होता।

(५) साझी की मृत्यु—जब साझेदारी सलेख के अनुसार किसी साझी की मृत्यु से फर्म भग नहीं होता तो मृतक की सपत्ति मृत्यु की तारीख के बाद फर्म द्वारा किये गए किसी भी काम के लिए उत्तरदायी नहीं होती।

बाहर जाने वाले साझी के अधिकार—बाहर जाने वाला साझी फर्म के व्यापार मे स्पर्द्धा करने वाला व्यापार कर सकता है और वह ऐसे व्यापार का विज्ञापन भी कर सकता है, किन्तु जब तक साझेदार सहमत न हों, वह—

(अ) फर्म का नाम इस्तेमाल नहीं कर सकता,

(आ) यह प्रसिद्ध नहीं कर सकता कि वह फर्म का व्यापार कर रहा है या।

(इ) उन व्यक्तियों को अपना ग्राहक बनाने की चेष्टा नहीं कर सकता जो उसके साझी न रहने के पूर्व फर्म से व्यापार कर रहे थे।

साझी यह राजीनामा भी कर सकता है कि उसके साझी न रहने के पश्चात् वह निश्चित अवधि तक या निश्चित स्थानीय सीमा में फर्म के व्यापार के समान व्यापार नहीं करेगा। किन्तु यदि प्रतिबन्ध अनुचित हों, तो वे व्यापार अवरोध (Restraint of Trade) ठहराये जा सकते हैं और फिर वे भारतीय प्रसंविदा विधान (Indian Contract Act) के अन्तर्गत गैर कानूनी होंगे।

§ ७. साझे का टूटना या भंग होना (*Dissolution*)

फर्म सब साझियों की राय से या साझेदारी सलेख के अनुसार तोड़ा जा सकता है। यह निम्नलिखित अवस्थाओं में भग किया जा सकता है

(१) **अनिवार्य भङ्ग होना**—यदि एक को छोड़ कर शेष सब साझी दिवालिये हो जायँ या फर्म का व्यापार गैरकानूनी हो जाय, तो फर्म अनिवार्य रूप से भङ्ग हो जाता है।

(२) **कुछ घटनाओं के घटने पर फर्म का टूटना**—यदि साझेदारी सलेख में इसके विपरीत कुछ न दिया हो, तो फर्म निम्नलिखित घटनाओं में टूट जाता है (क यदि फर्म किसी निश्चित अवधि के लिए बनाया गया है, तो उस अवधि के बीत जाने पर, (ख) यदि फर्म किसी एक या कई उपक्रम पूर्ण करने के लिए बनाया गया हो, तो उस उपक्रम या उन उपक्रमो के पूर्ण हो जाने पर, (ग) किसी साझी की मृत्यु पर, (घ) किसी साझी के कानून द्वारा दिवालिया घोषित हो जाने पर।

(३) **इच्छानुसार भङ्ग किये जा सकने वाले साझे को सूचना देकर**

तोड़ना--जब साझा इच्छानुसार भग किया जा सकता हो, तो कोई भी साझी अन्य साझियों को फर्म भग करने का अपना निश्चय लिखित रूप मे सूचित करके फर्म भग कर सकता है ।

(४) **न्यायालय द्वारा भङ्ग किया जाना**—किसी साझी के अभियोग चलाने पर न्यायालय निम्नलिखित आधारों में से किसी भी आधार पर फर्म भग कर सकता है : (अ) जब कोई साझी पागल हो जाय; (आ) जब अभियोग चलाने वाले साझी के अतिरिक्त अन्य कोई साझी अपने साझा सम्बधी कर्तव्य करने के स्थायी रूप से अयोग्य हो जाय, जैसे आजीवन देश निकाला दिये जाने पर; (इ) जब अभियोग चलाने वाले साझी के अतिरिक्त अन्य कोई साझी व्यापार से हानि पहुँचाने वाले किसी दूसरे दुराचार (Misconduct) का दोषी हो; (ई) जब अभियोग चलाने वाले साझी के अतिरिक्त अन्य कोई जान-बूझ कर या लगातार साझेदारी सलेख को तोड़े, (उ) जब अभियोग चलाने वाले साझी के अतिरिक्त अन्य किसी साझी ने अपना फर्म में जो हित (Interest) है वह किसी तीसरे पक्ष को हस्तानरित कर दिया हो; (ऊ) जब फर्म का व्यापार बिना हानि के नहीं किया जा सकता; या (ए) अन्य किसी आधार पर जिस पर कि फर्म न्यायपूर्वक भग किया जा सकता है ।

फर्म टूटने की एक सार्वजनिक सूचना जितनी शीघ्र हो सके उतनी शीघ्र देनी चाहिये, अन्यथा उसके पश्चात् भी फर्म के लिये किये गये किसी भी काम के लिए साझेदार उसी प्रकार उत्तरदायी होते है मानो कि फर्म टूटा ही नहीं ।

फर्म टूटने पर *हिसाब चुकता होना*—यदि साझेदारी सलेख में इसके विपरीत कुछ नहीं दिया है, तो फर्म के टूट जाने पर हिसाब चुकता होने में निम्नलिखित बातों का पालन करना पड़ता है :

(अ) हानियाँ, मय पूँजी की अपूर्णता (Deficiency) के, पहले लाभ में से अदा की जायगी, फिर पूँजी में से, और अत में, यदि आवश्यक हुआ तब, प्रत्येक साझी उस अनुपात में रुपया लावेगा जिस अनुपात में वह फर्म के लाभ का अधिकारी था ।

(आ) फर्म की सम्पत्ति, मय उस रकम के जो साझी पूँजी की अपूर्णता

(Deficiency) से पूरा करने के लिए लावें, निम्नलिखित रीति और काम से प्रयुक्त होंगी :

(१) तीसरे पक्ष को फर्म का ऋण अदा करने में;

(२) प्रत्येक साझी को, आनुपातिक हिसाब से, उस रकम के अदा करने में जो उसने पूँजी के अतिरिक्त फर्म को ऋण के रूप में दी है;

(३) प्रत्येक साझी को, आनुपातिक हिसाब से (Rateably), उसकी पूँजी वापस करने में; और

(४) यदि कुछ रकम अवशेष रहे, तो वह साझियों में उस अनुपात में बाँट दी जायगी कि जिस अनुपात में वे फर्म के लाभ को बँटाने के अधिकारी थे।

साझे का अवैध हो जाना

निम्नलिखित परिस्थितियों में साझा अवैध (illegal) हो जाता है :

(१) जब सब, या एक को छोड़ कर और सब, साझेदार दिवालिये हो जाते हैं।

(२) जब फर्म का व्यापार अवैध हो जाता है।

(३) जब साझा निश्चित अवधि के लिए हो और वह अवधि व्यतीत हो चुकी हो, अथवा निश्चित काम पूरा हो चुका हो, अथवा किसी साझेदार की मृत्यु हो चुकी हो या वह दिवालिया हो गया हो, किन्तु प्रतिबन्ध यह कि साझेदारी के राजीनामे में प्रतिकूल प्रावधान (Provisions) न हों।

(४) यदि साझेदारी इच्छानुसार भग की जा सकती हो और किसी साझी ने साझा भग करने की नोटिस दे दिया हो।

(५) यदि साझा न्यायालय द्वारा भग हो चुकने के बाद भी जारी रहे।

(६) यदि फर्म की रजिस्ट्री न हो।

(७) यदि फर्म के सदस्य २० से अधिक हों (और बैंकिंग व्यवसाय में १० से अधिक हों)।

§ ८. ख्याति या प्रतिष्ठा (Goodwill)

अर्थ और परिभाषा

जो व्यापारी ईमानदारी, कुशलता और ग्राहकों की सेवा के दृष्टिकोण से काम करता है, वह धीरे धीरे प्रसिद्ध हो जाता है और उसके ग्राहक उससे इतने प्रसन्न हो जाते हैं कि वे फिर उसको छोड़कर किसी दूसरे व्यापारी से माल नहीं खरीदना चाहते। इसी को ख्याति या हितेच्छा (Goodwill) कहा जाता है। लार्ड ऐल्डन ने ख्याति की परिभाषा इस प्रकार की है, '**पुराने ग्राहकों की पुरानी दूकान से खरीदारी करते रहने की सम्भावना ही ख्याति कहलाती है।**"

ख्याति प्राप्त व्यापारिक भवन औसत से अधिक लाभ कमाता है। लाभ पूँजी के प्रतिशत के रूप में व्यक्त किया जाता है। अत ख्याति प्राप्त व्यापारिक भवन औसत दर से अधिक दर पर लाभ कमाता है। इसका कारण यह है कि साधारणतया व्यापारी को कुछ नये ग्राहक मिलते रहते हैं और कुछ पुराने ग्राहक दूकान छोड़ते रहते हैं। किन्तु ख्याति प्राप्त व्यापारी के पुराने ग्राहक उसे नहीं छोड़ते, किन्तु उसे नये ग्राहक मिलते रहते हैं, अत उसकी बिक्री बढ़ती रहती है और उसे औसत दर से अधिक लाभ होता है। अत ख्याति की परिभाषा इस प्रकार भी दी जा सकती है **किसी व्यापारिक भवन की औसत दर से अधिक लाभ देने की सामर्थ्य को ख्याति कहते हैं।**

ख्याति का मूल्य

जिस व्यापारिक भवन की ख्याति हो जाती है, वह इस ख्याति का मूल्य वसूल कर सकता है। ऐसा तभी सम्भव है जब कि भवन का स्वामी पूरा व्यापार बेच डाले। ऐसी अवस्था में खरीदार सम्पत्तियों (Assets) का तो मूल्य देगा ही, साथ में वह कुछ मूल्य अलग से भवन की ख्याति का देगा। ख्याति खरीद लेने पर क्रेता व्यापारिक भवन का पुराना नाम रक्खे रहता है जिससे ग्राहक यही समझे कि व्यापार पहले की ही भाँति चालू है।

ख्याति का मूल्य क्यों दिया जाता है? इस प्रश्न का उत्तर स्पष्ट है। खरीदार जानता है कि ख्याति प्राप्त व्यापारिक भवन औसत दर से ऊँची दर

का लाभ कमाने की क्षमता रखता है। यदि औसत लाभ की दर ८% हो, तो ख्याति-प्राप्त व्यापारिक भवन सम्भवतः ११% या १२% लाभ प्रदान कर सकता है। इस अतिरिक्त लाभ (Super-profit) को तभी कमाया जा सकता है जब कि व्यापारिक भवन का नाम वही रक्खा जाय और पहले की तरह ही व्यापार किया जाय। अतः पुराना नाम रखने के लिये और अतिरिक्त लाभ कमाने के लिये व्यापारिक भवन का खरीदार ख्याति के लिये निश्चित मूल्य देता है।

ख्याति का मूल्यांकन (Valuation)

ख्याति का मूल्यांकन इस प्रकार किया जाता है :

(१) *पिछले ३ या ५ वर्षों का औसत वार्षिक लाभ मालूम करना*—पिछले ३ या ५ वर्षों का वार्षिक शुद्ध लाभ जोड़ कर, ३ या ५ से क्रमशः भाग देने पर गत वर्षों का औसत वार्षिक लाभ मालूम हो जाता है।

(२) *उसमें समायोजना (Adjustment) करना*—इस लाभ में से दो चीजें घटा देनी चाहिये : (अ) पूँजी पर ६% की दर से ब्याज, तथा (आ) आकस्मिक लाभ, अर्थात् वह लाभ जो आकस्मात् हुआ हो जैसे बीमा का रुपया मिलना, स्थिर सम्पत्ति बेचने पर लाभ, मुकदमा जीतने पर रुपया मिलना, आदि।

(३) *उसमें से सामान्य लाभ घटा देना*—इसके बाद उस व्यापार में सामान्य लाभ की दर (अर्थात् जो दर साधारणतया प्राप्त होती है) का पता लगाना चाहिये। इस दर से व्यापारिक भवन में लगी पूँजी पर कितना वार्षिक लाभ होना चाहिये, इसकी गणना करनी चाहिये। व्यापारिक भवन को जितना औसत वार्षिक लाभ होता है, उसमें से वह रकम घटा देनी चाहिये। तब एक साल का अतिरिक्त लाभ (Super-profit) मालूम हो जायगा।

(४) *कई साल का अतिरिक्त लाभ निकालना*—व्यापारी इस बात को तय कर लेते हैं कि ५ साल से लेकर १० साल तक के अतिरिक्त लाभ की रकम ही ख्याति का मूल्य मानी जायगी। कितने वर्ष का अतिरिक्त लाभ गणना में लिया जायगा, यह आपसी समझौते की बात है।

मूल्यांकन की और रीतियाँ—ख्याति के मूल्यांकन के दो तरीके और हैं।

(१) अतिरिक्त लाभ (Super profit) का पूँजीगत मूल्य (Capital Value) ख्याति का मूल्य माना जाता है। मान लीजिये अतिरिक्त लाभ ३,००० रु० वार्षिक है, और लाभ की दर ६% है। तो इस अतिरिक्त लाभ का पूँजीगत मूल्य $\frac{३,००० \times १००}{६}$ = ५०,००० रुपया हुआ। (२) कभी कभी अतिरिक्त लाभ के झगड़े में न पड़ कर केवल औसत शुद्ध लाभ (Average net profit) के आधार पर ख्याति का मूल्यांकन कर लिया जाता है। उदाहरण के लिये, ३ या ५ साल के औसत शुद्ध लाभ के बराबर ख्याति का मूल्य माना जा सकता है।

ख्याति का प्रश्न कब उठता है?

ख्याति का मूल्यांकन उस समय किया जाता है जब कि व्यापारिक भवन बिक रहा हो। यदि व्यापारिक भवन चालू हो और इसके बिकने का प्रश्न न हो, तो ख्याति का मूल्यांकन करना और उसे सम्पत्ति का रूप देकर बहियों में ले आना अनुचित है। इसके दो कारण हैं: (१) ऐसा करने में व्यापारिक भवन को कोई *लाभ नहीं होगा।* बहियों में एक और सम्पत्ति जोड़ देने से व्यापार का कुछ बनता बिगड़ता नहीं। (२) इससे जनता को व्यापारी के बारे में शंका हो सक्ती है।

साझेदारी में ख्याति का मूल्यांकन—साझेदारी में ख्याति का मूल्यांकन निम्न अवसरों पर किया जाता है: (१) फर्म की बिक्री पर, (२) नये साझी के आने पर, (३) किसी साझी की मृत्यु पर, (४) किसी साझी की अवसर-प्राप्ति (retirement) पर, और (५) साझा भंग होने पर।

कम्पनी में ख्याति का मूल्यांकन—कम्पनी की बहियों में ख्याति का खाता तभी खोला जाता है जब कि या तो कम्पनी कोई व्यापारिक भवन खरीदे और ख्याति के लिये कुछ मूल्य दे, या जब कम्पनी बिके और ख्याति का कुछ मूल्य वसूल हो।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१. साझेदारी से आप क्या समझते हैं ? साझेदारी की मुख्य बातें क्या हैं ? किन दशाओं में साझेदारी एक अवैधानिक सगठन हो जाता है ? (उ० प्र०, १६५५)

२. साझेदारी फर्म से आप क्या समझते हैं ? व्यक्तिगत स्वामित्व व साझेदारी फर्म का अन्तर स्पष्ट कीजिये । (१६५४)

३. साझेदारी की परिभाषा लिखिये और स्पष्ट रूप से समझाइये कि साझेदारी में क्या मुख्य गुण होते हैं ? (उत्तर प्रदेश, १६५३)

४. सक्षेप में वर्णन कीजिये कि साझेदारी सगठन किन किन अवस्थाओं में न्यायालय द्वारा समाप्त किया जा सकता है । (उत्तर प्रदेश १६५२)

५. साझे के राजीनामे के न होने पर फर्म के साझेदारों के अधिकार और उत्तरदायित्व क्या होते हैं ? पूरी तरह से वर्णन कीजिये । (यू० पी०, १६५१)

६. (अ) साझे के राजीनामे में जिन वाक्यांश का होना आवश्यक है, उनको बताइए । (आ) फर्म की रजिस्ट्री कराने का क्या तरीका है ? रजिस्ट्री का क्या प्रभाव होता है ? (यू० पी०, १६५०)

७. एकाकी व्यापारी के मुकाबले में साझेदारी के गुण और दोषों की विवेचना कीजिए । (यू० पी०, १६४६)

८. सयुक्त पूँजी की कम्पनी के मुकाबले में साझेदारी के गुण और दोषों की विवेचना कीजिए । (यू० पी० १६४७, १६३८, १६३६)

६ रजिस्ट्री किये हुए और गैर रजिस्ट्री किये हुये फर्मों के अन्तर को स्पष्टतया समझाइये । (यू० पी० १६४५)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

१० (अ) साझेदारी की परिभाषा दीजिये । साझेदारी के आवश्यक तत्व क्या हैं, और कौन सी अवस्थाएँ इसे एक अवैध सस्था बना देती हैं ?

(आ) सन् १६३२ के भारतीय साझेदारी विधान के अंतर्गत फर्म की रजिस्ट्री की रीति बताइये। ऐसी रजिस्ट्री का क्या लाभ होता है? (१६५३)

११ क्या अल्पवयस्क (Minor) को किसी साझेदार की तरह स्वीकार किया जा सकता है? अल्पवयस्क की अवस्था (अ) उसके अल्पवयस्क रहने तक और (आ) उसके वयस्क हो जाने पर क्या होती है? (१६५२, १६४७)

१२ साझेदारों के अधिकार तथा कर्तव्यों की पूर्ण विवेचना कीजिए। (१६५२)

१३ साझे का मूलतत्व (essence) क्या होता है? यदि आप कुछ व्यक्तियों के साथ साझेदारी करना चाहते हैं, तो भविष्य के झगड़े और उत्तर दायित्व से बचने के लिए आप क्या सावधानियाँ लेंगे? (राजपूताना, १६५१)

१४ दो साझियों के सफल फर्म में एक तीसरा व्यक्ति साझी होना चाहता है। जिन शर्तों पर उसका प्रवेश हो सकता है उनका वर्णन कीजिए और बताइए कि इसके फलस्वरूप क्या नई कानूनी अवस्था उपस्थित हो जायगी? (राजपूताना, १६५०)

१५ (अ) साझेदारों की परिभाषा दीजिये। साझे के मूल-तत्व क्या हैं, और किन दशाओं में यह अवैध हो जाता है? (आ) भारत में व्यवसाय के साझेदारी स्वरूप के महत्व का वर्णन कीजिये। (राजपूताना, १६५०)

१६ किन व्यवसायों में साझेदारी की प्रथा अब भी दृढ़ है और क्यों? (राजपूताना, १६५०)

१७ यदि आप एक फर्म के लिए अपना साझीदार चुनना चाहें, तो आप किन बातों को ध्यान में रखेंगे? साझा स्थापित करने के पूर्व साझेदारों के बीच कौन सी महत्वपूर्ण बातें तय हो जाना आवश्यक है? क्या फर्म के सदस्यों की संख्या सीमित होती है? (राजपूताना, १६४६)

१८ साझेदारी में साझेदारों के अधिकारों एव उत्तरदायित्व की विवेचना कीजिए। (राजपूताना, १६४८)

१६ सीमित साझेदारी पर एक नोट लिखिए। (राजपूताना, १६४८)

पटना, इन्टर कामर्स

२०. साझेदारी की परिभाषा दीजिये। साझेदारी के आवश्यक तत्व क्या हैं, और किन दशाओं में यह अवैध संस्था हो जाता है ? (पटना, १६५३)

२१. भारतीय साझेदारी विधान के अंतर्गत साझे की रजिस्ट्री कराने की विधि समझा कर लिखिये। रजिस्ट्री न कराने का क्या प्रभाव होता है ? (पटना, १६५२ वार्षिक)

२२. साझेदारी की परिभाषा दीजिए। साझेदारी के आवश्यक तत्व क्या हैं ? किन अवस्थाओं में साझेदारी अवैध हो जाती है ? (पटना, १६५१ वार्षिक)

२३. क्या भारतीय साझेदारी विधान के अंतर्गत फर्म की रजिस्ट्री कराना अनिवार्य है ? रजिस्ट्री न कराने का क्या प्रभाव होता है ? (पटना, १६४६ वार्षिक)

२४. "साझेदारी में साझेदारों का चुनाव जल्दबाजी से नहीं किया जाता। इसके लिए एक दूसरे का सावधान अध्ययन आवश्यक है।" इस कथन की पुष्टि कीजिए। (पटना, १६४६ पूरक)

२५. साझेदारी क्या होती है ? विभिन्न प्रकार के साझेदारों के अधिकारों तथा उत्तरदायित्वों का वर्णन कीजिए। (पटना, १६४४)

बिहार, इन्टर कामर्स

२६. साझेदारी क्या होती है ? किन दशाओं में साझेदारी अवैध संस्था हो जाती है ? (बिहार, १६५४)

२७. व्यापार की ख्याति (Goodwill) क्या होती है ? व्यापार का खरीदार ख्याति के लिये रुपया देने को क्यों तैयार हो जाता है ? इसका मूल्य कैसे निकाला जाता है ? (बिहार, १६५४)

सागर, इन्टर कामर्स

२८. साझेदारों में राजीनामा न होने पर उनके पारस्परिक अधिकार एवं कर्तव्य क्या होते हैं ? (सागर, १६५४)

२६. साझेदारी (Partnership) में क्या-क्या गुण होने चाहिये। यह

किन-किन दशाओं में समाप्त की जा सकती है ? वर्णन कीजिये। (सागर, १९५३)

३०. साझेदारी की परिभाषा दीजिए। इसके आवश्यक तत्व क्या होते हैं ? कौन-सी अवस्थाओ मे यह अवैध हो जाती है ? (सागर, १९५०)

नागपुर, इन्टर कामर्स

३१ क्या भारतीय साझेदारी विधान के अन्तर्गत फर्म की रजिस्ट्री कराना अनिवार्य है ? रजिस्ट्री न कराने का क्या प्रभाव होता है ? (नागपुर, १९५४)

बनारस, इन्टर कामर्स

३२ बताइये कि साझे का फर्म किस प्रकार टूटता या भग (Dissolve) होता है। (बनारस, १९५५)

३३. साझेदारी प्रलेख Partnership Agreement) में साधारणतया पाये जाने वाले वाक्यों की विवेचना कीजिये। (१९५३)

३४. साझेदारी सलेख (Partnership Deed) क्या होता है ? यह क्या काम पूरा करता है ? इसके क्या क्या महत्वपूर्ण वाक्य होते हैं ? पूरी तरह समझाइये। (बनारस, १९५१)

३५. साझेदारी के प्रधान लक्षण क्या होते हैं ? इसकी रजिस्ट्री किस प्रकार कराई जा सकती है। (बनारस, १९४६)

३६. साझेदारी के गुण और दोषों की विवेचना कीजिये। यह सयुक्त पूँजी की कम्पनी से किस प्रकार भिन्न होती है ? (बनारस, १९४४)

दिल्ली, हायर सेकिंडरी

३७ साझा किस प्रकार किया जाता है और वह कैसे टूटता है ? (दिल्ली, हा० से०, १९५२)

३८. नाबालिग साझीदार की (अ) उसके नाबालिग रहने के पूर्व और (आ) उसके बालिग हो जाने के पश्चात् की अवस्था बताइये। (दिल्ली, १९५१)

३९. (अ साझेदारी सगठन से आप क्या समझते हैं ? इसके लक्षण बताइये और सयुक्त पूँजी वाली कम्पनी के मुकाबले इसके अवगुण बताइये। (आ) क, ख और ग साझीदार हैं। किन अवस्थाओं में उनके निर्णय एक मत से तथा किन अवस्थाओं में बहुमत से लिये जा सकते हैं ? (दिल्ली, १९५०)

४० साझेदारी से आप क्या समझते हैं। इसके लक्षण बताइए और लिखिए कि सयुक्त पूँजी की कम्पनी के मुकाबले में इसक क्या दोष हैं ? (दिल्ली हायर सेकिंडरी, १६४६)

४१ अ, आ और इ साझेदार हैं। किन मामलों में इन सब का एक मत होना आवश्यक है और किन मामला में इनका बहुमत ही पर्याप्त है ? (दिल्ली हायर सेकिंडरी, १६४६)

४२ साझेदारी की परिभाषा कीजिये और विभिन्न प्रकार क साझेदारों की व्याख्या कीजिए। साझी की अपने अन्य साझियों के सम्बध में तथा तीसरे पक्षों के सम्बध में क्या अवस्था होती है ? (दिल्ली हायर सेकिन्डरी, १६४८)

मध्यभारत, इन्टर कामर्स

४३ रजिस्ट्री किये हुए साझे तथा रजिस्ट्री न किये हुये साझे में क्या अतर है ? रजिस्ट्री कराने की उपयोगिता का वर्णन कीजिये। (मध्यभारत, १६५५)

४४ साझेदारा के बीच में लिखित राजानामे की अनुपस्थिति में उनके अधिकार, कर्तव्य एव उत्तरदायित्व निर्धारित करने क सामान्य सिद्धान्त क्या हैं ? (१६५३)

४५ साझे की रजिस्ट्री से आप क्या समझते हैं ? गैर रजिस्ट्री का क्या प्रभाव होता है ? फर्म का रजिस्ट्री कराने की रीति बताइये। (१६५३)

४६ क्या नाबालिग फर्म का साझीदार बनाया जा सकता है ? नाबालिग साझीदार का (अ) उसक नाबालिग रहने तक और (आ) उसके बालिग होने क बाद क्या अवस्था होती है ? (मध्यभारत, १६५२)

उस्मानिया, इन्टर

४७ ' साझेदारी के फर्म में हर साझी सयुक्त रूप में तथा व्यक्तिगत रूप में दोनों तरह उत्तरदायी होता है।" स्पष्ट कीजिये। (१६५३)

४८ साझे के फर्म की रजिस्ट्री का क्या अर्थ है और इसका क्या प्रभाव होता है ? क्या भारत में रजिस्ट्री कराना अनिवार्य है ? उस्मानिया, १६५२)

४६ साझेदारी सलेख की अनुपस्थिति म साझेदारा क पारस्परिक अधिकारों और दायित्वों का कैसे निर्णय होता है ? (उस्मानिया, १६५१)

अध्याय ३७

संयुक्त पूँजी की कम्पनी (१) : कम्पनी की स्थापना

एकाकी व्यापार की अपेक्षा साझे के फर्म में बड़े पैमाने पर व्यापारिक साधन एकत्रित किये जा सकते है। किन्तु फिर भी इसके साधन इतने अधिक नहीं होते कि आजकल के बड़े पैमाने का कारबार किया जा सके। बड़े बड़े कारखाने, देशव्यापी रेलें, जल-विद्युत् के कारखाने, जहाजी कम्पनियाँ आदि के लिए बहुत पूँजी की आवश्यकता होती है। इतनी अधिक पूँजी किसी कम्पनी के अन्तर्गत ही एकत्रित हो सकती है। आजकल के अधिकांश बड़े पैमाने के व्यापारिक सगठन सयुक्त पूँजी की कम्पनी का स्वरूप धारण किये हुए हैं।

§ १. कम्पनी तथा अन्य व्यावसायिक संगठन

संयुक्त पूँजी की कम्पनी का अर्थ

सयुक्त पूँजी की कम्पनी ऐसे अनेक व्यक्तियों की समिति है जो किसी व्यापार में लगाने के लिए एक सयुक्त स्टाक में रुपया देते है और उससे होने वाले लाभ या हानि को आपस में बाँट लेते हैं, और जिसका कम्पनी के रूप में समामेलन (incorporation) होता है।[१] यदि इसका कम्पनी की तरह समामेलन न हो, और इसके सदस्य बैंकिंग में १० तथा अन्य व्यापार में २०

---

[१] सयुक्त पूँजी की कम्पनी लाभ के लिए बनाई गई व्यक्तियों की एक ऐच्छिक सस्था है जिसकी पूँजी हस्तातरणीय शेयरों में विभाजित होती है, जिसका स्वामित्व सदस्यता की शर्त होती है।—Haney, *Business Organi-*

से कम हों, तो इसे साझेदारी फर्म माना जायगा। यदि सदस्यों की संख्या इन संख्याओं से अधिक है, तो समिति का भारतीय कम्पनी विधान (Indian Companies Act) के अनुसार कम्पनी की भाँति रजिस्टर्ड होना अनिवार्य है; अन्यथा यह गैर कानूनी संस्था मानी जायगी। ऐसी दशा में समिति का प्रत्येक सदस्य व्यापार में होने वाली समस्त देनदारी का व्यक्तिगत हैसियत में उत्तरदायी होगा और उस पर १,००० रुपया तक का दण्ड भी लगाया जा सकता है।[2]

कम्पनी—कृत्रिम व्यक्ति

कम्पनी बहुत से व्यक्तियों की बनी होती है जिन्हें शेयरहोल्डर कहते हैं। किन्तु विशेषता यह है कि कम्पनी का, अपना निजी व्यक्तित्व होता है, जो व्यक्तित्व व्यक्तिगत सदस्यों के व्यक्तित्व से भिन्न होता है। इस दिशा में कम्पनी और साझेदारी में अन्तर है क्योंकि साझेदारी का उसके सदस्यों से भिन्न कोई अस्तित्व ही नहीं। वैधानिक भाषा में, कम्पनी अविच्छिन्न उत्तराधिकार वाली कृत्रिम व्यक्ति (an artificial person with perpetual succession) है : अन्य शब्दों में, यह वैधानिक व्यक्ति (legal person) है। इसके निम्नलिखित परिणाम होते हैं :

(१) यदि कम्पनी किसी पक्ष के साथ कोई प्रसंविदा (Contract) करे, तो इससे कम्पनी के सदस्य अपनी व्यक्तिगत हैसियत में बन्दी या उत्तरदायी

---

sation and Combination, p. 73 संयुक्त पूँजी की कम्पनी व्यक्तियों की एक समिति है जिसका उद्देश्य कोई व्यवसाय, व्यापार या उपक्रम लाभ के लिए करना होता है और जिसका उत्तरदायित्व साधारणतया परिमित, किन्तु कभी-कभी अपरिमित भी, होता है।—Heelis, *Theory and Practice of Commerce*, pp. 71-72. संयुक्त पूँजी की कम्पनी किसी उपक्रम, व्यापार या व्यवसाय के करने के लिये बनाई गई व्यक्तियों की समिति है। Fieldhouse *Business Methods*, p. 326.

[2] देखिये भारतीय कम्पनी विधान, धारा १४

नहीं होते। इसी प्रकार कम्पनी का ऋणदाता कम्पनी के सदस्यों का ऋणदाता नहीं माना जा सकता।

(२) कम्पनी का शेयरहोल्डर कम्पनी के साथ प्रसंविदा (contract) कर सकता है; और वह कम्पनी पर अभियोग चला सकता है और कम्पनी उस पर अभियोग चला सकती है।

(३) कम्पनी के सदस्य कम्पनी के एजेन्ट नहीं माने जाते (जैसा कि साझेदारी में होता है)

(४) शेयरहोल्डरों का उत्तरदायित्व परिमित (limited) हो सकता है और साधारणतया होता है।

(५) कम्पनी के शेयर बिना किसी रोक-टोक के स्वतन्त्रतापूर्वक खरीदे और बेचे जा सकते हैं।[3]

कम्पनी और साझेदारी

यदि हम कम्पनी का साझेदारी से तुलना करे, तो कम्पनी के प्रमुख लक्षण भली भाँति स्पष्ट हो जायँगे। इन दोनों में खास खास अन्तर नीचे दिये जाते है :

(१) कम्पनी और साझेदारी में पहला महत्वपूर्ण भेद यह है कि फर्म के सदस्यो की अधिकतम संख्या २० है और यदि वह बैंकिंग का काम करे तो यह संख्या केवल १० ही है; किन्तु (सार्वजनिक) संयुक्त पूँजी की कम्पनी के सदस्यो की संख्या पर कोई भी सीमा नहीं।[4] प्राइवेट या निजी कम्पनी के सदस्यों की संख्या ५० से अधिक नहीं हो सकती।

---

[3] देखिये Kimball *Principles of Industrial Organisation.* p. 55, Stephenson, *Principles*, pp. 60-61.

[4] कम्पनी के शेयरहोल्डरों की संख्या उन शेयरो की संख्या से अधिक नहीं हो सकती जिसम कि पूंजी बँटी हुई है। हाँ, अगर स्टाक का निर्गमन (issue) हुआ है, तो बात दूसरी है।

(२) प्रत्येक साझी का उत्तरदायित्व होता है और वह फर्म के ऋणों के लिए अपनी व्यक्तिगत हैसियत में उत्तरदायी होता है। हाँ, यदि वह सीमित साझी (Limited Partner) हो तो बात दूसरी है; किन्तु ऐसे साझी बहुत कम होते हैं। इसके विपरीत, कम्पनी में शेयरहोल्डरों का उत्तरदायित्व परिमित होता है—यह उनके शेयरों पर न अदा किये गये धन अथवा कम्पनी के टूटने पर उनके द्वारा प्रतिज्ञा किये गये धन तक सीमित होता है। केवल अपरिमित कम्पनी (Unlimited Company) में ऐसा नहीं होता, किन्तु ऐसी कम्पनी विरली होती है।

(३) बिना अन्य साझेदारों की सम्मति के कोई भी साझी फर्म में अपना हित (interest) हस्तान्तरित नहीं कर सकता। किन्तु कम्पनी का शेयरहोल्डर अपना शेयर स्वतन्त्रतापूर्वक हस्तांतरित कर सकता है, केवल प्राइवेट या निजी कम्पनियों में समिति के अन्तर्नियम (Articles of Association) शेयरों के हस्तांतरण पर कुछ रोक थाम करते हैं। यह बात इतनी महत्वपूर्ण है कि लार्ड जस्टिस लिंडले ने कम्पनी की परिभाषा ही यह दी है कि यह "सदस्यों की ऐसी समिति है जिसके कि शेयर हस्तान्तरणीय होते हैं। साझेदारी से भिन्नता के सम्बंध में मुझे शेयरों के हस्तान्तरण के अतिरिक्त और किसी बात का ज्ञान नहीं।"

(४) साझेदारी का, उसके सदस्यों से भिन्न, अपना कोई स्वतन्त्र वैधानिक अस्तित्व नहीं। इसके विपरीत, कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति है जिसका अस्तित्व उसके सदस्यों के अस्तित्व से स्वतन्त्र है।

(५) फर्म के व्यापार में प्रत्येक साझी को भाग लेने का अधिकार होता है। किन्तु कम्पनी के शेयरहोल्डरों की संख्या इतनी अधिक होती है कि यह अधिकार प्रत्येक शेयरहोल्डर को नहीं दिया जा सकता। इसलिये नियंत्रण और प्रबन्ध का अधिकार एक संचालक समिति या डाइरेक्टरों के बोर्ड (Board of Directors) को सौंप दिया जाता है जिन्हें शेयरहोल्डर चुनते हैं।[१]

---

[१] Gerstenberg, *Principles of Business*, p. 109.

(६) यदि कोई साझी मर जाय या पागल हो जाय या दिवालिया हो जाय तो इससे साझा भग हो जाता है, किन्तु इस प्रकार की घटना का कम्पनी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। स्वर्गीय प्रोफेसर डिकसी (Dicksee) ने लिखा है कि "कम्पनी और साझेदारी का आवश्यक अन्तर यह है कि कम्पनी का अस्तित्व उसके सदस्यो के जीवन या इच्छाओं के अतिरिक्त भी जारी रहता है।"[६]

(७) साझेदारी फर्म की पूँजी सारे साझेदारों की सम्मति से बदली जा सकती है, किन्तु कम्पनी में ऐसा करने के लिये एक विषम वैधानिक मार्ग ग्रहण करना पड़ता है।

(८) कम्पनी के हिसाब किताब की अकेक्षा (audit) विधान ने अनिवार्य बना दी है किन्तु साझे मे ऐसा नहीं है।

स्थापना या समामेलन (Incorporation) की रीतियाँ

कम्पनी की स्थापना (या समामेलन) निम्नलिखित रीतियों में से किसी भी एक रीति द्वारा हो सकती है

(१) *इसका भारतीय कम्पनी विधान के अन्तर्गत समामेलन कराया जा* सकता है। अधिकाश कम्पनियाँ इसी रीति को अपनाती हैं।

(२) इसका जन्म लोकसभा के या राष्ट्रपति (President) के किसी विधान द्वारा हो सकता है। रिजर्व बैंक आव इण्डिया और मजदूरों का राजकीय बीमा सगठन विशेष विधानो के अनुसार ही बनाये गये हैं।

सयुक्त पूँजी की कम्पनी की कथा

पुस्तक के आरम्भ में दिये गये चित्र मे सयुक्त पूँजी की कम्पनी का प्रारम्भ, सङ्गठन और परिचालन चित्रित किया गया है। पहले शेयरहोल्डर पूँजी एकत्रित करते और सचालको (Directors) का चुनाव करते हैं, जो कारखाने बनाने की और माल उत्पन्न करने की आयोजना करते हैं। इसके पश्चात् विज्ञापन मैनेजर, कोषाध्यक्ष एव मन्त्री की सम्मति से, माल प्रचारित करता है। घूमने वाले बिक्री के एजेंड घूम घूम कर माल को फुटकर दूकानदारों को बेचते हैं।

---

६ Dicksee, *Business Organisation*, p 22

उपभोक्तागण इन्हीं फुटकर दूकानों से माल खरीदते हैं। यह शृंखला संयुक्त पूँजी की कम्पनी को अन्तिम उपभोक्ता से मिला देती है।

§ २. संयुक्त पूँजी की कम्पनियों की किस्में

कम्पनियो में, सदस्यों के उत्तरदायित्व की सीमा के दृष्टिकोण से, अन्तर्भेद किया जा सकता है। पहले दृष्टिकोण से कम्पनियों को परिमित और अपरिमित इन दो वर्गों में बाँटा जाता है, और दूसरे दृष्टिकोण से सार्वजनिक और प्राइवेट कम्पनियों में।

परिमित और अपरिमित कम्पनी

अपरिमित कम्पनी—अपरिमित कम्पनी के सदस्यों का उत्तरदायित्व अपरिमित होता है। दूसरे शब्दों में, कम्पनी के ऋण का भुगतान करने के लिये वे व्यक्तिगत रूप मे उत्तरदायी होते हैं। किन्तु उनके ऋण के भुगतान के लिए रुपया आनुपातिक हिसाब से (*Pro rata*) (अर्थात् कम्पनी में उनके सापेक्षिक हितों के अनुसार) ही माँगा जा सकता है, और उनकी सदस्यता समाप्त होने के एक वर्ष पश्चात् उनके उत्तरदायित्व का लोप हो जाता है। अपरिमित कम्पनी बहुत विरली होती है। अधिकाश पुरानी अपरिमित कम्पनियों ने अपनी रजिस्ट्री परिमित कम्पनियों के रूप में फिर से करा ली है।

परिमित कम्पनी—परिमित कम्पनी उस कम्पनी को कहते हैं जिसके सदस्यों का उत्तरदायित्व परिमित होता है। ऐसी कम्पनी के नाम के पश्चात् "Limited," "Ltd," "लिमिटेड" या "लि०" लिखना अनिवार्य है जिससे कि जनता यह जान जाय कि सदस्य का उत्तरदायित्व परिमित है। कम्पनी शेयरों द्वारा या गारन्टी द्वारा परिमित हो सकती है।

(अ) "गारन्टी द्वारा परिमित कम्पनी" का यह नाम इसलिए पड़ा कि कम्पनी का प्रत्येक सदस्य इस बात की गारन्टी देता है कि यदि कम्पनी उसकी सदस्यता के समय अथवा उसकी सदस्यता के समाप्त होने के एक वर्ष के अन्दर दिवालिया हो जाय तो वह कम्पनी के कोष में एक निश्चित रकम रख देगा।

सामाजिक, खेल-कूद वाली तथा लाभ की दृष्टि से बनाई गई कम्पनियाँ बहुधा अपनी रजिस्ट्री इसी प्रकार की कम्पनी के रूप में कराती हैं।[७]

(आ) **शेयरों द्वारा परिमित कम्पनी**—ऐसी कम्पनी में पूँजी निश्चित रकम के शेयरों में बँटी होती है। एक शेयरहोल्डर का कुल उत्तरदायित्व उसके शेयर के अंकित मूल्य (face value) के बराबर होता है। यदि उसने अपने उत्तरदायित्व का आंशिक भुगतान कर दिया है तो वह केवल शेष रकम का देनदार होता है। उदाहरण के लिए, यदि आपने किसी कम्पनी में एक १०० रुपए का शेयर खरीदा तो आप का कुल उत्तरदायित्व १०० रु० हुआ, और यदि आप इस रकम का एक भाग अदा कर चुके हैं—मान लीजिए आपने ६०) दे दिया है—तो आपका उत्तरदायित्व शेष रकम—अर्थात् (रु० १००—रु० ६० =)रु० ४० तक सीमित हो जायगा। ऐसी कम्पनियाँ बहुत लोकप्रिय हैं। वास्तव में वे आज के बड़े पैमाने के व्यवसाय का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनका महत्व इतना महान् है कि जब हम परिमित कम्पनियों की चर्चा करते हैं तो हमारा आशय शेयरों द्वारा परिमित कम्पनी से होता है।

प्राइवेट और सार्वजनिक कम्पनियाँ

कम्पनियों को प्राइवेट कम्पनी और सार्वजनिक कम्पनी के वर्गों में भी बाँटा जा सकता है।

प्राइवेट कम्पनी उसे कहते हैं जिसके अन्तर्नियम (Articles)—

(अ) उसके शेयरों के, यदि कोई हों तो, हस्तांतरण पर प्रतिबन्ध लगा देते हैं,

(आ) कम्पनी के नौकरों को छोड़कर उसके सदस्यों की संख्या ५० तक सीमित कर देते हैं, और

---

[७]गारन्टी वाली कम्पनी की पूँजी शेयरों में विभाजित हो भी सकती है और नहीं भी हो सकती। यह वैकल्पिक बात है। अतः उनका उपवर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है : (१) गारन्टी वाली कम्पनियाँ जिनकी पूँजी शेयरों में बँटी हुई है, और (२) गारन्टी वाली कम्पनियाँ जिनकी पूँजी शेयरों में नहीं बँटी।

(इ) कम्पनी के शेयरों या डिबेंचरों (Debentures) के खरीदने के लिये जनता को निमन्त्रण देने का निषेध कर देते हैं।

जो कम्पनी उपरोक्त प्रतिबन्धों से मुक्त हो उसे *सार्वजनिक कम्पनी* कहते हैं। भारतीय कम्पनी विधान में इसकी विस्तृत परिभाषा नहीं है। विधान केवल इतना कहता है कि जो कम्पनी प्राइवेट कम्पनो।न हो वही सार्वजनिक कम्पनी है। किन्तु यह कहा जा सकता है कि यह वह कम्पनी है जिसके शेयरों का हस्तातरण स्वतन्त्रतापूर्वक किया जा सकता है, जिसके शेयरहोल्डर ७ से अधिक चाहे कितने भी हो सकते हैं और जो जनता को शेयर खरीदने के लिए आमन्त्रित कर सकती है।

प्राइवेट कम्पनी से लाभ

प्राइवेट कम्पनी का स्थान साझेदारी और सार्वजनिक कम्पनी के मध्य में है यद्यपि इसकी समानता सार्वजनिक कम्पनी से अधिक है। साझेदारी के मुकाबले प्राइवेट कम्पनी के निम्नलिखित लाभ हैं:

(१) प्राइवेट कम्पनी के सदस्यों की सख्या ५० हो सकती है, किन्तु साझेदारी में सदस्य २० से अधिक नहीं हो सकते और यदि फर्म बैंकिंग व्यवसाय करता है तो सदस्य १० से अधिक नहीं हो सकते। अतः साधारणतया कम्पनी के पास फर्म से अधिक पूँजी, कुशलता और उत्पत्ति के साधन जुटाये जा सकते हैं।

(२) प्राइवेट कम्पनी के सभी सदस्यों का उत्तरदायित्व परिमित हो सकता है। यह सुविधा फर्म को प्राप्त नहीं।

(३) कुछ थोड़े से प्रतिबन्ध को छोड़ कर शेयरों का स्वतन्त्रतापूर्वक हस्तातरण किया जा सकता है, किन्तु साझी बिना अपने सहसाझेदारों की सम्मति के फर्म में अपने हित का हस्तातरण नहीं कर सकता।

(४) किसी साझी की मृत्यु, पागलपन या दिवालियापन के परिणामस्वरूप फर्म की इतिश्री हो सकती है, किन्तु ऐसी घटनाओं का प्राइवेट कम्पनी के जीवन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

सार्वजनिक कम्पनी के मुकाबले में, प्राइवेट परिमित कम्पनी के निम्न-लिखित लाभ हैं :

(१) प्राइवेट कम्पनी, सार्वजनिक कम्पनी की अपेक्षा, सुगमतापूर्वक स्थापित की जा सकती है क्योंकि इसमें कम से कम २ ही सदस्य होने चाहिये जब कि सार्वजनिक कम्पनी के न्यूनतम सदस्यों की सख्या ७ होती है।

(२) प्राइवेट कम्पनी कुछ ऐसे नन्वना से मुक्त होती है जो सार्वजनिक कम्पनी पर लागू होते हैं। उदाहरण के लिए, व्यापार आरम्भ करने के पूर्व प्राइवेट कम्पनी के लिए न्यूनतम रकम के शेयरों की बिक्री (minimum subscription of shares) की आवश्यकता नहीं, कम्पनियों को रजिस्ट्रार के पास रिपोर्ट या चिट्ठा (Balance Sheets) भेजने की कोई आवश्यकता नहीं, शेयरों की बँटनी (allotment) और सचालकों की नियुक्ति पर भी कोई प्रतिबन्ध नहीं।

§ ३. कम्पनी की स्थापना (Floatation of Companies) और उसका प्रवर्तन (Promotion)

कम्पनी की स्थापना—अब हम कम्पनी स्थापित करने की रीति का वर्णन करेंगे। कम्पनी की स्थापना की मुख्य श्रेणियां निम्नलिखित होती हैं:

(अ) कम्पनी का सम्मेलन (incorporation) कराना,

(आ) कम्पनी की पूँजी जुटाना, और

(इ) व्यापार आरम्भ कर देना।

अत. कम्पनी की स्थापना का आशय कम्पनी को वैधानिक दृष्टि से अस्तित्व में लाने और व्यापार करने योग्य बनाने से है। हम उपरोक्त तीनों श्रेणियों का वर्णन नीचे करते हैं।

प्रवर्तन (Promotion)

इस सम्बन्ध में हमें 'प्रवर्तन' शब्द से परिचय प्राप्त कर लेना चाहिये।

कम्पनी के प्रवर्तन से आशय कम्पनी के प्रारम्भिक सगठन से है। प्रत्येक कम्पनी का प्रारम्भिक सगठन कुछ व्यक्ति अपने हाथ में ले लेते हैं। ऐसे व्यक्तियों को 'प्रवर्तक' (promoters) कहते हैं।

प्रवर्तन (Promotion) और स्थापना (Floatation)—प्रवर्तन और स्थापना का भेद जान लेना आवश्यक है। स्थापना से आशय कम्पनी को वैधानिक दृष्टि से अस्तित्व में लाना और उसे व्यापार करने के योग्य बनाना है, पर प्रवर्तन का अर्थ वैधानिक एव अन्य सगठन सम्बन्धी कार्यों से है जिनके द्वारा कम्पनी की नींव पड़ती है। अत. प्रवर्तन का क्षेत्र स्थापना से विस्तृत है। कम्पनी का समामेलन कराना, पूँजी एकत्रित कराना और व्यापार आरम्भ करने की योग्यता देने के अतिरिक्त इसमें निम्नलिखित कार्य शामिल होते हैं : यह निर्णय करना कि किस व्यापार के लिये कम्पनी स्थापित करनी है, ऐसे व्यक्तियों को खोजना जो प्रथम सचालक होने के लिए तत्पर हैं, इमारत तथा फर्नीचर आदि खरीदना, अन्य वस्तुओं और सेवाओं के प्राप्त करने के लिये प्रसंविदे करना आदि।

प्रवर्तक के कार्य—अब हम प्रवर्तक के कार्य क्रमानुसार देते हैं : (१) यह निर्णय करना कि प्रस्तावित कम्पनी क्या व्यापार करेगी, (२) यह निर्णय करना कि कम्पनी नये सिरे से व्यापार आरम्भ करेगी या किसी व्यापार में सलग्न भवन (going concern) को खरीद लेगी। पिछली दशा में प्रवर्तक को ऐसे भवन से प्रसंविदे की शर्तें भी तय करनी होंगी, (३) कुछ ऐसे व्यक्ति खोजना जो प्रथम सञ्चालक होने के लिए प्रस्तुत हैं, (४) कम्पनी का समामेलन कराना; (५) कम्पनी की पूँजी जुटाना, (६) कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण-पत्र दिलवाना, (७) इमारत तथा अन्य वस्तुओं को, जो व्यापार आरम्भ करने के लिए आवश्यक हैं, खरीदने या खरीदने के लिए प्रसंविदे करना।

प्रवर्तक को अपना कर्तव्य ईमानदारी से पालन करना चाहिए। और कम्पनी के मूल्य पर उसे व्यक्तिगत लाभ करने की चेष्टा नहीं करनी चाहिये। आक्षेपकारी बातों को रोकने के लिये विधान ने यह भी आयोजन किया है कि प्रवर्तक को चाहिये कि उसने जितने भी प्रसंविदे किये हों उन सब को साफ-साफ बतला दे और यह भी स्पष्ट कर दे कि उसने अपनी सेवाओं के लिये क्या

पुरस्कार वसूल किया है। अन्य महत्वपूर्ण बातों को भी उचित प्रकाश देना अनिवार्य है।

§ ४. कम्पनी का समामेलन (Incorporation)

समामेलन की रीति

सयुक्त पूँजी की कम्पनी के समामेलन (incorporation) कराने के लिये निम्नलिखित काम करने पड़ते हैं :

(१) प्रलेखों का फाइल करना—सबसे पहला काम होता है आवश्यक प्रलेखों को उस राज्य के "रजिस्ट्रार आव जाइंट स्टाक कम्पनीज" के दफ्तर में फाइल करना जिसमे कि कम्पनी का प्रधान दफ्तर स्थापित होगा। उत्तर प्रदेश के रजिस्ट्रार का दफ्तर लखनऊ में है; बिहार के रजिस्ट्रार का दफ्तर पटने में; और मध्य प्रदेश के रजिस्ट्रार का नागपुर मे। समामेलन के लिए निम्नलिखित प्रलेख फाइल करने पड़ते हैं :

(अ) कम्पनी का स्मारक-पत्र (Memorandum of Association);

(आ) कम्पनी के अन्तर्नियम (Articles of Association), यदि कोई हों;

(इ) कम्पनी के रजिस्टर्ड दफ्तर की स्थिति की सूचना;

(ई) उन व्यक्तियों की सूची जिन्होंने सचालक होने की अनुमति दे दी है;

(उ) सचालकों की इस प्रकार की लिखित अनुमति ,

(ऊ) किसी एडवोकेट या कम्पनी के किसी सचालक, मैनेजर या मत्री की यह घोषणा कि समस्त कानूनी आवश्यकताएँ पूरी कर दी गई हैं।

स्मरण रहे कि सार्वजनिक परिमित कम्पनी मे उपरोक्त ६ प्रलेख फाइल करने पड़ते हैं, किन्तु प्राइवेट परिमित कम्पनी में केवल पहले ३ प्रलेख ही देने पड़ते हैं।

(२) रजिस्ट्री की फीस—उपरोक्त प्रलेखों के साथ-साथ उचित और पर्याप्त रजिस्ट्री की फीस भी भेजी जानी चाहिये।

(३) समामेलन का प्रमाण-पत्र—यदि सब बात ठीक है तो रजिस्ट्रार समामेलन का प्रमाण पत्र दे देगा। उस क्षण से, कम्पनी का अविच्छिन्न उत्तराधिकार और अलग मोहर के साथ अपना निजी वैधानिक अस्तित्व आरंभ हो जाता है।

कम्पनी का स्मारक-पत्र

स्मारक पत्र कम्पनी का सबसे महत्वपूर्ण प्रलेख है। वास्तव में, यही कम्पनी का चार्टर है जो इसकी शक्तियों को परिभाषित करता और उसके उद्देश्यों को बताता है। यह कम्पनी का अन्य व्यक्तियों के साथ का सम्बन्ध नियत करता है। स्मारक पत्र के बनाने में विशेष सावधानी की आवश्यकता पड़ती है, क्योंकि इस प्रलेख में दी हुई बातों की सीमा के बाहर कम्पनी नहीं जा सकती। इसलिए इस प्रलेख को "पार्षद सीमा नियम" भी कहा जाता है। स्मारक-पत्र में परिवर्तन बहुत कठिनता से किया जा सकता है।

स्मारक-पत्र में निम्नलिखित बातें[८] दी जाती हैं :

(१) कम्पनी का नाम—इस नाम का अन्तिम शब्द 'लिमिटेड' होना अनिवार्य है।

(२) जिस राज्य में उसका रजिस्टर्ड आफिस स्थापित है, उस राज्य का नाम।

(३) कम्पनी के उद्देश्य—इसे "उद्देश्य-वाक्य" कहा जाता है और इसमें परिवर्तन करना सबसे कठिन होता है। अत. यह आवश्यक है कि इसमें उन सब व्यापारों का समावेश कर दिया जाय जिन्हें कम्पनी के करने की तनिक-सी भी सम्भावना है। साधारणतया "उद्देश्य वाक्य" बहुत लम्बा होता है। इस वाक्य के अन्त में एक इस प्रकार का अंश जोड़ देते हैं; "और सारे अन्य व्यापार जो ऊपर बताये गये उद्देश्यों से सम्बन्धित या उनके सहायक हों।" इससे कम्पनी का कार्य क्षेत्र बहुत विस्तृत हो जाता है।

(४) यह कथन कि सदस्यों का उत्तरदायित्व परिमित है।

---

[८] ये प्रतिबन्ध शेयर वाली परिमित कम्पनियों पर लागू होते हैं जो सबसे अधिक लोकप्रिय हैं।

(५) कम्पनी की अधिकृत पूँजी और उसका (authorised) शेयरों में विभाजन।

स्मारक पत्र के अत में यह घोषणा होती है कि हस्ताक्षर करने वाले (signatories) स्वयं को कम्पनी के रूप में सगठित करने के इच्छुक हैं। हस्ताक्षर करने वालों के पते और पशे अवश्य देने चाहियें और उनके हस्ताक्षर गवाह द्वारा प्रमाणित होने चाहिये। उन्हें अपने हस्ताक्षर के सामने यह भी लिखना चाहिये कि वे कितने शेयर खरीद रहे हैं। स्मारक पत्र पर हस्ताक्षर करने वाला कोई भी व्यक्ति एक से कम शेयर नहीं ले सकता।

उद्देश्य वाक्य में परिवर्तन—स्मारक पत्र का उद्देश्य वाक्य तभी परिवर्तित हो सकता है जब कि (अ) वह विशेष प्रस्ताव (Special Resolution) द्वारा स्वीकृत किया गया हो, (आ) न्यायालय उसे सुदृढ़ करे, और (इ) यदि परिवर्तन निम्नलिखित कामों के लिए आवश्यक हो

(१) अधिक मितव्ययिता अथवा कुशलता के साथ व्यापार करने के लिए, या

(२) प्रधान उद्देश्य नवीन तथा श्रेष्ठ साधनों द्वारा करने के लिए, या

(३) स्थानीय व्यापार का क्षेत्र बदलने या बढ़ाने के लिए, या

(४) ऐसा नया व्यापार करने के लिए जो कम्पनी के लिए व्यापार के साथ संयुक्त किया जा सकता है, या

(५) किसी उद्देश्य को सीमित करने या त्यागने के लिए, या

(६) व्यापार की बिक्री करने या अन्य निपटारा करने के लिए, या

(७) अन्य किसी कम्पनी से मिलने (amalgamation) के लिए।

कम्पनी के अन्तर्नियम (Articles of Association)

स्मारक पत्र के साथ साथ अन्तर्नियम भी फाइल किये जाते हैं। इन अन्तर्नियमों पर भी उन व्यक्तियों के हस्ताक्षर होना आवश्यक है जिन्होंने स्मारक पत्र पर हस्ताक्षर किये हैं। कम्पनी के आभ्यन्तरिक मामलों के शासन के लिए बनाये गये नियमों, नियन्त्रणों और उपनियमों को ही अन्तर्नियम

(Articles) कहते हैं। वे इस प्रकार की बातों से सम्बंध रखते हैं : शेयरों के निर्गम (issue), हस्तांतरण और हरण (forfeiture), पूँजी का बढ़ाना, जनरल मीटिंग और उसकी कार्रवाई, मेम्बरों का वोट देना, चुनाव, संचालकों के अधिकार, उनकी योग्यताएँ (Qualifications) और अयोग्यताएँ, लाभांश (dividend) की घोषणा, ठीक-ठीक हिसाब रखना और उसकी अंकेक्षा (audit)।

शेयर वाली कम्पनी यदि चाहे तो स्वयं अपने बनाये हुए अन्तर्नियम फाइल करे या भारतीय कम्पनी विधान के एक परिशिष्ट में दिये हुए अन्तर्नियमों को जिसे 'टेबिल ए' (Table A) कहा जाता है, स्वीकार कर ले। यदि रजिस्ट्रार के यहाँ कोई अन्तर्नियम फाइल नहीं किये गये हों, तो यह समझा जाता है कि कम्पनी ने 'टेबिल ए' स्वीकार कर ली है। साधारणतया 'टेबिल ए' कम्पनियों के ठीक-ठीक अनुकूल नहीं होती, इसलिए अधिकांश कम्पनियाँ अपने अलग अन्तर्नियम बना कर फाइल कर देती हैं।

यह आवश्यक है कि अन्तर्नियम (१) मुद्रित या छपे हुए हों, (२) पैराग्राफों में विभाजित हों और उन पर लगातार नम्बर पड़े हों, और (३) उन पर स्मारक-पत्र पर हस्ताक्षर करने वाला प्रत्येक व्यक्ति अपने पते और विवरण के सहित किसी गवाह की उपस्थिति में, हस्ताक्षर करे, जो गवाह उन हस्ताक्षरों को प्रमाणित भी करे। अन्तर्नियम को एक विशेष प्रस्ताव (Special Resolution) द्वारा परिवर्तित किया जा सकता है, और इसमें उन कठिनाइयों का सामना नहीं करना पड़ता है जो स्मारक पत्र के बदलने में सामने आती हैं।

समामेलन का प्रमाण-पत्र

जब रजिस्ट्रार को यह आश्वासन हो जाता है कि समस्त वैधानिक आवश्यकताओं की पूर्ति कर दी गई है, तब वह समामेलन का प्रमाण-पत्र देता है। समामेलन का प्रमाण पत्र कम्पनी के हस्ताक्षर करने वालों और सदस्यों को समामेलित संस्था (body incorporate) का स्वरूप दे देता है।

§ ५. पूँजी एकत्रित करना और व्यापार का आरम्भ

व्यापार का आरम्भ

जैसे ही प्राइवेट कम्पनी को समामेलन का प्रमाण-पत्र (Certificate of Incorporation) मिलता है, वैसे ही उसे व्यापार आरम्भ करने की आज्ञा प्राप्त हो जाती है। प्राइवेट कम्पनी को जनता को शेयर खरीदने के लिए आमन्त्रित करने का निषेध है। साधारणतया रजिस्ट्री के समय ही पूँजी पूरी-पूरी, या लगभग पूरी पूरी, एकत्रित कर ली जाती है जिससे कि व्यापार आरम्भ करने के बाद कोई रुकावट न हो।

किन्तु सार्वजनिक कम्पनी का, इसके विपरीत, पूँजी एकत्रित करने के लिए सार्वजनिक चन्दे पर निर्भर रहना पड़ता है; और सार्वजनिक कम्पनी समामेलन के बाद ही पूँजी एकत्रित कर सकती है। वास्तव में पूँजी एकत्रित करने का काम बहुत कठिन होता है और उसके लिए काफी अनुभव एवं कुशलता की आवश्यकता होती है। बिना पर्याप्त पूँजी के कम्पनी चलाना ठीक बात नहीं। इस दिशा मे इतनी बेइमानी और दुर्व्यवहार हो सकता है कि इस काम पर कानून ने कड़ा नियन्त्रण कर रक्खा है। इसलिए सार्वजनिक कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने का भी प्रमाण-पत्र लेना पड़ता है जो पूँजी एकत्रित कर लेने के बाद ही मिलता है।

व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण पत्र

सार्वजनिक कम्पनी को समामेलन का प्रमाण पत्र मिल जाने के बाद व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण पत्र रजिस्ट्रार से निम्नलिखित बातों को पूरा करने पर ही मिल सकता है :

(१) रजिस्ट्रार के पास प्रास्पेक्टस (Prospectus) या प्रविवरण अथवा प्रास्पेक्टस का स्थानापन्न प्रलेख (Statement in lieu of Prospectus) दाखिल करना चाहिये।

(२) प्रास्पेक्टस की तारीख से लेकर १२० दिन के अन्दर शेयरों की

बँटनी (Allotment) हो जानी चाहिये, और रजिस्ट्रार के पास एक बँटनी प्रलेख (Return of Allotment) फाइल कर देना चाहिये।

(३) इस बात की घोषणा कि समस्त वैधानिक आवश्यकताएँ उचित रीति से सन्तुष्ट की जा चुकी हैं, रजिस्ट्रार के पास फाइल कर देनी चाहिये।

(४) ऊपर की सब बातें हो जाने के पश्चात् रजिस्ट्रार व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण पत्र निर्गमित करता है।

प्रास्पैक्टस या प्रविवरण

पूँजी एकत्रित करने के लिए सार्वजनिक कम्पनी को सामान्यतया एक प्रास्पेक्टस या प्रविवरण प्रकाशित करना पड़ता है। जनता को शेयर या डिबेंचर खरीदने के लिये दिये गये निमंत्रण को ही प्रास्पैक्टस या प्रविवरण कहते हैं। कम्पनी जो व्यापार करना चाहती है प्रास्पेक्टस उसके सुरक्षित होने की विवेचना करता है और यह भी बताता है कि कम्पनी के शेयरों या डिबेंचरों में रुपया लगाना सुरक्षित और लाभदायक क्यों और कैसे होगा। साधारणतया विनियोगकों (Investors) को आकर्षित करने के लिए प्रास्पेक्टस में कम्पनी के अच्छे पहलुओं पर जोर दिया जाता है। कभी कभी तो यहाँ तक होता है कि प्रास्पेक्टस के रचयिता खूब सुनहरे स्वप्न चित्रित करते हैं सच्ची बातों का अतिशयोक्ति करते अथवा उन्हें छिपाते हैं, और झूठी झूठी बातें प्रकाशित करने में भी नहीं हिचकते। ऐसे काम अनुचित हैं। विधान में इस बात की आयोजना की गई है कि यदि प्रास्पेक्टस में कोई धोखा देने वाला लेख है और उससे विभ्रम होकर कोई व्यक्ति शेयर या डिबेंचर खरीदता है, तो वह अपने रुपये की वापसी के लिये कम्पनी या प्रास्पेक्टस के रचयिता पर अभियोग चला सकता है। विधान के अनुसार कुछ ऐसी बातें जिनका विनियोगक (investor) के निर्णय पर प्रभाव पड़ना अवश्यम्भावी है, प्रास्पेक्टस में प्रकाशित करना अनिवार्य है।[1]

कम्पनी जब भी प्रास्पेक्टस प्रकाशित करे या जो भी प्रास्पेक्टस कम्पनी के

[1] भारतीय कम्पनी विधान, धारा ९३

लिए प्रकाशित किया जाय, उस पर तारीख अवश्य होनी चाहिये उस पर प्रत्येक सचालक (या डाइरेक्टर) और प्रस्तावित संचालक के या उसके अधिकृत एजट के हस्ताक्षर अवश्य होने चाहिये और जनता में बँटने के पूर्व उसकी एक प्रति रजिस्ट्रार क पास अवश्य फाइल कर देनी चाहिए। प्रत्येक प्रास्पक्टस के ऊपर यह अवश्य लिखा या छपा रहना चाहिये कि उसकी एक प्रति रजिस्ट्रार के पास फाइल कर दी गई है। यदि कम्पनी प्रास्पेक्टस प्रकाशित नहीं करती, तो उसे प्रास्पेक्टस का स्थानापन्न प्रलेख फाइल करना चाहिये। इसम वस्तुत वे ही विवरण रहते हैं जो कि प्रास्पक्‍ स में पाये जाते हैं।

शेयरों के लिए आवेदन पत्र

प्रास्पक्टस में शयर खरीदने के लिए एक आवेदन पत्र भी छपा रहता है। शयर खरीदने वाले को यह आवेदन पत्र भर कर निवेदन क साथ भेज दिये जाने वाले रुपयों के चैक के साथ कम्पनी क बैंकर[१०] क पास भेज देना चाहिये। आवदन पत्र के साथ दिये जाने वाले रुपये को **आवेदन राशि** (Application Money) कहते हैं और यह शेयर के अंकित मूल्य (Nominal or Face Value) के ५% प्रतिशत से कम नहीं होना चाहिये। आवेदन पत्र स्वीकार करने का एक अन्तिम तिथि निश्चित होती है, इसक पश्चात् आनेवाले आवदन पत्र को स्वीकार नहीं किया जाता।

शेयरों की बँटनी (Allotment)

आवेदन की अन्तिम तिथि बीत जाने पर, कम्पनी का बैंकर कम्पनी को सारे आवेदन पत्र एव पास बुक भेज देता है। तब सचालकगण या डायरेक्टर शयरों की बँटनी आरम्भ करते हैं। शेयरों के लिये जो आवेदन पत्र दिया जाता है वह शयर खरीदने के लिये आवेदक द्वारा किया गया प्रस्ताव (Offer) मात्र है। डाइरेक्टरों का उसे स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करने का अधिकार है। उसी

[१०] शयरों के लिये निवेदकों से आने वाला समस्त रुपया रिजर्व बैंक आव इडिया १९३४ में परिभाषित शैड्यूल्ड या अनुसूचित (Scheduled) बैंक क पास जमा रहेगा।—भारतीय कम्पनी विधान।

प्रकार, आवेदक को भी यह अधिकार है कि प्रस्ताव स्वीकृत होने के पूर्व ही वह उसे वापस कर ले।

सामान्यतया प्रास्पैक्टस में पूँजी की एक न्यूनतम मात्रा दी रहती है, जिसके लिये आवेदन-पत्र आये बिना शेयरों की बँटनी नहीं हो सकती। यह न्यूनतम मात्रा इस प्रकार निर्धारित की जाती है कि यह (१) खरीदी गई या खरीदी जाने वाली सम्पत्ति के मूल्य, (२) प्रारम्भिक व्यय और (३) कार्यशील पूँजी के बराबर हो। यदि इस न्यूनतम पूँजी के लिये आवेदन पत्र न आवें तो शेयरों की बँटनी नहीं हो सकती।

यदि किसी कारणवश शेयरों की बँटनी न हो, तो प्रास्पैक्टस की तारीख से १८० दिन के अन्दर ही अन्दर सारी आवेदन राशि (application money) लौटा देनी चाहिये।

यदि बँटनी हो, तो जिन व्यक्तियों को शेयर बँटे उनके पास दो-दो आने के टिकट लगाकर बँटनी के पत्र (Letters of Allotment) भेजे जाते हैं। जिन व्यक्तियों को शेयर नहीं मिलते उनको एक खेद-पत्र और उसके साथ उनकी आवेदन राशि भेज दी जाती है।

यदि कम्पनी शेयर बाँटे, तो उसे चाहिये कि उसके एक महीने के अन्दर ही अन्दर रजिस्ट्रार के यहाँ एक बँटनी का लेखा (Return of Allotment) फाइल कर दे जिसमें बाँटे जाने वाले शेयरों की कुल संख्या एवं उनका कुल अंकित मूल्य, शेयर पाने वालों के नाम, पते और परिचय तथा प्रत्येक शेयर पर अदा की गई रकम और अदा की जाने वाली रकम का ब्यौरा लिखा होना चाहिये।

अध्याय ३८

संयुक्त पूँजी की कम्पनी (२) : पूँजी· प्रबन्ध और निस्तार

§ ६. पूँजी का वर्गीकरण

एकाकी व्यापारी या साझे के विपरीत एक सयुक्त पूँजी की कम्पनी की पूँजी स्मारक पत्र (Memorandum) द्वारा निश्चित होती है। पूँजी की वह अधिकतम राशि जिससे अधिक पूँजी एकत्रित करने का अधिकार सचालकों को नहीं होता, **अधिकृत पूँजी** (Authorised Capital) कहलाती है, उदाहरण के लिए, एक एक रुपये के १०,००० शेयर। अधिकृत पूँजी का वह भाग जिसे जनता को चन्दे के लिये निर्गमित (Issue) किया जाता है, **निर्गमित पूँजी** (Issued Capital) कहलाती है, उदाहरण के लिए, एक एक रुपये के ६,००० शेयर। अधिकृत पूँजी का वह भाग जिसे जनता को चन्दे के लिए निर्गमित नहीं किया जाता, **अनिर्गमित पूँजी** (Unissued Capital) कहलाता है, उदाहरण के लिए, एक एक रुपये के ४,००० शेयर। निर्गमित पूँजी का वह भाग जिसके लिए जनता आवेदन पत्र भेजती है, **आवेदित पूँजी** (Subscribed Capital) कहलाती है। जैसे एक एक रुपये के ४,४५० आवेदित पूँजी का वह भाग जिसे सचालकगण कम्पनी का व्यापार करने के लिए मागते है, **आहुत या माँगी हुई पूँजी** (Called up Capital) कहलाती है, उदाहरण के लिए ८ आने प्रति शेयर अर्थात् २,२२५ रु०। शेष राशि (रु० २,२२५) **अनाहुत पूँजी** (Uncalled Capital) कही जाती है। आहुत पूँजी का वह भाग जो कम्पनी को शेयर होल्डरों से नकद मिलता है, **परिदत्त पूँजी** (Paid-up Capital) कहलाता है। उदाहरण के लिए यदि ५० शेयर खरीदने वाला कोई शेयर होल्डर रुपया अदा न कर पावे, तो रु० २,२०० परिदत्त पूँजी होगा।

इसके-अतिरिक्त दो शब्द कार्यशील पूँजी (Working Capital) और अधि-पूँजी (Watered Capital) हैं जिनका अर्थ स्पष्ट कर देना आवश्यक है। स्थिर सम्पत्ति के मूल्य तथा प्रारम्भिक व्यय के भुगतान के बाद जो पूँजी बच रहती है उसे कार्यशील पूँजी कहा जाता है। उस पूँजी को जिसका किसी देखने वाली सम्पत्ति द्वारा प्रतिनिधित्व न हो, अधि-पूँजी कहा जाता है। उदाहरण के लिए, ख्याति (Good-will) खरीदने के लिए दिये गये रुपये को अधि पूँजी की श्रेणी मे परिगणित किया जाता है।

§ ७. शेयर (Shares)

कम्पनी की पूँजी जिन इकाइयों में विभाजित होती है उन्हें **शेयर** (Shares) कहते हैं। कम्पनी के प्रत्येक शेयर की एक अलग सख्या होती है। प्रत्येक सदस्य को एक *प्रमाण पत्र दिया जाता है जिसमें उसके कम्पनी में लिये हुये* शेयरों का जिक्र होता है और जिस पर कम्पनी की सामान्य मुहर (Common Seal) लगी होती है। इसे 'शेयर सर्टीफिकेट' (Share Certificate) कहते हैं और यह उसमे वर्णित शेयरों पर शेयरहोल्डर के स्वामित्व का प्रमाण होता है। एक सदस्य रजिस्टर (Register of Members) भी रक्खा जाता है जिसमे शेयरहोल्डरों और उन्होने जो शेयर खरीदे हैं उनके विषय का आवश्यक ब्यौरा लिखा जाता है।

एक कम्पनी के समस्त शेयर एक ही किस्म के नहीं होते, और न उनके क्रेता को समान अधिकार और सुविधाएँ ही मिलती हैं। सामान्यतया शेयर कई *श्रेणियों में विभाजित होते हैं जिससे कि वे विभिन्न रुचि एवं स्वभाव* के विनियोगकों (Investors) के उपयुक्त हों। शेयरों की निम्नलिखित किस्में होती हैं :

(१) **पूर्वाधिकारी** (Preference) **शेयर**—पूर्वाधिकारी शेयर वे होते हैं जिन्हें लाभांश (Dividends) के एक निश्चित दर पर मिलने का और कभी-कभी कम्पनी के टूटने के समय पूँजी वापस पाने का पूर्वाधिकार (Priority) होता है। पूर्वाधिकारी शेयरहोल्डरों को एक निश्चित दर के लाभांश पाने का

अधिकार होता है और वह लाभाश उन्हें दिये जाने के पश्चात् ही किसी दूसरी श्रेणी के शेयरहोल्डरों को लाभांश दिया जा सकता है। पूर्वाधिकारी शेयर कई प्रकार विभाजित किये जा सकते हैं, जैसे (अ) सचयी और असचयी पूर्वाधिकारी शेयर, (आ) शोध्य और अशोध्य पूर्वाधिकारी शेयर और (इ) सलाभ और अलाभ पूर्वाधिकारी शेयर।

(अ) पूर्वाधिकारी शेयर सचयी (Cumulative) और असचयी (Non cumulative), दो प्रकार के होते हैं। सचयी पूर्वाधिकारी शेयर वे होते हैं जिन पर कि यदि गारन्टी किया हुआ लाभांश किसी वर्ष घोषित न किया जा सके, तो अवशेष लाभांश सचित होता रहता है; और भविष्य में जब भी लाभ हो, तब सबसे पहले उसमें से यह सचित लाभांश अदा करना पड़ता है। असचयी पूर्वाधिकारी शेयरों के साथ अवशेष लाभांश के सचित होने की सुविधा नहीं होती। यदि किसी वर्ष उन पर निश्चित दर से लाभांश घोषित करने के लिये पर्याप्त लाभ नहीं होता, तो अवशेष भाग डूब जाता है।

(आ) शोध्य (Redeemable) पूर्वाधिकारी शेयर उन पूर्वाधिकारी शेयरों को कहते हैं जिनकी पूँजी कम्पनी कुछ समय बाद वापस कर सकती है। पूर्वाधिकारी शेयर का शोधन तभी हो सकता है जब कि वे पूर्ण-परिदत्त (Fully paid-up) हों। उनका शोधन या तो (१) नये शेयर निर्गमित करके हो सकता है या (२) पूँजी शोधन कोष (Capital Redemption Fund) द्वारा। यह कोष कम्पनी ऐसे शेयरों के शोधन के लिए ही एकत्रित करती है। जिन पूर्वाधिकारी शेयरों के शोधन करने का अधिकार कम्पनी को नहीं होता, वे अशोध्य (Non redeemable) पूर्वाधिकारी शेयर कहलाते हैं।

(इ) कुछ समय पूर्व सलाभ पूर्वाधिकारी शेयर (Participating Preference Shares) भी निर्गमित किये जाते थे। उनके क्रेताओं को लाभ में से निश्चित दर पर लाभांश मिलने का तो अधिकार होता ही था; साथ में ही अन्य श्रेणियों के शेयरहोल्डरों को निश्चित दर पर लाभांश मिलने के पश्चात् अवशेष भाग में उन्हें एक भाग पाने का अधिकार और होता था। किन्तु अब ऐसे शेयरों का चलन नहीं रहा।

साधारणतया पूर्वाधिकार शेयर असोध्य-अलाभ तथा असचयी होते हैं।

(२) साधारण (Ordinary) शेयर—वे शेयर होते हैं जिनके क्रेताओं को लाभाश तब मिलता है जब कि अन्य पूर्व व्ययों (charges) और अधिकारों का, जैसा पूर्वाधिकार शेयरों के लिये लाभाश का, भुगतान हो जाता है। साधारणतया ऐसे शेयरों के लिये लाभाश की कोई अधिकतम दर निश्चित नहीं होती। किन्तु यदि स्थगित (Deferred) शेयर निर्गमित किये गये हैं, तो ऐसी सीमा निश्चय करना आवश्यक हो जाता है।

(३) स्थगित (Deferred) शेयर—स्थगित शेयर वे होते हैं जिन्हें पूर्वाधिकारी और साधारण शेयरों को लाभाश दे देने के पश्चात् ही लाभाश मिलता है।

(४) स्थापन (Founders) शेयर—ये वे शेयर होते हैं जो पूर्वाधिकारी, साधारण एव स्थगित शेयरों पर निश्चित दर का लाभाश बँट जाने के पश्चात् अवशेष राशि के आधे या चौथाई भाग के अधिकारी होते हैं। साधारणतया स्थापन शेयर बहुत थोड़े से ही होते हैं और प्रवर्तकों (Promoters) या आश्वासकों (Underwriters) को कम्पनीकी स्थापना सम्बन्धी सेवाओं के उपलक्ष में दिये जाते हैं। जब अतिरिक्त लाभ बहुत अधिक होता है, तब स्थापन शेयरों का मूल्य बहुत बढ़ जाता है।

शेयर, शेयर-अधिपत्र (Share Warrant) और स्टाक (Stock)

शेयर किसी कम्पनी की पूँजी का अविभाज्य इकाई को कहते हैं। इसका हस्तातरण कम्पनी के अन्तर्नियम में दिये हुये तरीके द्वारा ही किया जा सकता है। शेयरहोल्डर का नाम सदस्य रजिस्टर (Register of Members) में लिख लिया जाता है और शेयरों के समस्त हस्तातरण की लिखा पढ़ी इसी रजिस्टर में की जाती है।

यदि किसी कम्पनी के सारे शेयरों से पूर्ण भुगतान मिल चुका है और उसके अन्तर्नियम इस बात की आज्ञा देते हैं तो यह शेयर वारन्ट या अधिपत्र निर्गमित कर सकती है। शेयर अधिपत्र पर कम्पनी की सामान्यमुहर (Common Seal) की छाप रहती है और उसमें लिखा रहता है कि उसका धारक (Bearer)

उसमें लिखित शेयरों का अधिकारी है। शेयर अधिपत्रों का हस्तान्तरण केवल डिलीवरी या सुपुर्दगी द्वारा ही किया जा सकता है, उसके लिए रजिस्ट्री की आवश्यकता नहीं होती। जब किसी सदस्य को शेयर अधिपत्र निर्गमित किया जाता है तो उसका नाम सदस्य-रजिस्टर से काट दिया जाता है। इच्छा होने पर शेयर अधिपत्र दाखिल करके रजिस्ट्री किये हुए शेयर सर्टीफिकेट प्राप्त किये जा सकते हैं।

शेयर के और टुकड़े नहीं किये जा सकते—यह अविभाज्य होता है—और इसके भागों का हस्तान्तरण नहीं किया जा सकता। इस रुकावट को हटाने के लिये यदि अन्तर्नियम आज्ञा देते हों तो शेयरों को स्टाक में बदला जा सकता है। स्टाक में पूंजी शेयरों में न लिखी जाकर रुपयों में लिखी जाती है। स्टाक का टुकड़ों में भी हस्तान्तरण किया जा सकता है।

§ ८. डिबेंचर (Debenture) या ऋण-पत्र

कम्पनी डिबेंचर या ऋण पत्र निर्गमित करके रुपया उधार लेती है। ऋण-पत्र कम्पनी के ऋण का लिखित स्वीकरण है। ऋण-पत्र के प्रकारों के निम्न लिखित अन्तर्भेद जान लेना आवश्यक है·

(१) आधि ऋण-पत्र (Mortgage Debentures) और अनावृत्त या सरल या साधारण ऋण-पत्र—आधि ऋण पत्र भुगतान की प्रतिज्ञा होती है जो कम्पनी की समस्त या कुछ सम्पत्ति की जमानत द्वारा सुरक्षित होती है। इसके विपरीत अनावृत्त या साधारण ऋण-पत्र केवल भुगतान की प्रतिज्ञा मात्र है और यह किसी जमानत द्वारा सुरक्षित नहीं होती।

(२) शोध्य (Redeemable) और अशोध्य (Irredeemable) ऋण पत्र—शोध्य ऋण पत्र वे होते हैं जिनका निश्चित तिथि पर या सूचना देकर भुगतान कर दिया जाय। इसके विपरीत अशोध्य ऋण पत्र का साधारणतया कम्पनी के जीवन काल में भुगतान नहीं किया जाता। उनका भुगतान या तो कम्पनी का दिवाला निकलने पर होता है या ब्याज का भुगतान रुक जाने पर।

(३) धारक ऋण पत्र या रजिस्टर्ड ऋण पत्र—धारक ऋण-पत्र केवल डिलीवरी या सुपुर्दगी द्वारा हस्तांतरित किये जा सकते हैं किन्तु रजिस्टर्ड ऋण पत्रों का हस्तांतरण बिना कम्पनी में रजिस्ट्री कराये नहीं किया जा सकता।

ऋण-पत्र धारक (Debenture-holder) कम्पनी का शेयर होल्डर नहीं होता। वह ऋणदाता (Creditor) होता है और यदि वह प्राधि ऋण-पत्र-धारी नहीं है तो कम्पनी का दिवाला निकलने पर उसकी अवस्था कम्पनी के किसी दूसरे ऋणदाता के समान ही होगी। प्राधि ऋण पत्र-धारक साधारण ऋणदाता से इस बात में भिन्न होता है कि उसका अधिकार जमानत द्वारा सुरक्षित होता है।

§ ९. प्रबन्ध

सचालक या डाइरेक्टर

यह तो स्पष्ट ही है कि कम्पनी का व्यक्तित्व कृत्रिम होने के कारण वह अपना व्यापार स्वत: नहीं सँभाल सकती। प्रबन्ध और नियन्त्रण का अधिकार उसके स्वामियों का होता है। किन्तु कम्पनी के स्वामियों की सख्या कई सौ या उससे अधिक हो सकती है, अत: स्पष्टतया वे सब कम्पनी के प्रबन्ध में भाग नहीं ले सकते। अत. व्यापार का नियन्त्रण करने के लिये वे कुछ सचालक या डाइरेक्टर चुन लेते हैं। प्रत्येक सार्वजनिक कम्पनी में कम से कम तीन सचालक अवश्य होने चाहिये।[11] प्राइवेट कम्पनियों के लिए इस प्रकार का कोई वैधानिक नियन्त्रण नहीं। सचालकगणों को **सचालक-मण्डल** या डाइरेक्टर का बोर्ड कहकर पुकारा जाता है। सचालकों का चुनाव एक निश्चित अवधि के पश्चात् होता है और पुराने डाइरेक्टर को दोबारा चुने जाने का अधिकार होता है। सचालकगण समय-समय पर मिलते हैं और कम्पनी की नीति बनाते हैं। वे कम्पनी के बड़े अफसर भी नियुक्त करते हैं और उन्हें विभिन्न कार्यकारिणी

---

[11] भारतीय कम्पनी विधान, धारा ८३ ए। पहले यह सख्या दो ही थी।

(executive) जिम्मेदारियाँ सौंप देते हैं। कभी कभी किसी डाइरेक्टर को ही मैनेजर बना दिया जाता है, तब उसे मैनेजिङ्ग डाइरेक्टर या प्रबन्ध संचालक कहते हैं।

शेयर होल्डर
(कम्पनी के स्वामी)
|
डाइरेक्टर
चुनते हैं
जो (डाइरेक्टर) कम्पनी का प्रबन्ध करते तथा
|
मैनेजर, मन्त्री. कोषाध्यक्ष
तथा अन्य अफसरों को
नियुक्त करते और उन्हें उत्तरदायित्व सौंपते हैं।
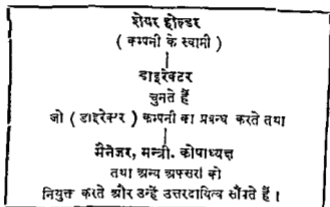
(चार्ट जिसमें कम्पनी का प्रबन्ध चित्रित किया गया है।)

ऊपर के विवरण से स्पष्ट है कि संचालक गण समस्त प्रबन्ध की नींव डालते हैं, और उनके चुनाव का तात्विक महत्व होता है। शेयरहोल्डरों को यह समझ लेना चाहिये कि संचालकों में व्यापार सम्बन्धी कुशलता एव बुद्धिमानी का अनुभव होना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त उन्हें बहुत ईमानदार और सच्चा भी होना चाहिये। अनेक कम्पनियों का इतिहास इस बात का साक्षी है कि थोड़े से भी संचालकों की बेईमानी कम्पनी को खोखला कर डालती है और कालान्तर में उसका पतन हो जाता है। साधारणतया भारतीय प्रवर्तक देश के प्रतिष्ठित उद्योग सम्राटों को अपने संचालक मंडलों में सम्मिलित करने के लिये लालायित रहते हैं। किन्तु ऐसे व्यक्तियों के पास इतना काम होता है कि वे कम्पनी को तनिक भी समय नहीं दे पाते और उनसे कम्पनी को कोई लाभ नहीं होता। भारत में एक और बुरी प्रथा यह है कि सुविख्यात कवियों, राजनीतिज्ञों आदि को डाइरेक्टर बनाया जाता है जिनको व्यापार का कुछ भी अनुभव नहीं होता।

संचालकों को यह समझ लेना चाहिये की वे शेयर होल्डरों के एजेंट और ट्रस्टी हैं और उन्हें और अपनी योग्यतानुसार सच्चे हृदय से कम्पनी की सेवा करनी चाहिये। उन्हें पूर्ण विश्वास से काम करना चाहिये और विश्वासघात करके कम्पनी के मूल्य पर स्वयं लाभ नहीं उठाना चाहिये।

मैनेजिंग एजेन्सी प्रथा

हमारे देश में मैनेजिंग एजेंसी प्रथा काफी प्रचलित है। इस प्रथा के अनुसार एक कम्पनी का प्रबन्ध और नियन्त्रण एक दूसरी कम्पनी, जिसे मैनेजिंग एजेंट कहते हैं, करती है। योरोप या अमेरिका में प्रबन्ध कार्य मैनेजर या मैनेजिंग डाइरेक्टर द्वारा सम्पादित होता है। किन्तु भारत में यह एक दूसरी कम्पनी को सौंप दिया जाता है। मैनेजिंग एजेंसी की प्रथा विशेषतया भारतीय है और अन्य देशों में यह नहीं पाई जाती।

संयुक्त पूँजी की कम्पनियों को भारत में पर्याप्त पूँजी एकत्रित करने में कठिनाई होती थी, इसी कठिनाई ने मैनेजिंग एजेंसी प्रथा को जन्म दिया। कुछ काल पूर्व एक नई कम्पना को शेयर बेचने में बहुत कठिनता होती थी। ऐसी दशा में एक औरकम्पनी जनता को सारे शेयर बेचने का ठेका इस शर्त पर लेने लगी कि वह उस कम्पनी की प्रबन्धकर्ता निश्चित पुरस्कार पर बना दी जायगी। कभी कभी विदेशी कम्पनियाँ एक विदेशी को मैनेजर बना देती थीं, किन्तु जब वह भारत को छोड़कर अपने देश चला जाता था और दूसरा विदेशी मैनेजर उसका स्थान लेता तो प्रबन्ध में बाधा होती थी, क्योंकि दूसरे मैनेजर को कम्पनी का काम समझने में समय लगता था। ऐसी दशा में मैनेजिंग एजेंसी को प्रबन्ध सुपुर्द करने में बहुत सुविधा होती थी।

हमारे देश में मैनेजिंग एजेंसी प्रथा ने खूब उन्नति की है। आजकल हमारे देश में सबसे बड़े मैनेजिंग एजेंट एन्ड्रयू यूल एण्ड कम्पनी (Andrew Yule & Co), मार्टिन एण्ड कम्पनी (Martin & Co) और बर्ड एण्ड कम्पनी (Bird & Co) हैं।

इस प्रथा ने कम्पनियों को स्थिर और कार्यशील पूँजी प्रदान करके और

निपुण प्रबन्धकर्त्ताओं की दुर्लभता के काल में निपुण प्रबन्ध प्रदान करके हमारे देश में सयुक्त पूँजी की कम्पनियों को उन्नति में बहुमूल्य सहयोग दिया है।

किंतु अब अवस्था बदल चुकी है। अब पूँजी लचीली नहीं रही; और यदि कम्पनी अच्छी है तो उसके शेयर अब आसानी से बिक जाते हैं। देश में प्रबन्ध-सम्बन्धी कुशलता की भी उन्नति हो चुकी है और हो रही है। साथ ही साथ इस प्रथा के दोषों ने अब भयानक रूप धारण कर लिया है। (१) वे कम्पनी पर अत्यधिक नियन्त्रण रखते हैं और उस पर एकाधिकार (monopoly) स्थापित कर लेते हैं। डाइरेक्टर और शेयर होल्डर उनके सामने अशक्त हो जाते हैं। (२) वे बहुत अधिक पुरस्कार लेते हैं और उनका प्रबन्ध बहुत महँगा पड़ता है। (३) वे एक कम्पनी का रुपया उसके हित के लिये न लगा कर दूसरी कम्पनियों में, उन पर अधिकार प्राप्त करने के लिए, लगा देते हैं। (४) उनमें से बहुत से सट्टेबाजी करते हैं और हानि होने पर उसे कम्पनी के नाम पर कर देते हैं। (५) अच्छे पुरस्कार को सुयोग्य व्यक्तियों को न देकर अपने मित्रों और सम्बंधियों को दे देते हैं। (६) उनमे से बहुत से काम की अधिकता के कारण व्यापार में दिलचस्पी लेना बन्द कर देते है और उनका प्रबन्ध अकुशल हो जाता है। अतः अब यह माना जाने लगा है कि इनका प्रबन्ध दोषयुक्त होता है।

अतः सन् १९३६ में कम्पनी विधान मे इस दृष्टिकोण को सामने रख कर मैनेजिंग एजेन्सी पर कई प्रतिबंध लगाये गये जो इस प्रकार हैं: (१) मैनेजिंग एजेन्ट २० वर्ष से अधिक के लिए नियुक्त नहीं किये जा सकते। (२) उनकी नियुक्ति शेयर होल्डरों की अनुमति के बिना नहीं हो सकती। (३) उनका पुरस्कार कार्यालय-व्यय तथा शुद्ध लाभ के प्रतिशत के ही रूप में हो सकता है। (४) उनको कोई ऋण नहीं दिया जा सकता। (५) कम्पनी का रुपया मैनेजिंग एजेंट किसी दूसरे कम्पनी को जिसका भी वह मैनेजिंग एजेन्ट है ऋण के रूप में नहीं दे सकता। (६) वह डिबेंचर निर्गमित नहीं कर सकता। किन्तु इस प्रकार के नियंत्रण का कोई विशेष लाभ नहीं हुआ है और अब अधिक नियन्त्रण लगाने की बात सोची जा रही है।

§ १०. निस्तार या समापन (Winding up or Liquidation)

संयुक्त पूँजी की कम्पनी के अस्तित्व की समाप्ति करने की रीति ही निस्तार या समापन कहलाती है। कम्पनी एक वैधानिक व्यक्ति मानी जाती है। इसे कानून सृजित करता है; और कानून के द्वारा ही इसका अन्त भी होता है। कम्पनी का निस्तार या समापन तीन प्रकार से किया जा सकता है : (१) न्यायालय द्वारा निस्तार (Liquidation), या (२) स्वेच्छापूर्वक निस्तार, या (३) न्यायालय के नियन्त्रण में निस्तार।

जब कम्पनी स्वयं ही समापन का सकल्प (Resolution) कर लेती है, तब समापन स्वेच्छापूर्वक (voluntary) होता है और स्वेच्छा समापन कहलाता है। यदि किसी न्यायालय में कम्पनी स्वयं आवेदन पत्र दे या कम्पनी के ऋणदाता आवेदन पत्र दें या उसके शेयरहोल्डर आवेदन-पत्र दें और न्यायालय को सतुष्ट कर दें कि कम्पनी का समापन होना ही चाहिये, तब न्यायालय कम्पनी का समापन करा सकता है। इसे न्यायालय द्वारा निस्तार या समापन कहा जाता है। न्यायालय के नियन्त्रण में होने वाला समापन उपरोक्त दोनों प्रकार के समापन के मध्य में स्थित है।

समापन का रूप चाहे जो हो, इसके लिये एक निस्तारक (Liquidator) की नियुक्ति आवश्यक होती है। निस्तारक कम्पनी की सम्पत्ति का शासन करता है, सम्पत्ति को ऋणदाताओं के दावों का उचित क्रम में भुगतान के लिये प्रयुक्त करता है, और शेयरहोल्डरों में उनके सापेक्षिक अधिकारों के हिसाब से रुपया विभाजित करता है।

निस्तारक कम्पनी के विगत और वर्तमान शेयरहोल्डरों की, जिन्होंने अपने शेयरों का पूरा-पूरा रुपया अदा नहीं किया, दो सूचियाँ बनाता है। पहली सूची में उन सब शेयर-होल्डरों को सम्मिलित किया जाता है जिनके पास कम्पनी के शेयर हैं और जिन्होंने अभी उन शेयरों का पूरा रुपया अदा नहीं किया। दूसरी सूची में उन भूतपूर्व सदस्यों को शामिल किया जाता है जिनकी सदस्यता समापन से एक वर्ष के अन्दर ही अन्दर समाप्त हुई है। दूसरी सूची वाले

व्यक्तियों से रुपया तभी लिया जा सकता है जब कि पहली सूची वाले व्यक्तियों से जितनी भी वसूली हो सकती है वह कर ली गई हो और वह कम्पनी क कुल देनदारी के भुगतान के लिये अपर्याप्त हो; किन्तु वे उन देनदारियों के लिये उत्तरदायी नहीं ठहराये जा सकते जो उनकी सदस्यता के समाप्ति के पश्चात् हुई हैं।

निस्तारक, निस्तार व्यय (Expenses of Liquidation) को वसूल करने के पश्चात् कम्पनी की सम्पत्ति को निम्नलिखित क्रम मे प्रयुक्त करता है : (१) सुरक्षित (Secured) ऋणदाता; (२) भुगतान के सम्बध में पूर्वाधिकारी ऋणदाता; (३) अरक्षित (Unsecured) ऋणदाता, (४) अपने-अपने अधिकारानुसार विभिन्न श्रेणी के शेयरहोल्डर।

§ ११. गुण और दोष

गुण

१) सयुक्त पूँजी की कम्पनी अधिक मात्रा मे पूँजी एकत्रित कर सकती है। इसका कारण यह है कि शेयरहोल्डरों की संख्या (सार्वजनिक कम्पनी में) असीमित हो सकती है, उनका उत्तरदायित्व परिमित होता है और असतुष्ट होने पर या रुपये की आवश्यकता होने पर वे अपने शेयर बेच या हस्तान्तरित कर सकते हैं।

(२) कम्पनी को कुशल प्रबन्ध की सुविधा मिलती है। परिमित उत्तरदायित्व का विचार शासन की कुशलता एव परिवर्तनशीलता में सहायक होता है। क्योंकि सचालक होने के लिये थोड़े से शेयर खरीदना आवश्यक होता है, अतः कभी कभी सम्मति लेने के लिये अनुभवशील व्यापारियों और उद्योगपतियों को सचालक बनाया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, सचालक मण्डल मे आवश्यकतानुसार आसानी से परिवर्तन भी किया जा सकता है।

(३) कम्पनी की स्थिरता बहुत होती है। इसका अस्तित्व वस्तुतः स्थायी होता है क्योंकि इसका स्वामित्व बिना सगठन परिवर्तित किये हुये बदला जा सकता है। किसी शेयरहोल्डर की मृत्यु या उसका दिवाला निकल जाने का कम्पनी पर कोई प्रभाव नहीं होता।

(४) कम्पनी के पास विशेषज्ञों (Specialists) और विशिष्टों (Technicians) को नौकर रखने के साधन होते हैं; अत. उसे श्रमविभाजन तथा अन्तरकरण (differentiation) में आसानी होती है।

दोष

(१) कम्पनी का प्रबन्ध परोक्ष और प्रदत्त (delegated) होता है। अत: काम करने की प्रेरणा (incentive) तीक्ष्ण नहीं होती। हमने कम्पनियों के कुप्रबन्ध में ऊपर जो कुछ कहा है, वह इस कथन की पुष्टि करता है।

(२) कम्पनियों का प्रबन्ध इतने व्यक्तियों के हाथ में रहता है कि उनके व्यापारिक भेदों की रक्षा कठिनता से ही हो सकती है। उनकी व्यापारिक योजनाओं और वास्तविक आर्थिक अवस्था का भेद खुल जाने का भय सदैव लगा रहता है।

(३) कम्पनी का चलाना कठिन होता है, इसके लिये लम्बी और श्रमयुक्त वैधानिक आवश्यकताएँ संतुष्ट करनी पड़ती हैं और काफी व्यय भी करना पड़ता है।

(४) कम्पनी अपने स्मारक पत्र (Memorandum) में वर्णित व्यापार के अतिरिक्त किसी दूसरे व्यापार को हाथ नहीं लगा सकती, अतः यह बहुत अपरिवर्तनशील होता है।

अध्याय ३९

संयुक्त पूँजी की कम्पनी (३) : सेक्रेटरी का काम

§ १२. सेक्रेटरी का पद और काम

सेक्रटरी का पद

परिभाषा—कम्पनी के सेक्रेटरी का पद बहुत महत्व का होता है। कम्पनी के सेक्रेटरी ऐसे व्यक्ति को कहते हैं जो कम्पनी के विधान तथा उसकी क्रियाओं का विशेषज्ञ होता है, और जो कम्पनी का शासन सबन्धी मामलों में प्रधान अफसर होता है।

नियुक्ति—हर कम्पनी का सेक्रेटरी होना अनिवार्य नहीं। विधान सेक्रेटरी की नियुक्ति पर बल नहीं देता, किन्तु वह सेक्रेटरी को कम्पनी के अफसर की हैसियत में मान्यता देता है।* सेक्रेटरी की नियुक्ति साधारणतया कम्पनी की नियमावली (Articles of Association) के अनुकूल होती है। नियमावली में सेक्रेटरी की नियुक्ति की व्यवस्था कर ली जाती है, और कभी कभी पहले सेक्रेटरी का नाम भी दे दिया जाता है। पर सेक्रेटरी इस बूते पर अपनी नियुक्ति नहीं करा सकता। उसकी नियुक्ति एक प्रसंविदे (Contract) के अनुसार होती है जो उसके और कम्पनी के बीच में होता है। सेक्रेटरी केवल इस प्रसंविदे की शर्तों पर ही जोर दे सकता है। नियमावली के वाक्य केवल डायरेक्टरों तथा शेयरहोल्डरों के लिये हैं।

सेक्रेटरी के कार्य का क्षेत्र

व्यापार का काम तीन भागों में बाँटा जा सकता है (अ) व्यापार

---

* देखिये Sec 2 (II), *Indian Companies Act.*

की सामान्य नीति निर्धारित करना, (आ) निर्धारित नीति के व्यापारिक पहलू का कार्यान्वित करना, (इ) निर्धारित नीति के शासन या कार्यालय सम्बधी पहलू को कार्यान्वित करना। व्यापार की सामान्य नीति डायरेक्टर निर्धारित करते हैं, व्यापार सम्बन्धी आदेशों का पालन कारखाने या दूकान का मैनेजर करता है, शासन या कार्यालय सम्बन्धी पूरा काम सेक्रेटरी करता है। मान लीजिये डायरेक्टर यह तय करते हैं कि एक नई मशीन खरीदकर १०० जोड़ी जूते प्रति दिन और बनाये जायें और इसके लिये १०,०००) की पूंजी और एकत्रित की जाय, तो कारखाने का मैनेजर तो मशीन खरीदने और जूतों की उत्पत्ति बढ़ाने का काम करेगा, और सेक्रेटरी पूंजी एकत्रित करने, मशीनों के सूचीपत्र आदि मँगवाने का काम करेगा।

सेक्रेटरी के काम

सेक्रेटरी समस्त कार्यालय या शासन सम्बन्धी कामों का जिम्मेदार होता है। उसका काम कम्पनी की स्थापना के विचार से शुरू होता है और कम्पनी के निस्तार के बाद ही समाप्त होता है। उसके कामों को निम्नलिखित पाँच भागों में बाँटा जा सकता है

(१) रजिस्ट्रार के यहाँ प्रलेख (documents) भेजना
(२) विभिन्न मीटिंग के सम्बन्ध का सारा काम करना,
(३) हिसाब की बहियाँ (Books of Accounts) रखना,
(४) कम्पनी के पत्र-व्यवहार की व्यवस्था करना, तथा
(५) शासन तथा डिबेंचर सम्बन्धी सब काम करना।

(१) रजिस्ट्रार के यहाँ प्रलेख भेजना—सेक्रेटरी को संयुक्त पूँजी की कम्पनियों के रजिस्ट्रार के यहाँ कई प्रकार के प्रलेख भेजने पड़ते हैं। जो प्रलेख स्थापना के सम्बन्ध में भेजे जाते हैं, उनका वर्णन अध्याय २७ में किया जा चुका है। इनके अतिरिक्त कुछ प्रलेख प्रति वर्ष भेजने पड़ते हैं। खास खास घटनाओं के घटित होने पर भी १५ दिन या महीने भर के अन्दर कुछ खास प्रलेख भेजने पड़ते हैं। सेक्रेटरी को इनका पूरा ज्ञान होना चाहिये और सब प्रलेख समय के अन्दर भेज देने चाहिये। अन्यथा दण्ड देना पड़ता है।

(२) मीटिंग सम्बन्धी काम करना—सेक्रेटरी को हर मीटिंग के हर सम्बन्ध में सारा प्रबन्ध करना पड़ता है। वैधानिक मीटिंग, डाइरेक्टरों की मीटिंग तथा शेयरहोल्डरों की मीटिंग के सम्बध का पूरा काम सेक्रेटरी की ही जिम्मेदारी है। इनका वर्णन नीचे § १३ में किया गया है।

(३) हिसाब की बहियाँ रखना—कम्पनी को विधान के अनुसार कई पुस्तके और बहीखाते रखने पड़ते हैं। सेक्रेटरी को यह भी देखना अनिवार्य है कि ये पुस्तके और बहीखाते उचित रीति से रक्खे जा रहे हैं। इनका वर्णन नीचे § १४ में किया गया है।

(४) कम्पनी के पत्र व्यवहार की व्यवस्था करना—कम्पनी समस्त पत्र व्यवहार सुचारु रूप से हो, इसकी भी पूरी व्यवस्था सेक्रेटरी ही करता है और यह भी उसी की जिम्मेदारी है।

(५) शेयर तथा डिबेंचर सम्बधी काम करना—सेक्रेटरी को शेयर तथा डिबेंचर के सम्बन्ध में सब काम करने पड़ते हैं। ये काम निम्न है

(अ) प्रास्पेक्टस या प्रविवरण निर्गमित करना,

(आ) शेयर के आवेदन पत्र स्वीकार करना और बॅटनी (allotment) का काम देखना,

(इ) शेयर के प्रमाण पत्र भेजना,

(ई) शेयरों के हस्तांतरण (transfer) सम्बन्धी काम करना,

(उ) लाभांश (dividend) के भुगतान का काम करना, और

(ऊ) डिबेंचर या ऋण पत्र के सम्बन्ध में इसी प्रकार काम करना।

सेक्रेटरी का डायरेक्टरों से सम्बन्ध

सेक्रेटरी का पद बहुत ऊँचा है और उसको बहुत से अधिकार भी दिये जाते हैं। किन्तु उसे यह न समझना चाहिये कि वह डायरेक्टरों के ऊपर है, या डायरेक्टरों का वह विरोध कर सकता है, या उनकी आज्ञा का उल्लंघन कर सकता है। ऐसा सेक्रेटरी अधिक समय नहीं टिक सकता। वास्तव में, सेक्रेटरी कम्पनी का नौकर होता है, और डायरेक्टर कम्पनी के मालिक होते हैं। इसलिये सेक्रेटरी को डायरेक्टरों की आज्ञा का यथोचित पालन करना चाहिये। कम्पनी

की नीति का निर्धारण डायरेक्टर करते हैं; शासन सम्बन्धी आदेशों का पालन करना सेक्रेटरी का काम है।

किन्तु कानून ने डायरेक्टरों को कुछ काम करने और कुछ काम न करने का आयोजन किया है। सेक्रेटरी का कर्त्तव्य है कि डायरेक्टरों को कानून के खिलाफ काम करने से रोके। कभी-कभी गैर कानूनी काम होने पर सेक्रेटरी भी दण्ड का भागी होता है। अतः उसे इस दिशा में डायरेक्टरों को उचित परामर्श देते रहना चाहिये। उसे उनका परामर्शदाता कहना अधिक उपयुक्त होगा।

उसका वैधानिक उत्तरदायित्व

कानून में सेक्रेटरी के अनुचित काम करने पर दण्ड लगाने का भी आयोजन किया गया है। यदि वह कोई पुस्तक या कागज नष्ट कर दे, फाड़ दे या उस पर झूठा लेख लिखे या उसे गायब कर दे ताकि वह किसी व्यक्ति को धोखा दे सके या उसे ठग सके, तो सेक्रेटरी को ७ साल तक की सजा हो सकती है और साथ में उस पर जुर्माना भी हो सकता है। यदि सेक्रेटरी किसी प्रलेख, प्रमाण-पत्र, बैलेंस शीट में जान-बूझ कर झूठा कथन करे, तो उसे ३ साल तक की सजा और उस पर जुर्माना हो सकता है।

§ १३. मीटिंग और प्रस्ताव

कम्पनी का मैनेजिंग एजेन्ट या मैनेजर कम्पनी का प्रबन्ध संचालक मण्डल (Board of Directors) की देख-रेख में करता है। किन्तु कम्पनी के वास्तविक स्वामी शेयरहोल्डर होते हैं। संचालक मंडल इन्हीं शेयरहोल्डरों से ही शक्ति और अधिकार प्राप्त करते हैं। अतः यह आवश्यक है कि समय-समय पर शेयरहोल्डरों की मीटिंग होती रहे और वे यह देखते रहें कि कम्पनी का काम किस प्रकार चल रहा है। हम नीचे शेयरहोल्डरों की मीटिंग पर कुछ लिखेंगे।

वैधानिक (Statutory) मीटिंग

भारतीय कम्पनी विधान के अन्तर्गत यह आवश्यक है कि जिस समय से कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने का अधिकार प्राप्त हो जाय, तब से एक महीने,

के बाद, किन्तु छः महीने के अन्दर, शेयरहोल्डरों की एक मीटिंग हो। उसे "वैधानिक मीटिंग" कहते हैं। इसमें कम्पनी की स्थापना पर विचार किया जाता है जिसमें पूँजी का एकत्रित करना शामिल है। सब आवश्यक सूचना को देने के लिये एक रिपोर्ट पहले से ही बाँट दी जाती है और वैधानिक मीटिंग में वाद-विवाद का यही साधारणतया आधार होती है। इस रिपोर्ट को "वैधानिक रिपोर्ट" कहते हैं। ऐसी मीटिंग करने का प्रतिबन्ध केवल सार्वजनिक कम्पनी पर ही लागू होता है।

वैधानिक (Statutory) रिपोर्ट

वैधानिक मीटिंग में आने वाले शेयरहोल्डरों को कम्पनी की स्थापना सम्बन्धी समस्त बातें बताने के लिये एक रिपोर्ट तैयार की जाती है, जिसे वैधानिक रिपोर्ट कहते हैं। वैधानिक मिटिंग होने के २१ दिन पहले ही यह रिपोर्ट शेयरहोल्डरों के पास भेज देनी चाहिए और रजिस्ट्रार के पास भी फाइल कर देनी चाहिये। इस रिपोर्ट में अन्य बातों के अलावा निम्नलिखित बातें दी होती हैं :

(१) बँटवारे किये गये शेयरों की संख्या और बँटवारे का ढङ्ग।

(२) बँटवार के सम्बन्ध में आये हुए रुपये की कुल रकम।

(३) आमदनी और खर्च का संक्षिप्त ब्यौरा।

(४) संचालक, मैनेजर, सेक्रेटरी आदि के नाम और पते।

(५) आश्वासन (underwriting) के प्रसंविदे कहाँ तक पूरे हुए।

सामान्य (General) मीटिंग

वैधानिक मीटिंग के अतिरिक्त शेयरहोल्डरों की अन्य मीटिंग को "सामान्य मीटिंग" कहा जाता है। इनके दो भाग होते हैं : (अ) साधारण (ordinary) सामान्य मीटिंग, और (आ) असाधारण (extraordinary) सामान्य मीटिंग।

बैलेन्स शीट (या चिट्ठा) पास करने, संचालक चुनने, लाभांश घोषित करने आदि के लिए जो मीटिंग बुलाई जाती है, उसे "साधारण सामान्य

मीटिङ्ग" कहते हैं। अन्य सामान्य मीटिङ्गें "असाधारण सामान्य मीटिङ्ग" कही जाती है।

साधारण सामान्य मीटिङ्ग का प्रत्येक वर्ष में एक बार होना अनिवार्य है। किन्तु पिछली साधारण मीटिङ्ग से १५ महीने के अन्दर इसका होना आवश्यक है। असाधारण मीटिङ्ग किसी विशेष काम के लिए की जाती है और यह किसी भी समय बुलाई जा सकती है। आवेदित (Subscribed) पूँजी के दसवें भाग के स्वामी असाधारण मीटिङ्ग बुलवा सकते हैं।

प्रस्ताव (Resolutions)

सामान्य मीटिङ्ग में तीन प्रकार के प्रस्ताव पास किये जा सकते हैं : (अ) साधारण, (आ) असाधारण और (इ) विशेष।

(अ) **साधारण प्रस्ताव** वह होता है जो साधारण बहुमत (majority) द्वारा पास हो।

(आ) **असाधारण प्रस्ताव** उपस्थित सदस्यों के तीन चौथाई बहुमत से पास होना चाहिये, और मीटिङ्ग की सूचना कम से कम दो सप्ताह पूर्व भेजनी चाहिये और उसमें यह बात स्पष्ट होनी चाहिये कि प्रस्ताव असाधारण प्रस्ताव के रूप में रक्खा जायगा।

(इ) **विशेष प्रस्ताव** उपस्थित सदस्यों के तीन-चौथाई बहुमत से पास होना चाहिये। मीटिङ्ग की सूचना में यह स्पष्ट होना चाहिये कि प्रस्ताव विशेष प्रस्ताव के रूप में रक्खा जायगा, और इस प्रस्ताव की सूचना तीन सप्ताह पूर्व देनी चाहिये। (साधारणतया मीटिङ्ग होने की सूचना कम से कम दो सप्ताह पूर्व ही भेजना अनिवार्य है।)

§ १४. वैधानिक पुस्तकें और बहीखाते

वैधानिक पुस्तकें

प्रत्येक लिमिटेड कम्पनी को निम्नलिखित पुस्तकें रखना अनिवार्य है :

(१) **सदस्य रजिस्टर**—सदस्य-रजिस्टर में सदस्यों के नाम, पते, पेशे, प्रत्येक सदस्य के पास होने वाले शेयरों की संख्या, रजिस्टर में शेयर-होल्डर

की हैसियत में नाम दर्ज होने की तारीख और शेयरहोल्डरों की सदस्यता समाप्त होने की तारीख लिखे जाते हैं। सदस्य रजिस्टर सबसे महत्वपूर्ण वैधानिक पुस्तक है और इसके लिखने मे विशेष सावधानी से काम लेना चाहिये।

(२) सदस्य अनुक्रमणिका (Index of Members)—प्रत्येक सार्वजनिक कम्पनी को अपने सदस्यों के नाम की एक अनुक्रमणिका रखनी पड़ती है जिससे कि प्रत्येक का ब्यौरा रजिस्टर में आसानी से खोला जा सके।

(३) सदस्यों की वार्षिक सूची और सारांश (Annual List of Members and Summary)—इस सूची में ऐसे व्यक्तियों के जो वर्ष की प्रथम साधारण सामान्य मीटिङ्ग (Ordinary General Meeting) के दिन कम्पनी के सदस्य थे, और उन व्यक्तियों के भी जिनकी उस मीटिङ्ग के पश्चात् सदस्यता समाप्त हुई, मुख्य मुख्य बातो के ब्यौरे दिये होते हैं। इसमें शेयर पूँजी का साराश (Summary) भी दिया होता है और नकद रुपयों के बदले दिये जाने वाले शेयरों और अन्य किसी प्रतिफल के बदले दिये जाने वाले शेयरो को अलग-अलग दिखाया जाता है।

(४) कार्य-विवरण पुस्तक (Minutes Book)—विधान के अनुसार सामान्य मीटिंग (General Meeting) और सचालक मडल की मीटिंग का पूरा पूरा कार्य विवरण एक कार्य-विवरण पुस्तक में लिखना आवश्यक है। साधारणतया सचालक-मण्डल की मीटिंग के लिये एक अलग पुस्तक रखी जाती है और शेयरहोल्डरो की मीटिंग के लिये अलग।

(५) सचालकों और मैनेजरो का रजिस्टर – प्रत्येक कम्पनी को सचालकों, मैनेजरों और मैनेजिंग एजेन्टों का रजिस्टर रखना अनिवार्य है जिसमें उनके नाम, घर के पते, जाति आदि लिखने पड़ते हैं। इसकी एक नकल रजिस्ट्रार के यहाँ फाइल करनी पड़ती है। यह रजिस्टर आफिस के समय किसी भी व्यक्ति के जाँच के लिये खुला रहता है : सदस्य को उसे बिना किसी फीस के देखने का अधिकार होता है और अन्य व्यक्तियों को एक रुपये तक की फीस लेकर उसे दिखाना अनिवार्य है।

(६) प्रसविदों (Contracts) का रजिस्टर—प्रत्येक कम्पनी को एक प्रसविदों का रजिस्टर रखना चाहिए जिसमें उन सब प्रसविदों या राजीनामों का पूरा विवरण देना चाहिए जिसमें कि किसी संचालक का, प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से, कोई हित है।

(७) प्राधि रजिस्टर (Register of Mortgages and Charges — प्रत्येक कम्पनी को एक प्राधि रजिस्टर रखना पड़ता है जिसमें कम्पनी की सम्पत्ति सम्बन्धी समस्त प्राधियों (Mortgages) के ब्यौरे लिखने होते हैं। इसमें प्राधित सम्पत्ति का संक्षिप्त वर्णन, प्राधि की राशि, प्राधिमानों (Mortgagees) के नाम आदि दिये होते हैं। यह रजिस्टर कम्पनी के ऋण दाताओं के लिये बहुत महत्वपूर्ण होता है क्योंकि इससे उन्हें यह पता चल जाता है कि कम्पनी की अप्राधित सम्पत्ति कितनी है और कम्पनी को कितना ऋण देना ठीक होगा।

(८) ऋण पत्र धारकों (Debenture holders) का रजिस्टर।

परीक्षा प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१ सार्वजनिक सीमित उत्तरदायित्व वाली कम्पनी आप कैसे बनावेंगे ? समझाकर लिखिये। (उ० प्र०, १९५५)

२ प्रविवरण पत्र (Prospectus) से क्या समझते हैं ? उसमें किन किन बातों का लेखा होता है, और क्यों ? (उ० प्र० १९५४)

३ प्रविवरण पत्र (Prospectus) किसे कहते हैं ? कम्पनी के जीवन में इस पत्र का क्या महत्व है ? (१९५४)

४ अंश किसे कहते हैं ? अंशों की बँटनी (Issue of Shares) पर एक निबंध लिखिये। (१९५४)

५ सार्वजनिक संयुक्त पूँजी की कम्पनी के व्यापार आरम्भ करने के प्रमाण।

पत्र से आप क्या आशय समझते हैं ? यह क्यों और कैसे प्राप्त किया जाता है ? (उत्तर प्रदेश, १६५३)

६. संक्षिप्त रूप में वर्णन कीजिये कि सार्वजनिक संयुक्त पूँजी की कम्पनी की स्थापना की रीति क्या है। इस कार्य के लिए कम्पनी के रजिस्ट्रार के यहाँ कौन-कौन से मुख्य पत्र प्रस्तुत करने पड़ते हैं ? (उत्तर प्रदेश, १६५२)

७ संयुक्त पूँजी की कम्पनी के अन्तर्नियम (Articles) और स्मारक-पत्र (Memorandum of Association) से आप क्या समझते हैं ? इनसे, क्या काम चलता है ? पूरी तरह समझा कर लिखिए। (यू० पी०, १६५१)

८. कम्पनी के निस्तार (liquidation) का क्या अर्थ है ? इसकी क्या किस्म होती हैं ? संक्षेप में बताइये। (यू० पी० १६५१)

६. संयुक्त पूँजी की कम्पनी के मुकाबले में साझे के गुण और दोषों की विवेचना कीजिये। (यू० पी०, १६४७)

१०. प्राइवेट परिमित लिमिटेड कम्पनी क्या होती है ? साझेदारी तथा सार्वजनिक कम्पनी के मुकाबले इनके क्या लाभ होते हैं ? (यू० पी०,।१६४६)

११. निम्नलिखित में भेद स्पष्ट कीजिये : (अ) अन्तर्नियम तथा स्मारक पत्र में; और (आ) शेयर तथा डिबेंचर में। (यू० पी०, १६४६)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

१२ (अ) संयुक्त पूँजी की कम्पनियाँ जिन शेयरों को निर्गमित करती हैं, उनकी विभिन्न किस्मों की विवेचना कीजिये। इस वर्गीकरण का क्या उद्देश्य होता है ?

(आ) कम्पनी का स्मारक-पत्र (Memorandum of Association) क्या होता है ? (१६५३)

१३. एक सार्वजनिक परिमित कम्पनी के निर्माण करने के लिये जिस रीति का अनुगमन करना है, उसे समझा कर लिखिये। (१६५३)

१४. मैनेजिंग एजेन्सी प्रथा के गुण और दोषों की विवेचना कीजिए। वर्तमान विधान के अंतर्गत मैनेजिङ्ग एजेन्सी की क्या अवस्था है ? (१६५३)

१५. भारत में संयुक्त पूँजी की कम्पनी का प्रबन्ध किस प्रकार किया जाता है ? मैनेजिंग एजेंट क्या होते हैं ? उनमें कार्यों तथा उनके महत्व की विवेचना कीजिये। (१९५२)

१६. संयुक्त पूँजी की कम्पनी के समापन (winding up) की रीति संक्षेप में लिखिये। (१९५२)

१७. प्राइवेट कम्पनी और सार्वजनिक कम्पनी के भेद बताइये। सार्वजनिक प्राइवेट कम्पनी के लाभ और उनको प्राप्त छूटें (exemptions) की विवेचना कीजिए। (१९५२)

१८. प्रबन्ध और नियंत्रण (Control) के दृष्टिकोणों से संयुक्त पूँजी की कम्पनी साझे से किस प्रकार भिन्न होती है ? (राजपूताना, १९५१)

१९. संयुक्त पूँजी की कम्पनी का मैनेजिङ्ग एजेंसी द्वारा प्रबन्ध कराने के लाभ और हानियाँ बताइये। वर्तमान विधान के अन्तर्गत मैनेजिंग एजेंटों की अवस्था क्या है ? (राजपूताना, १९५०)

२०. पाँच साझेदार अपने फर्म को सीमित कम्पनी में बदल देना चाहते हैं। बताइये की प्रत्येक दशा में उन्हें क्या करना होगा (अ) जब वे किसी बाहरी व्यक्ति का न लेना चाहें, (आ) जब वे प्रस्तावित कम्पनी के शेयर खरीदने के लिए जनता को आमन्त्रित करना चाहें ? (राजपूताना, १९५०)

२१. कम्पनी के स्मारक पत्र तथा अन्तर्नियम में भेद बताइये। (राजपूताना, १९४९)

२२. आप पश्चिमी उत्तर प्रदेश में चीनी का कारखाना खोलने के लिए सार्वजनिक परिमित कम्पनी स्थापित करना चाहते हैं। इस सम्बन्ध मे आपको क्या प्रारम्भिक कार्य करने पड़ेंगे ? कारखाने के लिये आवश्यक पूँजी आप किस प्रकार एकत्रित करेंगे ? (राजपूताना, १९४९)

२३. किसी कम्पनी की शीघ्र ही रजिस्ट्री होने जा रही है और आपको उसका स्मारक-पत्र तैयार करना है। बताइये कि इस रुक्के में किन-किन बातों

शामिल किया जायगा। स्मारक-पत्र के उद्देश्य वाक्य में किस प्रकार परिवर्तन *किया जा सकता है ?* (*राजपूताना*, १९४५)

पटना, इन्टर कामर्स

२५· *कम्पनी के प्रविवरण* (Prospectus) *का क्या महत्त्व होता है?* इसमें क्या क्या दिया रहता है? (पटना, १९५४)

२६ सार्वजनिक परिमित कम्पनी की मीटिङ्ग मे किस प्रकार के प्रस्ताव पास किये जाते हैं? उनके प्रधान लक्षण बताइये (पटना, १९५४)

२६अ. सार्वजनिक कम्पनी की अपेक्षा प्राइवेट कम्पनी के प्रधान लक्षण *तथा सुविधाएँ बताइये। व्यक्तिगत कम्पनी साझेदारी से किस प्रकार भिन्न होती* है? (पटना, १९५·)

२७ प्राइवेट परिमित कम्पनी क्या होती है, और यह सार्वजनिक परिमित कम्पनी से किस प्रकार भिन्न होती है? यदि चार व्यक्ति मिल कर फुटकर विक्रय स्टोर खोलना चाहें तो उन्हें किस प्रकार की कम्पनी खोलनी चाहिये और क्यों? (पटना, १९५२ वार्षिक)

२८ निम्नलिखित में क्या अन्तर है : अ) स्टेटूटरी या वैधानिक मीटिङ्ग और वार्षिक सामान्य मिटिंग, (अ) साधारण प्रस्ताव तथा असाधारण प्रस्ताव? (पटना, १९५१ वार्षिक)

२९. निम्नलिखित में से किन्हीं चार पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए : (अ) *समामेलन* (Incorporation) *का प्रमाण पत्र,* (*आ*) *प्रवर्तक या प्रमोटर,* (इ) न्यूनतम चन्दा, (ई) शोध्य पूर्वाधिकारी (Redeemable Preference) शेयर, (३) अन्तर्नियम। (पटना, १९५१ वार्षिक)

३०. साझेदारी और संयुक्त पूँजी की कम्पनी के विशिष्ट लक्षणों को बताइये और इन दोनों के सापेक्षिक लाभों की विवेचना कीजिये।

(पटना, १९५१ पूरक, १९४८ पूरक)

३१. शेयरहोल्डर और डिबेंचरहोल्डर का अन्तर स्पष्ट कीजिये। (पटना १९५१ पूरक)

३२ परिमित उत्तरदायित्व के हानि और लाभों की विवेचना कीजिये। प्राइवेट कम्पनी सार्वजनिक कम्पनी से किस प्रकार भिन्न होती है? (पटना, १६४६ वार्षिक)

३३. सयुक्त पूँजी की कम्पनी के समापन (winding up) का क्या आशय है? इसकी क्या रीति होती है? (बिहार, १६४६ पूरक)

३४ सार्वजनिक परिमित कम्पनी के समामेलन (incorporation) की रीति बताइये। स्मारक-पत्र के विशेष लक्षणों की व्याख्या कीजिये। (बिहार, १६४८ पूरक)

३५ फर्म परिमित कम्पनी से बनावट, पूँजी और उत्तरदायित्व के मामलों में किस प्रकार भिन्न होता है? (बिहार, १६४७)

३६ सयुक्त पूँजी की कम्पनी की स्थापना की रीतियाँ बताइये। (बिहार, १६४६)

बिहार, इन्टर कामर्स

३७. परिमित कम्पनी के साझेदारी की अपेक्षा क्या गुण-दोष हैं? (बिहार, १६५५)

३८ सूती वस्त्र बनाने वाली कम्पनी के शेयरहोल्डरों की वार्षिक सामान्य मीटिङ्ग की कल्पित मिनट लिखिये। (बिहार, १६५५)

३६. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिये . (अ) नग्न ऋणपत्र, (आ) अवि वरण, (३) रक्षित उत्तरदायित्व, (३) न्यूनतम चन्दा। (बिहार, १६५४)

४०. सयुक्त पूँजी की कम्पनी द्वारा निर्गमित विविध प्रकार के शेयरों के विशेष लक्षण बताइये। जनता से पूँजी माँगने वाली कम्पनी के लिये विभिन्न प्रकार के शेयर निर्गमित करना क्यों आवश्यक होता है? (बिहार, १६५४)

सागर, इन्टर कामर्स

४१ भागिता (Partnership) एव स्कन्ध प्रमण्डल (Joint Stock Co) की विशेषताओं और सम्बधित लाभों को समझाइये (सागर, १६५५)

४२. निजी सीमित प्रमण्डल से आप क्या समझते हैं? साझेदारी

और सार्वजनिक परिमित प्रमण्डलों की अपेक्षा निजी सीमित प्रमण्डल के क्या लाभ हैं ? (सागर, १६५५)

४३. सार्वजनिक सीमित कम्पनी के मुकाबले में प्राइवेट सीमित कम्पनी के लक्षण और सुविधाओं को बताइये। साझे की अपेक्षा प्राइवेट कम्पनी के क्या लाभ होते हैं ? (सागर, १६५२)

४४ साझेदारी फर्म और सयुक्त पूंजी की कम्पनी के अन्तरों को स्पष्ट विवेचना कीजिये। (सागर, १६५१)

४५ (अ) साझेदारी और सयुक्त पूंजी की कम्पनी के मुख्य भेद बताइये। (अ) प्राइवेट कम्पनी क्या होती है ? (सागर, १६५०)

४६ कम्पनी के स्मारक पत्र और अन्तर्नियम से आप क्या समझते हैं ? दोनों का अन्तर स्पष्ट कीजिये। (सागर, १६५०)

४७ सयुक्त पूंजी की कम्पनी की स्थापना (formation) की रीति बताइये। यह साझे से किस प्रकार भिन्न होती है ? (सागर, १६४६)

४८ भारत में मैनेजिंग एजेंसी प्रणाली ने क्या काम किया है ? इसकी मुख्य स्याओं एव दोषों की विवेचना कीजिये। (सागर, १६४८)

४६ प्राइवेट परिमित कम्पनी क्या होती है ? साझेदारी तथा सार्वजनिक कम्पनी के मुकाबले मे इसके लाभों की विवेचना कीजिए। (सागर, १६४८)

बनारस, इन्टर कामर्स

५० शेयर, डिबेंचर तथा डिविडेंड वारंट के अतर्भेद बताइये। (१६५३)

५१ साझे और सयुक्त पूंजी की कम्पनी के लक्षण और सापेक्षिक लाभों का वर्णन कीजिए। (बनारस, १६५२, १६४०)

५२. सयुक्त पूंजी की कम्पनी के स्मारक पत्र और अन्तर्नियम से आप क्या समझते हैं ? वे क्या कार्य सम्पन्न करते हैं ? पूरी तरह समझाइए।
(बनारस, १६५२)

५३ प्राइवेट सीमित कम्पनी के प्रधान लक्षण बताइये। व्यावसायिक सगठन के इस स्वरूप के गुण और अवगुण बताइये। (बनारस, १६५१)

५४. निम्नलिखित का अर्थ स्पष्ट कीजिए : (अ) पूर्वाधिकारी शेयर,

(श्रा) शोध्य डिबेंचर; (इ) शेयर सर्टिफ़िकेट; (ई) बँटवारे का पत्र, (उ) शेयर वारण्ट। (बनारस, १९४६)

५५. सयुक्त पूँजी की कम्पनी किस प्रकार स्थापित की जाती है? (बनारस, १९४६)

दिल्ली, हायर सेकिंडरी

५६. सार्वजनिक परिमित कम्पनी की अपेक्षा व्यक्तिगत परिमित कम्पनी के विशेष लक्षण तथा सुविधाओं का विवरण दीजिये। व्यक्तिगत परिमित कम्पनी साझे से किस प्रकार भिन्न होती है? (दिल्ली, हा० से०, १९५३)

५७. कोई व्यक्ति किसी कम्पनी का सदस्य कैसे बन सकता है? उसकी सदस्यता कैसे समाप्त होती है? शेयरहोल्डर के दायित्व का वर्णन कीजिये। (दिल्ली, हा० से०, १९५२)

५८ कम्पनी की परिभाषा दीजिये, और साझेदारी फर्म को सीमित कम्पनी में बदल देने के लाभ बताइये। (दिल्ली, १९५१)

५९. साझेदारी और सयुक्त पूँजी की कम्पनी का अन्तर बताइये। (दिल्ली, १९५०)

६०. निम्नलिखित को समझाइये : (अ) न्यूनतम चन्दा, (आ) सचयी पूर्वाधिकारी शेयर, (इ) प्रास्पैक्टस या प्रविवरण। (देहली, हायर सेकिंडरी, १९४८)

मध्यभारत, इन्टर कामर्स

६१ एक कम्पनी के स्मृति पत्र (Memorandum) तथा नियमावली (Articles of Association) से आप क्या समझते हैं? दोनों का अन्तर बताइये। (मध्यभारत, १९५५)

६२ एक साझेदार की तुलना (अ) कम्पनी के सचालक से और एक सीमित कम्पनी के अंशधारी से कीजिये। (मध्यभारत, १९५५)

६३. जिस प्रलेख के द्वारा कम्पनी जनता से चंदे (Subscription) का आवेदन करती है, उसका नाम बताइये और उसकी परिभाषा दीजिये। उसके प्रधान वाक्यों की विवेचना भी कीजिये। (१९५३)

६४. भारतीय कम्पनी विधान की धारा १०३ के अनुसार, सयुक्त पूँजी

की कम्पनी के व्यापार आरम्भ करने पर कुछ रोक-थाम रक्खी गई है। ये रोक-थाम क्या हैं ? (१६५३)

६५. निम्नलिखित में अन्तर बताइये : (अ) प्राइवेट और सार्वजनिक कम्पनी में, (आ) स्मारक-पत्र और अन्तर्नियम मे। (मध्यभारत, १६५२)

६६ पाँच साझेदार अपने फर्म को सीमित कम्पनी में बदल देना चाहते हे। बताइये कि प्रत्येक दशा मे उन्हें क्या करना होगा (अ) जब कि वे किसी बाहरी व्यक्ति को न लेना चाहें ? (आ) जब कि वे प्रस्ताविक कम्पनी के शेयर खरीदने के लिए जनता को आमंत्रित करना चाहें ?

(मध्य भारत, १६५२)

उस्मानिया, इन्टर

६७. सयुक्त पूँजी की कम्पनी से आप क्या समझते हैं ? कम्पनी का समामेलन किस प्रकार हो सकता है ? (उस्मानिया, १६५२)

६८. कम्पना के अन्तर्नियम का क्या अर्थ है ? इसमें और स्मारक पत्र में क्या अन्तर होता है ? (उस्मानिया, १६५१)

६६. आप कम्पनी के प्रास्पेक्टस से क्या समझते हैं ? (उस्मानिया, १६५०)

उत्कल, इन्टर कामर्स

७०. कम्पनी के समामेलन (incorporation) की रीति का वर्णन कीजिये। स्मारक-पत्र क्या होता है ? (१६५२)

७१. संयुक्त पूँजी की कम्पनी जिन विभिन्न प्रकार के शेयरों का निर्गम करती है, उनको समझाइये । शेयरों की बँटनी (allotment) से आप क्या समझते हैं ? (१६५२)

APPENDIX A

Legal Constitution of Different Forms of Business Organization

	Sole Trader	Partnership	Limited Partnership	Public Limited Company	Private Limited Company
1	Consists of one person, viz the owner of the business	May consist from 2 to 20 members (except in banking business where they cannot exceed 10)	Consist of one or more General Partners and one or more Limited Partners (The maximum number is 20 and in the case of a bank, 10 members)	Cannot consist of less than seven members The maximum is not fixed	May consist of 2 members but not more than 50 (excluding employees)
2	The proprietor is personally liable for all the debts of the business	Partners are liable for the full amount of the debts of the partnership	The general partners are liable without limitation for the debts of the firm The liability of limited partners is limited to the *amount* they contribute	Each member's liability is limited to the nominal amount of capital under taken to be contributed by him	The member's liability is the same as in the Public Limited Company
3	The proprietor may dispose of his business at any time	Shares are not transferable	A limited partner may transfer his share with the consent of general partners	Shares are freely transferable	There is restriction on the transfer of the shares

Sole Trader	Partnership	Limited Partnership	Public Limited Company	Private Limited Company
Audit of accounts is optional	Audit of accounts is optional	Audit of accounts is optional	Audit of accounts is compulsory	Audit of accounts is optional
The capital is introduced by the proprietor, but he may obtain the use of outside loan	The partners named in the article of part nership intro duce the capital	The capital is intro duced by the general and limited partners	The public may be invited to subscribe share capital	The public mast not be invited to subs-cribe capital
An annual balance sheet is not compulsory	An annual balance sheet is not compulsory	An annual balance sheet is not compul sory	An annual balance sheet is compulsory and a state-ment in the form of a balance sheet must be filed annually at the Compa-nies' Registra-tion Office	An annual balance sheet is compulsory, but is not required to be filed at the Compa-nies' Registra-tion Office

[From Stephenson, Op Cit]

APPENDIX B

Advantinges and Disadvantages of Various Forms of Business Organization Compared

	Description	Individual Proprietorship	Partnership	Joint Stock Company
1	Motivation	Greatest	Great	Much less
2	Facility of Formation	"	"	"
3	Promptness and Vigour	"	"	"
4	Secrecy	"	"	"
5	Flexibility	"	"	"
6	Capital	Small	Greater	Greatest
7	Judgment and Wisdom	"	"	"
8	Division of Labour	Not very possible	Possible to some extent	Wide scope
9	Personal Attention of Proprietors,	Necessary	Not so necessary	Not at all necessary
10	Credit Facilities	Great	Greater	Small
11	Liability	Unlimited	Limited to limited partners and unlimited to unlimited partners	As the case may be, but generally limited

विदेशी व्यापार

अध्याय ४०

विदेशी व्यापार

किसी देश का व्यापार दो भागों में बाँटा जा सकता है : देशी व्यापार और विदेशी व्यापार। हम इस पुस्तक के प्रथम भाग में देशी व्यापार का अध्ययन कर ही चुके हैं। अब हम विदेशी व्यापार का अध्ययन करेंगे।

§ १. प्रारम्भिक

विदेशी व्यापार का अर्थ

जो व्यापार एक देश किसी दूसरे देश के साथ करता है, वह विदेशी व्यापार कहलाता है। उदाहरण के लिए, भारत जो व्यापार जापान, ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, अमेरिका, अफ़गानिस्तान, बर्मा और लंका आदि के साथ करता है, वह उसका विदेशी व्यापार कहलाता है।

किसी देश के देशी व्यापार और विदेशी व्यापार में अन्तर्भेद करना बहुत आवश्यक है। देश के अन्दर होने वाले व्यापार को देशी व्यापार कहते हैं। उदाहरण के लिए, कलकत्ते और पटने के दूकानदारों में, इलाहाबाद और लखनऊ के दूकानदारों में, और नागपुर और बम्बई के दूकानदारों में होनेवाला व्यापार देशी व्यापार है। किन्तु जब एक बम्बई का उद्योगी न्यूयार्क से मशीन खरीदता है या कलकत्ते का व्यापारी टोकियो के किसी खरीदार को कपास बेचता है, तो वह विदेशी व्यापार होता है।

इसकी आवश्यकता और लाभ

प्रकृति ने प्रत्येक देश को समान भेंट प्रदान नहीं की है। साधारणतया एक देश किसी खास वस्तु के उत्पन्न करने के लिए विशेष रूप से योग्य होता है और वह उस वस्तु को अपनी निजी आवश्यकता से अधिक मात्रा म उत्पन्न करता है। किन्तु अन्य वस्तुओं का या तो वह बना नहीं पाता या उन्हें कठिनता से ही उत्पन्न कर सकता है। विदेशी व्यापार के द्वारा वह अपनी अतिरिक्त उत्पत्ति (Surplus Produce) अन्य देशों को बेच सकता है और अन्य देशों से, बदले में, अपनी आवश्यकता के अनुसार वस्तुएँ खरीद सकता है। उदाहरण के लिए, भारत अपनी निजी आवश्यकता से अधिक मात्रा म मैंगनीज (Manganese) उत्पन्न करता है, किन्तु वह पर्याप्त मात्रा में मशीन और रसायन (Chemicals) उत्पन्न नहीं कर पाता। अतः वह अपनी अतिरिक्त मैंगनीज इङ्गलैण्ड आदि विदेशों को बेच देता है और विदेशों से बदले में मशीन और रसायन ले लेता है। अतः विदेशी व्यापार देश को विभिन्न प्रकार के और अधिक मात्रा में माल प्राप्त करने में सहायक होता है। इस प्रकार विदेशी व्यापार की आवश्यकता स्पष्ट है।

साधारणतया विदेशी व्यापार के बहुत से लाभ होते हैं जिनका वर्णन नीचे किया जाता है :

(१) विदेशी व्यापार के द्वारा प्रत्येक देश ऐसी वस्तुओं को, जो वह स्वयं उत्पन्न ही नहीं कर सकता या ऊँची लागत पर ही उत्पन्न कर सकता है, विदेशों से सस्ते दर पर खरीद सकता है। उदाहरण के लिए, यदि ग्रेट ब्रिटेन अपने निवासियों द्वारा उपभोग किये जाने वाले गेहूँ को पूरी मात्रा में स्वयं उत्पन्न करने लगे, तो वहाँ गेहूँ का मूल्य बहुत बढ़ जायगा क्योंकि वहाँ गेहूँ उत्पन्न करने की लागत अमेरिका की अपेक्षा, जहाँ से वह इस समय गेहूँ मँगाता है, अधिक है। और ब्रिटेन चाहे कितनी ही चेष्टा क्यों न करे, वह जूट स्वयं नहीं उत्पन्न कर सकता जो कि उसे भारत से मँगाना पड़ता है।

(२) विदेशी व्यापार के द्वारा कोई भी देश अपनी अतिरिक्त उत्पत्ति को

अन्य देशों के हाथ अच्छे मूल्य पर बेच सकता है। भारत में अबरख आवश्यकता से अधिक उत्पन्न होता है; और यदि वह उसे विदेशों को निर्यात न करे तो वह सब बेकार जाय।

(३) इसके अतिरिक्त, यदि अभाग्यवश अकाल, भूचाल या अन्य किसी प्राकृतिक संकट के परिणाम-स्वरूप किसी वस्तु का आभ्यंतरिक स्रोत रुक जाय, तो उस वस्तु का विदेशों से आयात किया जा सकता है। यदि हमारे देश में अकाल पड़े, तो हमें आस्ट्रेलिया और अमेरिका से गेहूँ खरीदना होगा। यदि विदेशी व्यापार का अस्तित्व न हो, तो ऐसी दशा में हमारे देशवासियों को भूखों मरना पड़े।

(४) विदेशी व्यापार का सब से बड़ा लाभ यह है कि यह प्रत्येक देश को वे वस्तुएँ उत्पन्न करने देता है जो वह न्यूनतम लागत पर बना सकता है : और उन वस्तुओं को उत्पन्न करने की विवशता से बचाता है जिनको बनाने की लागत आयात करने की लागत से अधिक पड़े। अतः इसके द्वारा श्रम विभाजन का सिद्धान्त समस्त संसार में क्रियाशील हो जाता है और इसके समस्त लाभ, जिनका अन्तिम परिणाम उत्पत्ति की मात्रा बढ़ाना और लागत घटाना होता है, व्यवहार में प्राप्त हो जाते है। अतः प्रत्येक देश की समृद्धि बढ़ती है।

(५) संसार के विभिन्न देशों के व्यापारिक सम्बन्ध अन्य दिशाओं में भी उपयोगी प्रमाणित होते हैं। विचार विनिमय आरम्भ हो जाने के कारण एकता का सूत्र दृढ़ हो जाता है जिससे सांस्कृतिक उन्नति होती है और अन्तर्राष्ट्रीय शांति को प्रोत्साहन मिलता है।

(६) केवल लाभ कमाने के दृष्टिकोण से, विदेशी व्यापार से देशी व्यापार की अपेक्षा अधिक लाभ कमाया जाता है, यद्यपि विदेशी व्यापार की कुछ शाखाओं में पहले की अपेक्षा अब लाभ कम होने लगा है।

विदेशी व्यापार में कठिनाइयाँ

यद्यपि विदेशी व्यापार के इतने लाभ हैं और उसकी उन्नति संसार के

विभिन्न देशों के भौतिक एवं आध्यात्मिक विकास में इतनी सहायक होती है, फिर भी विदेशी व्यापारी को बहुत सी बाधाओं का सामना करना पड़ता है।

(१) दूरी—संसार के विभिन्न देश एक दूसरे से इतने दूर हैं कि शीघ्र एवं घनिष्ठ व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने में कठिनाई होती है। कौन-सा माल किस देश में सस्ता मिलता है और वह किन किन विक्रेताओं से मित-व्ययिता के साथ खरीदा जा सकता है, इसका पता लगाने में काफ़ी श्रम करना पड़ता है, यद्यपि व्यापारिक निर्देशक-ग्रन्थों (Trade Directories) ने यह काम सरल कर दिया है। आर्डर की पहुँच और उत्तर की प्राप्ति में काफी समय लगता है, और यदि केबिलग्राम का उपयोग किया जाय तो व्यय बहुत होता है। विदेश से खरीदे गये माल के आने में भी बहुत समय लगता है।

(२) भाषा-भेद—दूरी के अतिरिक्त प्रत्येक देश की प्रायः अपनी अलग भाषा होती है; और दूर-स्थित और अपरिचित देशों के विभिन्न भाषा-भाषियों से आर्डर प्राप्त करना आसान काम नहीं। स्वाभाविक रूप से, विदेशों में अपने माल बेचने के इच्छुक व्यापारी को विदेशी भाषाओं से जानकारी रखने वाले व्यक्तियों को नौकर रखना पड़ता है। सूची पत्र, मूल्य-सूचियाँ आदि विशेष भाषाओं में प्रकाशित करनी पड़ती हैं और पत्र-व्यवहार भी विदेशी भाषाओं में करना पड़ता है। इस बात को यूरोप के विश्वविद्यालयों ने खूब समझा है और उन्होंने अपनी व्यापारिक डिगरियों या डिप्लोमाओं के प्राप्त करने के लिए एक या दो विदेशी भाषाओं में सफलता प्राप्त करना अनिवार्य बना दिया है।

(३) यातायात और सन्देशवाहन की कठिनता—इसके अतिरिक्त यातायात और सदेशवाहन में भी कठिनाइयाँ होती हैं। इलाहाबाद या नागपुर से चला हुआ पत्र कई सप्ताहों में न्यूयार्क या मैक्सिको पहुँचता है। केबिलग्राम अवश्य शीघ्र पहुँचता है किन्तु उसमें व्यय बहुत होता है। कई समुद्रों को पार करके दूर-दूर के स्थानों को माल पहुँचाने में समय लगता है और साथ ही साथ

उसका खर्चा भी बहुत बैठता है जिसके परिणामस्वरूप माल का विक्रय मूल्य बढ़ जाता है।

(४) मार्ग में आपत्ति—साथ ही, मार्ग में आपत्तियाँ भी कई होती हैं। विदेश जाने वाला माल सहस्रों मील जल मार्ग से जाता है और उसे अनेक आपत्तियों का सामना करना पड़ता है। ऊँची-ऊँची लहरें जहाज को उलट सकती हैं; जहाज दूसरे जहाज से या चट्टान से टकरा सकता है, चोर या देश-शत्रु जहाज और माल को हथिया सकते हैं; सामुद्रिक जल या जलवायु माल को हानि पहुँचा सकते हैं। इन सब आपत्तियों से बचने के लिये विदेशी व्यापारी अपने माल का सामुद्रिक बीमा (Marine Insurance) करा लेते हैं। किन्तु सामुद्रिक बीमा कराने के लिए प्रीमियम (Premium) देनी पड़ती है जिससे कि माल का मूल्य बढ़ जाता है।

(५) विदेशी व्यापारियों के विषय में समाचार—विदेशी व्यापार में एक बड़ी कठिनाई होती है विदेशी व्यापारियों की आर्थिक दशा, व्यापारिक ईमानदारी आदि के विषय में विश्वस्त ज्ञान प्राप्त करना। उनमें होने वाले पत्र व्यवहार एवं नमूने और सूची पत्र पर ही उसे निर्भर रहना पड़ता है। कुछ देशों में ऐसी व्यापारिक संस्थाएँ हैं जो अपने देश के व्यापारियों के सम्बन्ध में विश्वस्त सूचना देने का काम करती हैं; इनसे काम में बहुत सुविधा मिलती है।

(६) आयात और निर्यात कर—संसार का प्रायः प्रत्येक देश देशों से आने वाले तथा विदेशों को जाने वाले माल पर कर लगाता है। आयात करों का मूल उद्देश्य यह कि इनके लगाने से विदेशी माल का मूल्य इतना बढ़ जाय कि वह देशी माल से स्पर्धा में विजयी न हो सके। यदि आयात कर बहुत ऊँचे दर का हुआ, तो विदेशी बाजार पहुँच के बाहर हो जाते हैं।

कभी-कभी एक देश अपने माल का निर्यात रोकने की दृष्टि से ऊँचा निर्यातकर भी लगाता है। यह विशेषतया कच्चे माल के विषय में किया जाता है। आधुनिक काल में इन प्रशुल्क अवरोधों (*Tariff Restrictions*) ने संसार के अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बहुत क्षति पहुँचाई है।

(७) विदेशी बाजारों की विशेषताएँ—प्रत्येक विदेशी बाजार की कुछ अपनी विशेषताएँ होती हैं। उसकी समस्याएँ, उसकी आवश्यकताएँ, उसकी सामर्थ्य और उसकी व्यापारिक रीतियाँ पृथक् होती हैं। इन तक पहुँचने के मार्ग देशी व्यापार के मार्ग से भिन्न होते हैं, और विभिन्न देशों के लिए विभिन्न मार्गों का सहारा लेना पड़ता है। अतः विदेशी बाजारों के गहरे तथा विस्तृत अध्ययन की आवश्यकता होती है।

(८) भुगतान—यदि उपरोक्त कठिनाइयों के होते हुए भी माल की बिक्री हो जाय, तो फिर रुपये के भुगतान की समस्या आती है। यदि दो देशों के चलन (currency) पृथक् पृथक् हों, तो पहले विदेशी चलन में कितना रुपया वसूल किया जाय, इसका हिसाब लगाना पड़ेगा। किन्तु इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात, जिसके विषय में आश्वासन प्राप्त कर लेना आवश्यक है, यह है कि ऋण का भुगतान हो जायगा और रुपया डूबने नहीं पायेगा। यह बात उस देश के ईमानदारी के दर्जे, व्यापारी की व्यक्तिगत सच्चरित्रता और उस देश में विदेशी ऋणदाताओं को दी जाने वाली सुरक्षा पर निर्भर होती है। यह शोक का विषय है कि कुछ देशों में ऋणदाताओं को पर्याप्त सुरक्षा नहीं दी जाती। इसके अतिरिक्त भुगतान सरल, शीघ्र और सस्ता बनाने के लिए एक कुशल बैंकिंग प्रणाली का भी होना आवश्यक है।

ऊपर बताई गई सारी कठिनाइयों पर अब शनै शनै बड़ी मात्रा तक विजय प्राप्त कर ली गई है। यातायात और सदेशवाहन के साधनों की काफी उन्नति हो चुकी है, व्यापारिक सम्बन्ध अन्तर्राष्ट्रीय पैमाने पर काफी समय से स्थापित हो रहे हैं, बीमा और बैंकिंग क्षेत्र में काफी उन्नति हो रही है, इन सब बातों ने समस्त संसार को एकता के सूत्र में बाँध दिया है। फिर भी कठिनाइयाँ अब भी विद्यमान हैं और उनके कारण विदेशी व्यापार में, देशी व्यापार की अपेक्षा, अधिक मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। कदाचित् इन्हीं कठिनाइयों को दूर करने के लिए, विदेशी व्यापार में देशी व्यापार की अपेक्षा अधिक मध्यस्थ (middlemen) बीच में पड़ते हैं।

§ २. विदेशों में माल बेचना

विदेशों में माल बेचना आसान काम नहीं है। इसके लिए बड़ा परिश्रम और बहुत निपुणता चाहिये। विदेशों से आर्डर प्राप्त करने का प्रयत्न करने के पहले जिन बातों की जानकारी कर लेना आवश्यक है उनका वर्णन हम नीचे करते हैं।

सबसे पहले विदेशी बाजार में होने वाली माँग का स्वभाव और सीमा जान लेना आवश्यक है। विदेशों में बेचे जाने वाले माल के क्रेता उस देश के उपभोक्ता ही होते हैं। अतः उनकी रुचि, आवश्यकताओं और आदतों का परिचय प्राप्त कर लेना चाहिए। यदि माल क्रेताओं के रुचि के अनुकूल हो और यह आशा हो कि उनकी बड़ी मात्रा में खपत हो सकती है, तो व्यापारी को आगे काम करना चाहिये। यदि माल उपभोक्ताओं की रुचि के प्रतिकूल है, तो विदेशी व्यापार को टटोलना व्यर्थ है—हाँ, यदि व्यापारी में वहाँ माँग उत्पन्न कर सकने की सामर्थ्य हो, तब बात दूसरी है। दूसरी बात यह मालूम करने की है कि विदेश में कितनी स्पर्धा है। प्रत्येक व्यापारी विदेश में एक निश्चित न्यूनतम मूल्य पर माल बेच सकता है; और यदि विदेश में इससे कम मूल्य पर माल बिक रहा हो, तो वहाँ बिक्री की चेष्टा अवश्य ही असफल रहेगी। आजकल प्रायः प्रत्येक देश में आने वाले विदेशी माल पर, सरकारी आय बढ़ाने या विदेशी स्पर्धा रोकने की दृष्टि से, आयात कर (Import Duties) लगाये जाते हैं। ऐसे करों का पता भी लगा लेना आवश्यक है। उसे विदेशी व्यापारियों की ईमानदारी, भुगतान की रीतियों और भुगतान की सुविधाओं आदि का भी पता लगा लेना चाहिये। इन देशों में विदेशी ऋण-दाताओं को क्या सरक्षण प्राप्त है और उनके प्रति वहाँ के न्यायालयों का कैसा रुख रहता है, ये बातें भी महत्वपूर्ण हैं। अन्त में, ऐसे माल के वितरण के स्रोतों और विभिन्न सम्बन्धित हितों के विषय में जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिये और उसकी सफलता के पक्ष और विपक्ष में काम करने वाले समस्त प्रमाणों पर विचार कर लेना चाहिये। यदि कोई व्यापारी बिना इन बातों का पता लगाये विदेशी व्यापार करता है, तो वह जुआ खेलता है।

जब ऊपर बताई हुई समस्त बातें विश्वस्त सूत्रों से प्राप्त हो जायें और व्यापारी को यह सन्तुष्टि हो जाय कि वह विदेशों में लाभ से माल बेच सकता है, तब वह विदेशी व्यापारियों से आर्डर प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित रीतियों में से कोई भी काम में ला सकता है।

विज्ञापन

विदेशों से आर्डर प्राप्त करने का सबसे सस्ता साधन विज्ञापन है। ऐसे बहुत से अखबार और मैगजीन हैं जिनका चलन ससारव्यापी है। ऐसे पत्रों में विज्ञापन आकर्षक रीति से बराबर, रह रह कर और लगातार छपते रहना चाहिये जिससे कि विदेशों में विज्ञापित माल की माँग होने लगे। समाचार-पत्रों में विज्ञापन देने के अतिरिक्त, विदेशी भाषा मे छपे हुए सूचीपत्र, नोटिस, मूल्य-सूचियाँ आदि भी विदेशों में बाँटने चाहिये। विज्ञापन बड़े पैमाने पर करना पड़ेगा और उसकी लागत भी बहुत अधिक होगी। किन्तु यदि विज्ञापन कुशलता पूर्वक, होशियारी से तथा सुव्यवस्थित ढङ्ग से छपाये जायें, और विज्ञापित वस्तुएँ वास्तव में अच्छी हुईं, तो उनके लिए शीघ्र ही बाजार खुल जायगा और विज्ञापन की ऊँची प्रारम्भिक लागत शीघ्र ही निकल आवेगी।

परिचय और पूछताछ

विदेशी व्यापारियों से व्यापार आरम्भ करने का एक सस्ता उपाय यह है कि किसी तीसरे फर्म के द्वारा उनसे परिचय (introduction) प्राप्त कर लिया जाय। इस दिशा मे, अन्तर्राष्ट्रीय पूछताछ सभा (International Enquiry Bureaus) से भी काफी सहायता मिल सकती है। यूरोप में ऐसी संस्थाओं की विशेषतया उन्नति हुई है।

व्यक्तिगत यात्रा

यदि व्यय बर्दाश्त करने की सामर्थ्य हो, तो मैनेजर या मालिक को स्वय विदेशों की यात्रा करनी चाहिये और विदेशी व्यापारियों से स्वय भेंट करनी चाहिये। थोड़े समय के पश्चात् यात्रा को फिर दोहराना चाहिये। व्यापार बढ़ाने का व्यक्तिगत यात्रा से अच्छा और कोई उपाय नहीं। यात्री विदेशी व्यापारियो पर बातचीत द्वारा आवश्यक प्रभाव डाल सकता है और उन्हें इस बात का

विश्वास दिला सकता है कि उसका माल बेचने में उन्हे बहुत लाभ है, जो केवल विज्ञापन द्वारा नहीं हो सकता। इसके अतिरिक्त, वह प्रत्येक विदेशी व्यापारी के व्यवहार, व्यापारिक ईमानदारी तथा कार्यक्षमता का भी पूरा-पूरा समाचार प्राप्त कर सकता है। वह इन देशों के बाजारों का व्यक्तिगत अध्ययन करने के पश्चात् इस बात का निर्णय कर सकता है कि वहाँ किस प्रकार का माल खप सकता है।

विदेशी यात्रा करने वाले एजेन्ट

यदि विदेशों में माल बिकने लगे और इस बात की आशा हो जाय कि वहाँ इनकी माँग स्थायी रूप से होने लगेगी, तो विदेशों में यात्रा करने वाले एजेन्ट भेजने चाहिये जिससे कि वे बिक्री में और भी कोशिश के साथ सहायता दे सकें। विदेशों में एजेन्ट भेजने में बहुत खर्च लगता है, और ऐसे एजेन्टो ही को बाहर भेजना चाहिये जो ईमानदार और कार्यकुशल हों। इस काम के लिए विदेशों के विश्वस्त नागरिकों को भी नियुक्त किया जा सकता है। विदेशों में जाने वाले एजेन्टों को माल के विषय मे पूरी पूरी जानकारी होनी चाहिये। उन्हे वैज्ञानिक विक्रय कला में दक्ष होना चाहिये और उनमे विदेशी भाषा सुविधापूर्वक बोल सकने की योग्यता होनी चाहिये। उन्हें एक व्यापारिक केन्द्र के पश्चात् दूसरे केन्द्र की यात्रा करनी चाहिये, व्यापारियों से मिलना चाहिये, अपने माल का नमूना तथा सूचीपत्र दिखाने चाहिये, और इस बात का विश्वास दिलाना चाहिये कि उन्हें यह माल बेचने मे काफी लाभ होगा। उनको यह बताना चाहिये कि उनके माल की किस्म दूसरे माल से श्रेष्ठ है या उनका मूल्य कम है या वे खरीदारों को स्वाभाविक ढङ्ग से आकर्षित करते हैं। स्थान पर उपस्थित होने के कारण, एजेन्ट व्यापारियों पर व्यक्तिगत प्रभाव डाल सकता है जो बिक्री में सबसे महत्वपूर्ण शक्ति होती है। उन्हें विदेशी बाजारों का अध्ययन करके अपने मुख्य दफ्तर को इस बात की सूचना देनी चाहिये कि वहाँ किस माल की खपत हो सकती है। इसी रीति द्वारा जर्मनी और जापान ने कुछ काल पूर्व हमारे बाजारों पर अधिकार प्राप्त कर लिया था और अमेरिका भी अब यही कर रहा है।

इस बात की सावधानी रखनी चाहिये कि यात्रा करने वाले एजेन्ट फुटकर विक्रेताओं से कभी सीधा व्यापार न करें। उन्हें सर्वदा आयात करने वाला से बात करनी चाहिये। यह सत्य कहा गया है कि माल बनाने वाले और समुद्र पार फर्मों के बीच का सीधा व्यापार बहुत बुरा व्यापार होता है। अधिकतर आयात थोक आयातकर्ताओं द्वारा किया जाता है; और जब उन्हें यह मालूम होता है कि निर्यात-कर्ता फुटकर व्यापारियों को सीधा माल बेच रहा है, तो वे कदाचित् माल खरीदना बन्द कर देंगे। इस प्रकार कुछ समय पश्चात् ही विदेशी व्यापार की इतिश्री हो जायगी।

विदेशी एजेंट

कभी-कभी विदेश में माल की खपत बढ़ाने के लिए एजेन्ट नियुक्त किये जाते है। कुछ अच्छे अच्छे फर्मों को, जो निर्यातकर्ताओं की शर्तों को स्वीकार कर लेते हैं, माल भेज दिया जाता है जिसे वे निर्यातकर्ता के एजेन्ट की हैसियत से बेचते हैं। माल भेजना आवश्यक इसीलिए होता है कि जिससे खरीदार को माल तुरन्त ही मिल जाय। बिक्री की राशि पर एजेंट को निश्चित प्रतिशत की दर से कमीशन दिया जाता है।

अधिकतर एक देश को विभिन्न क्षेत्रफलों में विभाजित कर दिया जाता है। और प्रत्येक क्षेत्र एक एजेंट को दे दिया जाता है। विक्रेता या निर्यातकर्ता नियत क्षेत्र में केवल अपने एजेन्ट को ही माल बेचता है, अन्य किसी व्यक्ति को नहीं। एजेन्ट को भी यह बन्धन मानना पड़ता है कि वह इसी प्रकार का और किसी फर्म का माल अपने स्टाक में नहीं रक्खेगा। इस बन्धन का उद्देश्य यह होता है कि एजेन्ट को उस माल की बिक्री बढाने में सच्ची और दीर्घकालीन लगन हो।

एजेन्सी प्रणाली में कुछ वैधानिक दोष होते हैं। वैधानिक दृष्टि से, यदि एजेन्ट माल उधार बेचता है और ऋणी रुपया अदा नहीं कर पाता, तो हानि प्रधान (principal) को उठानी पड़ती है। यह वैधानिक नियम विदेशी प्रधान (principal) के लिये सकटमय है। अतः निर्यातकर्ता बहुधा अपने विदेशी एजेन्ट को कुछ और कमीशन देकर ऋण के भुगतान का भी उत्तरदायी बना लेते हैं। ऐसे कमीशन को "डैल क्रेडियर कमीशन" (Del credere)

commission) कहते हैं, और एजेन्ट "डैल क्रेडियर एजेन्ट" कहलाता है।

विदेशी शाखाएँ

यदि विदेशों में माल की काफी माँग होने लगे, तो वहाँ शाखाएँ भी खोली जा सकती हैं। किंतु विदेशी शाखाएँ खोलने में बहुत व्यय होता है, अतः उनकी स्थापना बिक्री बढ जाने पर ही करनी चाहिये। यदि बिक्री काफी अधिक हो, तो एकमात्र एजेंसी (Sole Agency) की अपेक्षा विदेशी शाखा सस्ती पड़ेगी। किंतु यदि बिक्री कम है, तो शाखा खोलने से हानि होने का भय है। हमारे देश में बहुत से विदेशी व्यापारियों ने शाखाएँ खोल ली हैं। कुछ विदेशी कारखाने वालों ने—जैसे डब्ल्यू० डी० एण्ड एच० ओ० विल्स (सिगरेट बनाने वाले) और लक्स सोप कम्पनी ने—भी भारत में अपने कारखाने ही खोल लिये हैं क्योंकि यहाँ बना कर माल बेचना, बने बनाये माल को आयात करके बेचने की अपेक्षा, अधिक लाभदायक होता है।

§ ३. विदेशी व्यापार में मध्य-पुरुष

कारखानेवाला माल इसलिए बनाता है कि उनकी बिक्री अंतिम उपभोक्ताओं के हाथ हो। अतः व्यापार के लिए कम से कम दो पक्ष अवश्य होने चाहिये—कारखानेवाले और उपभोक्ता। किंतु बहुधा माल तैयार करने वाले उपभोक्ता के बीच में अनेक मध्य पुरुष होते हैं। ये मध्य पुरुष व्यापार को बहुत सुविधाजनक और आसान बना देते हैं; किंतु जब वे कोई वास्तविक सेवा नहीं करते प्रत्युत माल का मूल्य बढ़ा देते हैं, तब उनकी कड़ी आलोचना होती है। जो व्यक्ति माल बनाने वाले और माल के अन्तिम उपभोक्ताओं के मध्य में आते हैं, वे मध्य-पुरुष (middlemen) कहलाते हैं। थोक और फुटकर व्यापारी मध्य-पुरुष के उदाहरण हैं।

प्रत्येक मध्य-पुरुष माल के मौलिक मूल्य में अपनी सेवा के पुरस्कार स्वरूप कुछ रकम जोड़ देता है; इस प्रकार मध्य पुरुष माल का मूल्य बढ़ा देता है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए एक सिगरेट के कारखाने वाला सिगरेट

आना प्रति पैकेट की लागत पर बनाता है और थोक व्यापारी को ४॥ आने प्रति पेकेट देता है। थोक व्यापारी फुटकर व्यापारी को वह पैकेट शायद ५ आने का बेचेंगे और फुटकर व्यापारी उपभोक्ताओं को ५॥ आने में बेचेंगे। इस प्रकार मूल्य की वृद्धि रोकने की दृष्टि से घरेलू व्यापार में मध्य-पुरुषों को कम करने की नीति पर काम किया जाने लगा है; किंतु विदेशी व्यापार में यह प्रवृत्ति इतनी स्पष्ट नहीं है। विदेशी व्यापार के परिचालन में मध्य-पुरुषों का इतना महत्वपूर्ण काम होता है कि कम से कम उनमें से थोड़े से तो निश्चय ही अनिवार्य हैं।

मध्य पुरुषों का महत्व—उत्पादकगण एवं क्रेतागण, सभी को मध्य-पुरुषों से लाभ होता है। उत्पादकों के वे कई प्रकार से सहायक होते हैं। पहली बात तो यह है कि यदि उत्पादक माल भी उत्पन्न करे और उनकी बिक्री का भी पूरा प्रबन्ध करे, तो उसे काम बहुत हो जायगा जो कदाचित् उसकी सामर्थ्य के परे हो। शायद वह दोनों में से कोई भी काम कुशलतापूर्वक न कर सके। किंतु भाग्यवश ऐसे मध्य-पुरुष होते हैं जो माल की बिक्री का उत्तरदायित्व अपने सिर पर ले लेते हैं और उत्पादक को केवल उत्पत्ति पर ध्यान देने के लिए स्वतन्त्र कर देते हैं। दूसरी बात यह है कि यदि उत्पादक विदेशों में स्वयं ही बिक्री करने का प्रबन्ध करे, तो उसे विदेशी व्यापारियों के विरोध का सामना करना पड़ेगा जो उसके लिए आत्महत्या करने के समान होगा।

केवल उपभोक्ता ही नहीं प्रत्युत क्रेतागण भी मध्य-पुरुषों से बहुत लाभ उठाते हैं। उदाहरण के लिये यदि बम्बई का एक व्यापारी इङ्गलैण्ड के दस विभिन्न फर्मों से माल खरीदना चाहता है तो उसे लन्दन स्थित केवल एक निर्यात एजेन्ट (Export Agent) को इस बात का आदेश देना पड़ता है कि वह इन दसों फर्मों से माल खरीद ले, उनका ठीक तरह से पैकिंग कराये और उन्हें बम्बई जहाज द्वारा रवाना कर दे। यदि निर्यात एजेंट नाम का कोई मध्य-पुरुष न होता तो उसे १० आर्डर देने पड़ते, १० बार पैकिंग का व्यय झेलना पड़ता, दस पैकेट की सुपुर्दगी लेनी पड़ती और दस भुगतान करने पड़ते जिसमें उसका धन एवं समय दोनों का ही ज्यादा व्यय होता। इसके अतिरिक्त, यदि क्रेता और विदेशी विक्रेता में कुछ झगड़ा या मतभेद हो जाय, तो निर्यात

एजेंट जो बराबर विदेशी विक्रेताओं के सम्पर्क में रहता है, झगड़ा आसानी से सुलझा सकता है। तीसरी बात यह है कि यदि कोई व्यक्ति विदेशी माल खरीदना चाहता है, तो हो सकता है कि उसे यह माल अपने देश मे खरीदने पर तेज मिले और विदेश में खरीदने पर सस्ता मिले; किन्तु विदेशी माल बनाने वाला केवल अपने एकमात्र एजेंट (Sole Agent) को छोड़ कर और किसी विदेशी को माल शायद न बेचे। ऐसी दशा में क्रेता मालबनाने वाले के देश में स्थित किसी निर्यात एजेंट के द्वारा वही माल खरीद सकता है। इस प्रकार यह माल सस्ते दर पर प्राप्त कर सकता है।

विदेशी व्यापार में मध्य पुरुष—अब हम विदेशी व्यापार मे भाग लेने वाले मध्य-पुरुषों का जिक्र करेंगे। पहले हम माल बनाने वाले के देश को लेते हैं। यदि कोई व्यापारी कोई विदेशी माल अपने स्टाक में रखना चाहता है, तो वह उस विदेश में रहने वाले किसी निर्यात-एजेन्ट (Export Agent) को माल खरीद कर देने का आदेश दे सकता है। निर्यात एजेन्ट का काम आदेशानुसार माल खरीदना और क्रेता को भेज देना है। वह अपनी सेवाओं के उपलक्ष में थोड़ा सा कमीशन ही वसूल करता है। निर्यात एजेन्ट माल खरीद कर उन्हें ठीक तरह पैक कराता है और फिर उन्हें किसी माल लदाने वाले एजेन्ट (Forwarding Agent) को भेज देता है जो माल को भेजने के काम में विशेषज्ञ होता है। माल लदाने वाला एजेन्ट माल को जहाजी कम्पनी को सौंप देता है जो माल को क्रेता के देश तक पहुँचा देती है।

जब माल क्रेता के देश मे पहुँच जाता है तो उसकी सुपुर्दगी एक माल उतारने वाला एजेन्ट (Clearing Agent) लेता है। इस एजेन्ट को इस क्रेता नियुक्त करता है और इसका काम माल की सुपुर्दगी जहाज से लेना और इस सम्बन्ध के सारे काम करना है। यह माल को आयात एजेन्ट (Import Agent) के पास भेज देगा जो थोक व्यापारियों के लिये माल आयात करता है।। थोक व्यापारी माल को फुटकर व्यापारियों के हाथ बेच देते हैं, जो अन्त में वास्तविक उपभोक्ताओं के हाथ माल बेचते हैं।

विदेशी व्यापार में मध्य-पुरुष

उत्पादक के देश में	क्रेता के देश में
१. निर्यात एजेन्ट २. माल लदाने वाला एजेन्ट ३. जहाजी कम्पनी	४. माल उतारने वाला एजेन्ट ५. आयात-एजेन्ट ६. थोक व्यापारी ७. फुटकर व्यापारी

ऊपर बताये गये समस्त मध्य-पुरुष प्रत्येक सौदे में आवश्यक रूप से सम्मिलित नहीं होते। उनमें से कुछ को छोड़ा भी जा सकता है, जैसा कि विदेशी व्यापार के सौदों की चर्चा करते समय आगे चल कर बताया जायगा।
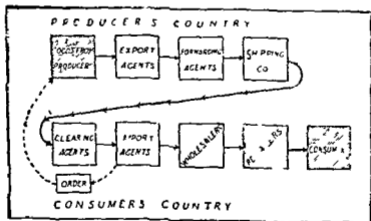
सीधा या प्रत्यक्ष (Direct) व्यापार

यदि कोई व्यापारी किसी विदेशी माल बनाने वाले को कोई आर्डर दे, तो हो सकता है कि वह माल उसे सीधे ही भेज दे। ऐसे सौदों में किसी निर्यात

एजेन्ट, आयात एजेन्ट या अन्य किसी मध्य-पुरुष के पडने की आवश्यकता नहीं है और किसी को कमीशन आदि देने की नौबत नहा आयेगी। भुगतान सीधा माल बनाने वाले को, माल के मूल्य और माल भेजने के व्यय के अनुसार, किया जायगा। ऐसे सौदे में आयात एजेन्ट और निर्यात एजेट का तो एक दम लोप हो जाता है; और माल लदाने वाले या माल उतारने वाले एजेन्टों की सेवाओं का प्रयोग किया भी जा सकता है और नहीं भी किया जा सकता। सीधे सौदे बहुत कम होते हैं, किन्तु पहले की अपेक्षा अब उनकी संख्या अधिक हो चली है।

परेषण (Commission) व्यापार

कभीकभी माल बनाने वाला विदेशी व्यापरियों को उसका माल स्टाक में रखने और उसकी बिक्री बढ़ाने के लिये राजी कर लेता है और इसके बदले में उन्हें बिक्री की रकम पर एक निश्चित दर से कमीशन देता है। माल बनाने वाला एक न्यूनतम मूल्य निर्धारित कर देता है जिससे कम पर विदेशी व्यापारी माल नहीं बेच सकते। व्यापारी आदेशानुसार माल बेचते है और बिक्री की रकम को, अपना कमीशन और व्यय काट लेने के बाद माल बनाने वाले को भेज देते हैं। इसे परेषण व्यापार (Commission Business) कहते हैं। इस दशा में उपभोक्ता उत्पादक के एजेन्ट से माल खरीदता है; और निर्यात या आयात एजेन्ट तथा थोक व्यापारी का लोप हो जाता हैं।

निर्यात और आयात कमीशन एजेन्ट

प्रत्येक बन्दरगाह में निर्यात और आयात एजेन्ट पाये जाते है जिनके द्वारा माल विदेशों से मँगाया जा सकता है। इनका काम है विदेशी आयातकर्ता के लिए एक निश्चित कमीशन पर माल खरीदना और उन्हें रवाना करना, और देशी व्यापारियों के लिए विदेश से माल मँगाना। वे विदेशी व्यापार' में बहुत सहायता पहुँचाते हैं और अपनी सेवा के लिए बहुत थोड़ा कमीशन वसूल करते हैं। क्योंकि वे थोड़ा सा कमीशन लेकर ही एजेन्ट की तरह काम करते हैं, इस लिए उन्हें **कमीशन एजेन्ट** कहा जाता है। कमीशन एजेन्ट को माल खरीदने के लिए विस्तृत आदेश जिस रुक्के में दिया जाता है, उसे इंडेंट (Indent)

कहते हैं। अतः इस प्रथा को इण्डेण्ट प्रथा (Indent System) कहा जाता है। बम्बई, कलकत्ता और मद्रास में ऐसे बहुत से फर्म हैं जो विदेशी माल भारतीय व्यापारियों को और भारतीय माल विदेशी व्यापारियों को सप्लाई करने का काम करते हैं।

पौतिक व्यापारी (Merchant Shippers)

कभी कभी कुछ व्यापारी बिक्री के लिए माल खरीद लेते हैं, और जहाँ भी उन्हें उनकी बिक्री के लिए लाभदायक बाजार मिलता है, वहीं वे उसे बेच डालते हैं। वे जितने कम मूल्य पर माल खरीद सकते और जितने ऊँचे मूल्य पर माल बेच सकते हैं उतना ही उनका लाभ अधिक होता है। उनके खरीदार अधिकांश में वे विदेशी व्यापारी होते हैं जिनके अपने कमीशन एजेन्ट नहीं होते। कुछ समय पूर्व, कड़ी आलोचना होते रहने के बावजूद भी, पौतिक व्यापारी की खूब उन्नति हुई, किन्तु अब उसका पतन बराबर हो रहा है।

आधुनिक प्रवृत्ति

कुछ काल पूर्व, अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में कमीशन एजेन्ट (अर्थात् आयात और निर्यात एजेन्ट) का सबसे महत्वपूर्ण स्थान था। उन्हें अपनी सेवाओं के लिए कमीशन तो मिलता ही था, साथ में वे उत्पादक से मिलने वाले बट्टे (Discount) का एक भाग भी हड़प जाते थे। किन्तु सन्देशवाहन के साधनों की उन्नति, स्पर्धा की तीव्रता में वृद्धि और यात्रा करने वाले एजेन्टों आदि की प्रथा तथा अन्य ऐसे ही कारणों के परिणामस्वरूप अब उनका महत्व काफी कम हो गया है। आजकल के आयातकर्ता कमीशन एजेन्ट के बराबर ही जानकारी रखते हैं, और यदि उनकी खरीद बड़ी रकम की हुई, तो वे उत्पादक से सीधा सम्बंध स्थापित कर लेते हैं जिससे कि मूल्य घटाने या बट्टे की दर बढ़ाने का वे पूरा-पूरा लाभ उठा सकें। ऐसी अवस्था में, निर्यातकर्ता आयातकर्ता को माल सीधा भेज देता है। कभी-कभी माल लदाने वाले (forwarding) एजेन्ट खरीदार और निर्यातकर्ता का भी काम कर देते हैं। अब केवल छोटे पैमाने के

आयातकर्ता अथवा बहुत से फर्मों से सीमित मात्रा में माल मँगवाने वाले ही कमीशन एजेन्टों का उपयोग करते हैं। किन्तु धातु तथा अन्य वस्तुओं के बड़े-बड़े केन्द्रित बाजारों में, जहाँ मूल्यों में घट-बढ अक्सर और शीघ्रता से होती रहती है और जहाँ कुशल व्यक्ति की उपस्थिति आवश्यक होती है, वहाँ कमीशन एजेन्टों का अब भी बहुत महत्व है।

§ ४. आर्डर या इंडेंट (INDENT) की शर्तें

विदेश से माल मँगवाने का आर्डर देते समय आर्डर फार्म या इंडेण्ट (Indent) बनाने में विशेष सावधानी से काम लेना चाहिये। पाठको को **आर्डर और इंडेंट** का अन्तर समझ लेना आवश्यक है। जब माल सीधे किसी विदेशी उत्पादक से मँगाया जाता है, तो जिस रुक्के में आर्डर लिखा होता है वह **आर्डर या विदेशी आर्डर** कहलाता है। किन्तु जब माल कमीशन एजेन्ट के द्वारा मँगाया जाता है, तब एक रुक्के में उसे माल खरीदने और रवाना करने के विषय में विस्तृत आदेश दिये जाते हैं, उस रुक्के को इंडेण्ट (Indent) कहते हैं। यह समझना गलत है कि विदेशी आर्डर को ही इण्डेंट (Indent) कहा जाता है : ये दोनों वस्तुएँ एक दूसरे से पृथक् हैं।

इंडेण्ट लिखित होना चाहिये जिससे मतभेद का कोई अवसर ही न आवे; मौखिक (verbal) आर्डर देने से मतभेद और झगड़े होने का भय रहता है। जब केबिलग्राम के द्वारा आर्डर दिया जाय, तब लिखित आर्डर द्वारा उसे सुदृढ (confirm) करना आवश्यक है। लिखित होने के अतिरिक्त, आर्डर या इंडेंट की भाषा स्पष्ट होनी चाहिये, वह निश्चित होना चाहिये और उसमें सब मुख्य बातों के सम्बन्ध में विस्तृत आदेश (instructions) रहने चाहिये। खासकर निम्नलिखित बातों पर निश्चित आदेश का होना नितान्त आवश्यक है : (१) गुण या किस्म; (२) मात्रा; (३) दिखावट, पैकिङ्ग और चिह्न; (४) डिलीवरी और जहाज में लदाना; (५) मूल्य; (६) बीमा; (७) भुगतान; और (८) पचायत।

गुण या किस्म (Quality)

आवश्यक माल की किस्म का पूरा विवरण (particulars) स्पष्ट और निश्चित भाषा में देना आवश्यक है। पूरे विवरण की अनुपस्थिति में, पत्र व्यवहार में समय और धन बर्बाद करना पड़ता है और कभी कभी किसी अस्पष्ट विषय पर मतभेद भी हो जाता है। किस्म को सूचीपत्र, सख्या, ग्रेड (Grade) विशिष्ट चिह्न द्वारा बताया जाता है, या यदि जरूरी हो, तो नमूना ही भेज दिया जाता है। यदि कोई विशेष चिन्ह न हो अथवा नमूना न भेजा जा सकता हो, तो माल का पूरा पूरा विवरण अवश्य देना चाहिए।

मात्रा (Quantity)

माल की आवश्यक मात्रा का भी स्पष्टतया जिक्र कर देना चाहिये। मात्रा सख्या, बोझ या माप से बताई जाती है। समस्त ससार भर में सख्या तो एक सी ही है, किन्तु तोल और माप के चिह्न एक से नहीं होते। यह बात मात्रा बताते समय ध्यान म रखनी चाहिये क्योंकि ग्रेट ब्रिटेन व्यापारी को आर्डर देते समय मीटर में मात्रा बताना उतनी ही भूल होगी जितनी की जर्मनी के व्यापारी को आडर देने में ब्रिटिश चिन्हों में मात्रा का वर्णन करना। यदि ससार के समस्त देश माप और तोल के एक ही चिन्ह प्रयुक्त करने लगें, तो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बहुत लाभ हो।

दिखावट, पैकिंग और चिह्न

इडेंट में माल की दिखावट (make-up), पैकिंग और चिन्ह डालने के बारे में पूरा पूरा आदेश देना आवश्यक है। कभी कभी ये बातें निर्यात एजेंट के ऊपर ही छोड़ दी जाती हैं।

दिखावट(Make up)—निर्यात करने के पूर्व, माल को अच्छी तड़क-भड़क दी जाती है, अर्थात् उन्हें आकर्षक बाहरी रूप दिया जाता है। उदाहरण के लिये, कपड़े की दिखावट से आशय कपड़े के मोड़ने, स्टाम्प करने, टिकट लगाने और बाँधने या टाके लगाने से है। यदि आयातकर्ता यह चाहता है कि माल की किसी विशेष प्रकार की दिखावट हो, तो उसे इस विषय में

पूरा-पूरा और ठीक-ठीक आदेश देना चाहिये; अन्यथा विक्रेता अपने विवेक (discretion) के अनुसार काम करेगा

पैकिंग—माल की दिखावट ठीक हो जाने पर उनका पैकिंग किया जाता है। पैकिङ्ग में बहुत कुशलता से काम लेना पड़ता है। माल को हजारों मील समुद्र पार जाना पड़ता है और उनको असावधानी से चढ़ाने-उतारने, गर्मी या पानी से हानि होने का भय होता है; अतः उनका पैकिङ्ग बहुत सावधानी से करना चाहिये। उपयुक्त वाटर प्रूफ अस्तर और सुदृढ पैकिङ्ग की वस्तु प्रयुक्त करनी चाहिये। पैकिङ्ग में माल को मजबूती से बाँध देना चाहिये जिससे माल हिले-डुले नहीं और खड़-खड़ न करे। साथ ही उसे इतना कस कर भी नहीं बाँधना चाहिये कि उसका कचूमर ही निकल जाय। पैकिङ्ग की कुशलता माल को इस ढग से रखने मे है कि एक निश्चित स्थान में अधिकतम माल आ जाय। इस मामले में दक्ष (expert) पुरुष माल को एक निगाह देख कर ही उसे पैक करने का तरीका बता सकता है। यही कारण है कि पैकिंग का काम बहुधा पैकरों (packers) को सुपुर्द किया जाता है जो इस काम मे निपुण होते हैं। बड़े-बड़े व्यापारिक भवनो में अपने निजी पैकिंग विभाग होते हैं।

कभी-कभी खरीदार स्वय पैकिङ्ग का ढग बता देता है। यदि इस प्रकार का कोई आदेश खरीदार न दे तो विक्रेता को स्वय अपनी बुद्धि से काम लेना चाहिये या जैसे पैकिंग का चलन हो वैसा ही पैकिंग करना चाहिए। पेकिंग का ढग माल के स्वभाव के अनुसार बदलता रहता है। उदाहरण के लिये, कपास गाँठों मे पेक किया जाता है। ये गाठें मशीन द्वारा दबाई जाती है और फिर वे टीन की पत्ती से बाँध दी जाती हैं। इन गाठों के ऊपर तैलवस्त्र (oil cloth) या किरमिच या और कोई वाटर प्रूफ वस्तु लपेट दी जाती है। शराब पीपो मे रक्खी जाती है और उसको बाहर से टीन की पत्तियाँ द्वारा कस दिया जाता है। गेहूँ और चावल बोरों में भरे जाते हैं। बहुमूल्य वस्तु जैसे सिल्क लकड़ी के सन्दूकों में रक्खी जाती हैं और रखने के पहले उन्हें तैलवस्त्र (oil cloth) मे लपेट दिया जाता है।

यदि कोई वस्तु बहुमूल्य हो तो लकड़ी की पेटी, जिसमें जस्ते का अस्तर लगा होता है, काम में लाई जाती है।

चिन्ह डालना—पैकिंग हो चुकने के बाद, पेटियों पर चिन्ह डालना पड़ता है। यदि पैकिंग केसों पर कागज का लेबिल चिपका दिया जाय, तो उसको रास्ते में फट जाने का भय होता है। यदि उन पर स्याही से भी लिख दिया जाय, तो भी शायद वह रास्ते में मिट जाय। अत: केसों पर किसी अन्य अधिक स्थायी (permanent) रीति द्वारा पते का लिखा जाना आवश्यक है। प्रत्येक पैकेज पर पूरा नाम और पता लिखने में समय भी बहुत लगता है, साथ ही जगह कम होने के कारण अक्षरों को छोटा छोटा लिखना भी अनिवार्य हो जाता है। इन कठिनाइयों को चिन्ह या मार्के (mark) द्वारा दूर किया जाता है। मार्के से आशय त्रिकोण या समकोण के समान किसी रेखाचित्र से है जिसके अन्दर आयातकर्ता का संक्षिप्त नाम (initials) लिखा रहता है और उद्दिष्ट बन्दरगाह (Port of Destination) का नाम चित्र के अन्दर या बाहर लिखा रहता है।

किसी एक क्रेता के पास जाने वाले समस्त केस और गाँठों को एक ही ढंग से पैक किया जाता है और उन पर एक-सा ही चिन्ह डाला जाता है। हर पैकेज पर क्रम-संख्या भी डाल दी जाती है। डॉक कम्पनी (Dock Company) और जहाजी कम्पनी एक व्यक्ति को भेजे गये पैकेजों को विशिष्ट चिन्ह की सहायता से शीघ्र ही अलग छाँट सकती है। चिन्ह और संख्या स्टैंसिल द्वारा पैकेजों पर अंकित किये जाते हैं। अधिकतर मार्का दो तरफ डाला जाता है और अन्य दो तरफ "सावधानी से" (Goods with care), "नाजुक" (Fragile), "यह हिस्सा ऊपर रखिये" (This Side Up), आदि वाक्य लिख दिये जाते हैं।

माल का जहाज मे लादना

इस बात का भी निश्चय होना चाहिये कि माल किस जहाज द्वारा भेजे जायँ, वे किस बन्दरगाह को रवाना किये जायँ और वे किस समय तक अवश्य

रवाना कर दिये जायँ। यदि विक्रेता निश्चित समय के अन्दर ही माल भेज देने के लिये राजी हो जाता है किन्तु ऐसा कर नहीं पाता, तो वह खरीदार की क्षतिपूर्ति (damages) का उत्तरदायी (liable) हो जाता है। इसलिये विक्रेता इस बात पर जोर देते हैं कि आर्डर या इडेन्ट में "जितना शीघ्र हो सके उतना शीघ्र माल रवाना कर दिया जाय" (Shipment as soon as possible) इस प्रकार का वाक्य अवश्य लिखा जाय। साथ में यह भी लिख दिया जाता है कि यदि विलम्ब का कारण ऐसा हो जो विक्रेता के वश के बाहर है जैसे हड़ताल, युद्ध, आग, भूचाल आदि, तो विक्रेता क्षति-पूर्ति का उत्तरदायी नहीं होगा।

मूल्य

आर्डर किये जाने वाले माल का मूल्य भी लिखना आवश्यक है। विदेशी व्यापार में प्रयुक्त होने वाले विभिन्न मूल्यों का वर्णन हमने अगले अध्याय में किया है। कभी-कभी खरीदे जाने वाले माल के मूल्य का प्रश्न निर्यात एजेन्ट पर छोड़ दिया जाता है, किन्तु ऐसा तभी हो सकता है जब कि आयातकर्ता को निर्यात एजेंट पर विश्वास और भरोसा हो।

बीमा

समुद्र द्वारा भेजा जाने वाला सारा माल बहुत सी सामुद्रिक आपत्तियों (risks) का भागी होता है। अतः उसका सामुद्रिक बीमा करा लिया जाता है। बीमा-खर्च माफ (C. I. F.) और सब-खर्च-माफ (Franco) वाले सौदों में बीमा का जिम्मेदार विक्रेता होता है, जो माल का बीमा किसी अच्छी कम्पनी से ही करावेगा जिससे कि सम्बधित हुन्डी आसानी से भुन (discount) जाय। अन्य प्रकार के सौदों में, बीमा या तो क्रेता स्वयं ही कराता है या विक्रेता उसके लिए बीमा करा देता है, अतः क्रेता को यह स्पष्ट रूप में लिख देना चाहिये कि विक्रेता उसके लिए माल का बीमा कराये या नहीं। अन्यथा सम्भवतः दोनों ही बीमा करा लें और बेकार खर्च हो। यदि आयातकर्ता यह चाहता है कि निर्यात-एजेन्ट बीमा करा दे, तो उसे उस बीमा कम्पनी का नाम

भी दे देना चाहिये जिससे वह बीमा-पत्र (insurance policy) खरीदना चाहता है।

भुगतान

विभिन्न देशों के विभिन्न चलन (Currencies) होते हैं। ऑर्डर या इडेंट में यह स्पष्ट लिख देना चाहिये कि अमुक चलन में भुगतान किया जायगा। वैसे तो इस विषय में रिवाज का अनुगमन (follow) किया जाता है, जैसे भारत और इङ्गलैण्ड के सौदों में भुगतान पाउड स्टर्लिङ्ग में किया जाता है। भुगतान का ढङ्ग और विनिमय की दर भी बता देना चाहिये। इस विषय की पूरी-पूरी विवेचना अगले अध्याय में की गई है।

पञ्चायतनामा (Arbitration)

हर प्रकार की सावधानी करने के पश्चात् भी, क्रेता और विक्रेता में झगड़ा हो सकता है। विदेशों में अभियोग चलाने में बहुत व्यय होता है और व्यापारियों की बदनामी भी होती है। इसलिए ऑर्डर में लिख दिया जाता है कि झगड़ा होने पर मामला पंचायत द्वारा फैसला किया जायगा। कभी-कभी पंचो के नाम भी दे दिये जाते हैं। पंचों का फैसला दोनों पार्टियों पर लागू होता है।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१ विदेशों में ऑर्डर प्राप्त करने के लिए कौन कौन से साधनों का प्रयोग किया जाता है? पूर्णतः अपने विचार प्रकट कीजिये। (यू० पी०, १९५४)

२. किसी देश के विदेशी व्यापार में भाग लेने वाले मध्यस्थों के कामों की विवेचना कीजिये। (उत्तर प्रदेश, १९५३)

३. भारत के निर्यात व्यापार में भाग लेने वाले व्यापारिक भवनों की विभिन्न किस्में बताइये और प्रत्येक के दोषों की विवेचना कीजिये। (यू० पी०, १९३५)

बिहार, इन्टर कामर्स

४. आर्डर और इडेंट का भेद स्पष्ट कीजिये । उनमें कौन-कौन-सी शर्तें दी होती हैं ? (बिहार, १९४९, पूरक)

५. किसी देश के विदेशी व्यापार में कितने प्रकार के मध्य-पुरुष संलग्न होते हैं ? उनके कर्तव्यों की विवेचना कीजिए । (बिहार, १९४७)

उस्मानिया, इन्टर

६. 'इडेंट व्यापार' का क्या अर्थ है ? इसकी विशेषताएँ और लाभ बताइये । (उस्मानिया, १९५१)

अध्याय ४१

कोटेशन, आयात-निर्यात-कर और भुगतान

इस अध्याय में हम विदेशी व्यापार की कुछ विशेष समस्याओं का अध्ययन करेंगे। ये समस्याएँ तीन हैं: क्वोटेशन, आयात निर्यात-कर और भुगतान।

§ १. विदेशी व्यापार में कोटेशन

विदेशी माल खरीदने वाला सबसे पहले आवश्यक माल के मूल्य की पूछ-ताछ करता है। इस प्रकार की जाँच पड़ताल को पूछताछ या इक्वाइरी (Inquiry) कहते हैं। इक्वाइरी के उत्तर में, विक्रेता माल का मूल्य लिख कर भेज देता है ऐसे *मूल्यों को क्वोटेशन (Quotation)* कहते हैं। विक्रेता के गोदाम से माल के विदेशी क्रेता की दूकान तक पहुँचने में काफी व्यय होता है। क्वोटेशन में इन खर्चों में से कुछ या सब खर्चे शामिल हो सकते हैं या कोई भी खर्च शामिल न हो। विदेशी व्यापार में इन खर्चों में से थोड़ी या बहुत रकमें मूल्य में शामिल होने के अनुसार विभिन्न मूल्य क्वोट (quote) किये जाते हैं। ये खर्चे *निम्नलिखित हैं:*

१. माल का निर्माता या विक्रेता द्वारा निश्चित किया हुआ मूल्य।
२. माल के पैकिंग का व्यय।
३ निर्माता के गोदाम से निर्यात-बन्दरगाह तक माल की ढुलाई।
४. निर्यात कर।
५. डॉक (Dock) का चार्ज।
६ जहाज पर माल की लदाई।
७. किराया।
८. सामुद्रिक बीमे का प्रीमियम।

COMMISSIONS
OCTROI DUTY
CARTAGE TO SHOP
TRANSPORT TO RY STN
IMPORT DUTIES
DOCK CHARGES
UNLOADING CHARGES AT PORT
MARINE INSCE
FREIGHT
LOADING CHARGES
DOCK CHARGES
EXPORT DUTY
TRANSPORT TO PORT
PACKING CHARGES
MANUFACTURER'S PRICE
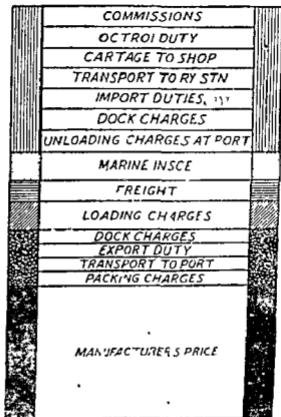
=LOCO
+ =F A S
+ + =F O B
+ + + =C F
+ + + + =C I F.
+ + + + + =FRANCO

[विभिन्न मूल्यों के अङ्क]

९ उद्दिष्ट बन्दरगाह पर माल उतारने का खर्च।
१० उद्दिष्ट बन्दरगाह पर डॉक (Dock) का चार्ज।
११ आयात-कर।
१२ बन्दरगाह से क्रेता के रेलवे स्टेशन तक माल के यातायात का खर्च।
१३ स्टेशन से क्रेता की दूकान तक माल ले जाने का व्यय।
१४ म्युनिसिपल बोर्ड की चुङ्गी।
१५ कमीशन।

विदेशी व्यापार में निम्नलिखित मूल्य क्वोट किये जाते हैं, प्रत्येक के आगे जो अंक दिये हुए हैं वे उन खर्चों को बताते हैं जो उनमें शामिल हैं :

स्थानीय (Loco)	१
डॉक-चार्ज माफ (F. A. S. or Free Alongside Ship)	१—५
जहाज-लदाई-माफ (F. O. B. or Free on Board)	१—६
किराया-माफ (C. & F. or Cost and Freight)	१—७
बीमा खर्च-माफ (C. I. F. or Cost Insurance & Freight)	१—८
सब खर्च-माफ (Franco)	१—१५

पृष्ठ ११० पर दिया हुआ चित्र इन सब मूल्यों के अंशों को अच्छी तरह दिखाता है।

स्थानीय मूल्य (Loco Price) विक्रेता के गोदाम में रक्खे हुए माल के मूल्य को कहते हैं। माल के विक्रेता के गोदाम से क्रेता या खरीदार की दूकान तक पहुँचाने में जो खर्चे होते हैं, वे इस मूल्य में बिल्कुल शामिल नहीं होते। विदेशी क्रेता साधारणतया (generally) स्थानीय मूल्य पर माल नहीं खरीदते।

डाक चार्ज-माफ-मूल्य (Free Alongside Ship या F. A. S. Price) में स्थानीय मूल्य के अतिरिक्त वे सब खर्चे शामिल किये जाते हैं जो माल के डाक तक (जहाज के समीप) पहुँचने में किये जाते हैं। ये खर्चे पैकिंग का खर्च, बन्दरगाह तक ढुलाई, निर्यात-कर तथा डाक चार्ज होते हैं। यदि आप

टोकियो से डाक-चार्ज-माफ मूल्य पर माल खरीदें, तो आपका विक्रेता उपरोक्त खर्चे अदा करेगा; उसके बाद जो भी खर्चे होंगे, वे आपको देने पड़ेंगे।

जहाज लदाई-माफ मूल्य (Free on Bord 'or F. O. B. Price)—माल के जहाज पर लादे जाने के समय तक जो भी खर्चे होते हैं, वे सब इस मूल्य में शामिल होते हैं माल के स्थानीय मूल्य के अतिरिक्त इसमे निम्नलिखित व्यय शामिल होते हैं : पैकिंग का खर्च, बन्दरगाह तक ढुलाई,
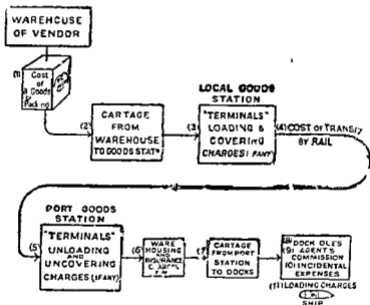
[जहाज लदाई माफ (F. O. B.) मूल्य के अग]

निर्यात कर, डाक खर्च और जहाज पर लदाई। यदि डाक चार्ज-माफ मूल्य में आप लदाई खर्च जोड़ दें, तो जहाज लदाई-माफ मूल्य निकल जाता है। पृष्ठ १११ के चित्र में जहाज लदाई-माफ मूल्य के अगों (Elements) को दिखाया गया है।

किराया-माफ मूल्य (Cost & Freight or C. & F. Price) — इसमें जहाजी किराया अदा करने तक जो भी खर्चे होते हैं, वे सभी शामिल

होते हैं यदि जहाज-लदाई-माफ मूल्य में जहाजी किराया जोड़ दिया जाय तो किराया-माफ मूल्य निकल आता है। इसमें बीमा का व्यय शामिल नहीं होता।

बीमा-खर्च-माफ मूल्य (Cost, Insurance & Freight or C. I. F. Price) में सामुद्रिक बीमा की प्रीमियम अदा करने के समय तक के समस्त व्यय शामिल होते हैं। किराया माफ-मूल्य में बीमा की प्रीमियम को जोड
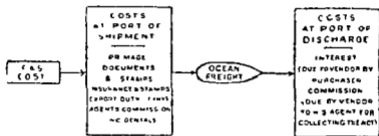
(बीमा-खर्च-माफ मूल्य के अंग)

देने से यह मूल्य (जिसे c. i. f या 'सिफ' कहा जाता है) निकल आता है। विदेशी व्यापार में यह मूल्य बहुत लोकप्रिय है। ऊपर के चित्र में इसके अंगों को दिखाया गया है।

कभी-कभी विद्यार्थीगण यह गलती कर बैठते हैं कि वे किराया-माफ-मूल्य (C. & F. Price) में बीमा खर्च भी शामिल कर लेते हैं। उन्हें यह स्पष्ट समझ लेना चाहिये कि माल के जहाज पर लदवाने के पश्चात् ही सामुद्रिक बीमा कराया जाता है; और किराया अदा कर देने के बाद ही बीमा की प्रीमियम अदा की जाती है। अतः किराया-माफ (C. &. F.) मूल्य में प्रीमियम शामिल नहीं होती; यह बीमा-खर्च-माफ (C. I. F.) मूल्य में शामिल होती है।

सब-खर्च-माफ मूल्य (Franco or Free Price)—इसमें क्रेता (buyer) के गोदाम में माल के पहुँचने तक जो भी खर्चे होते हैं, वे सब शामिल होते हैं। पृष्ठ ११२ पर दिये गये चित्र में, इसके समस्त अंगों को दिखाया गया है।

उपरोक्त क्वोटेशनों के अतिरिक्त, कुछ और भी शब्द प्रयोग में आते हैं जिनका यहाँ जिक्र कर देना आवश्यक प्रतीत होता है।

जहाज तक मूल्य (Ex Ship)—इस क्वोटेशन में माल के जहाज के उद्दिष्ट बन्दरगाह तक पहुँचने के समय तक सारे खर्चे शामिल होते हैं। माल की जहाज से सुपुर्दगी आयातकर्ता को लेनी पड़ती है और उसके पश्चात् के सब खर्चे उसी को अदा करने पड़ते हैं

गोदाम खर्च मूल्य (In Bond)—इस क्वोटेशन में माल के प्रमाणित गोदाम (bonded warehouse) मे जमा करने तक के सारे खर्चे शामिल होते हैं। आयातकर्ता आयात कर अदा करके प्रमाणित गोदाम से माल की सुपुर्दगी ले सकता है। बाद के सारे खर्चे उसे स्वय अदा करने पड़ते हैं।

आयात कर माफ मूल्य (Duty paid)—इस क्वोटेशन में आयात कर अदा किये जाने के समय तक के सारे खर्चे शामिल होते हैं। आयातकर्ता को उद्दिष्ट बन्दरगाह पर, आयात कर अदा किये जाने के पश्चात्, माल की सुपुर्दगी लेनी पड़ती है और बाद के सारे खर्चे स्वय उसको करने पड़ते हैं। माल को अपने गोदाम में पहुँचाने का खर्च वही करता है।

इन मूल्यों की गणना की व्याख्या अध्याय ५७ में की गई है।

§ २. माल को जहाज पर लादना

एक देश से दूसरे देश को माल पहुँचाने के लिये या तो सामुद्रिक मार्ग का सहारा लेना पड़ता है या थल मार्ग का। सामुद्रिक मार्ग को तय करने का साधन जहाज है, और थल-मार्ग में हम ट्रक, रेल आदि का प्रयोग करते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का अधिकांश भाग सामुद्रिक मार्ग द्वारा होता है और आयात या निर्यात किये जाने वाला माल अधिक तर जहाजों द्वारा ही आता जाता है।

जहाजी किराये का प्रसविदा (Contract of Affreightment)

यदि कोई व्यक्ति किसी बन्दरगाह को माल भेजना चाहता है, तो उसे जहाजी कम्पनी से इस काम के लिए प्रसविदा (Contract) करना पड़ता है।

जहाज द्वारा माल ले जाने के ऐसे प्रसविदे को **जहाजी किराये का प्रसंविदा** कहते हैं; और जो रुपया जहाजी कम्पनी इस काम के लिये लेती है यह किराया (Freight) कहलाता है। जहाजी किराये का प्रसविदा अधिकाश में लिखित होता है। इसके दो स्वरूप होते हैं: (१) चार्टर पार्टी या नौभाटक पत्र या जहाजी पट्टा (Charter Party या C/P), और (२) जहाजी बिल्टी (Bill of Lading या B/L)।

चार्टर पार्टी (Charter Party)

जब माल बडी मात्रा में भेजना होता है, तब पूरे जहाज को किराये पर ले लेने में सुविधा और किफायत होती है। वह रुक्का जिसमें जहाज के किराये पर लेने का प्रसविदा लिखा होता है, **चार्टर पार्टी** (Charter Party) या जहाजी पट्टा कहलाता है। चार्टर पार्टी में तीन प्रमुख बातें दी जाती हैं: (१) वे बन्दरगाह जिनके बीच में जहाज का आना-जाना होगा; (२) ले जाने वाले माल का विवरण, (३) किराये की रकम। इनके अतिरिक्त उसमें और भी साधारण बातें जैसे माल उतारने चढ़ाने के लिये दिये जाने वाला समय और किराया अदा करने का ढंग आदि बातें दी रहती हैं।

चार्टर पार्टी या तो पूरे जहाज के किराये के लिये होता है या उसके एक भाग के लिये। यह एक विशेष यात्रा के लिये हो सकता है जब उसे **यात्रा चार्टर** (Voyage Charter) कहते हैं; या वह एक विशेष समय के लिये हो सकता है जब कि उसे **समय चार्टर** (Time Charter) कहते हैं।

जब चार्टर पार्टी के अन्तर्गत किराये के जहाज पर माल चढ़ाया जाता है, तब जहाजी कम्पनी हस्ताक्षर की हुई जहाजी बिल्टी (Bill of Lading) माल भेजने वाले को देती है। ऐसी दशा में, जहाजी बिल्टी केवल जहाज पर माल आ जाने की रसीद भर ही होती है, और प्रसविदे की सारी शर्तें चार्टर पार्टी या नौभाटक पत्र (Charter Party) में लिखी होती है।

जहाजी बिल्टी (Bill of Lading)

जब भेजे जाने वाले माल की मात्रा कम होती है, तब माल भेजने वाला या

पौतिक (Shipper), जहाज द्वारा माल भेजता है। ऐसी दशा में जहाजी किराये का प्रसविदा जहाजी बिल्टी का स्वरूप लेता है। ऐसी दशा में जो जहाजी बिल्टी दी जाती है, वह जहाज पर लादे गये माल का स्वीकृति-पत्र तो होता ही है; साथ में उसमें वे सब शर्तें भी दी होती हैं जिन पर कि माल जहाज द्वारा ले जाया जाता है। इसमें निम्नलिखित बातों का उल्लेख होता है : भेजने वाले या पौतिक का नाम, माल लादने का स्थान और तिथि, उद्दिष्ट बन्दरगाह का नाम, जहाज और उसके कप्तान का नाम, माल का विवरण, उसकी किस्म और अवस्था (Condition), किराये की रकम आदि। जहाजी बिल्टी जहाजी किराये का प्रसविदा है जो अन्य सामान ले जाने वाले सामान्य (general) जहाज द्वारा माल भेजने के सम्बध में प्रयुक्त होता है। साधारणतया "जहाजी बिल्टी" शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में होता है, चार्टर किये हुये समस्त जहाज पर माल लादने के स्वीकृति-पत्र के अर्थ में नहीं।

पाठक को अब स्पष्ट हो गया होगा कि चाहे जहाज चार्टर किया हुआ हो अथवा वह सामान्य जहाज हो, जहाजी बिल्टी का प्रयोग प्रत्येक दशा में होता है। किन्तु इस रुक्के की दो किस्में हैं : (१) चार्टर किये हुये जहाज पर जब माल लादा जाता है, तो उसकी प्राप्ति-स्वीकार (acknowledgment) जहाजी बिल्टी के रूप में की जाती है ; (२) जहाजी बिल्टी जहाजी किराये के प्रस विदे की भाँति भी काम में लाई जाती है और ऐसी दशा में उसमें माल की प्राप्ति स्वीकार ही नहीं लिखी जाती प्रत्युत उसमें माल ले जाने की समस्त शर्तें भी दी होती हैं। पहले अर्थ में जहाजी बिल्टी चार्टर किए हुए जहाज के सम्बध में प्रयुक्त होती है और यह नौभाटक पत्र या चार्टर पार्टी की सहायक होती है, किन्तु दूसरे अर्थ में इसका प्रयोग सामान्य जहाज से सम्बधित होता है और यह स्वय जहाजी किराये का प्रसविदा होती है। अधिकतर "जहाजी बिल्टी" शब्द का प्रयोग जहाजी किराये के प्रसविदे के ही अर्थ में किया जाता है।

जहाजी बिल्टी माल का अधिकार पत्र (Document of Title) होती

है और इसका एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को हस्तातरण हो सकता है । जहाजी बिल्टी धनीजोग (bearer) और नामजोग (Order), दोनों ही प्रकार की होती है । धनीजोग जहाजी बिल्टी वह होती है जिसको उद्दिष्ट बन्दरगाह पर उपस्थित करने वाले किसी भी व्यक्ति को माल सुपुर्द कर दिया जाता है । नामजोग जहाजी बिल्टी वह होती है जिसमें किसी खास व्यक्ति का नाम दिया रहता है और उद्दिष्ट बन्दरगाह पर बिल्टी के पेश करने पर माल की सुपुर्दगी उल्लिखित व्यक्ति को अथवा उसके द्वारा किसी आदेशित व्यक्ति को ही दी जाती है । धनीजोग (bearer) जहाजी बिल्टी का हस्तातरण केवल सुपुर्दगी या डिलीवरी देकर ही किया जा सकता है; किन्तु नामजोग (Order) जहाजी बिल्टी के हस्तातरण के लिए बेचान-लेख (Endorsement) और सुपुर्दगी दोनों ही आवश्यक हैं । हस्तातरण द्वारा पाने वाले व्यक्ति का माल पर उतना ही अधिकार (title) होता है कि जितना कि हस्तातरक (tranferer) का था ।

क्या जहाजी बिल्टी बेचान साध्य रुक्का होता है ?

पाठकों को इस बात का आभास हो गया है कि जहाजी बिल्टी और बेचान-साध्य रुक्के (Negotiable Instrument) में बहुत कुछ समता है । बेचान-साध्य रुक्के की भाँति, जहाजी बिल्टी का हस्तातरण बेचान-लेख और सुपुर्दगी द्वारा किया जाता है, और हस्तातरण द्वारा प्राप्त करने वाला व्यक्ति अपने नाम से अभियोग चला सकता है और दोषी व्यक्ति को मान्य छूट (valid discharge) भी दे सकता है । किन्तु इन समानताओं को देख कर यह नहीं समझना चाहिये कि जहाजी बिल्टी एक बेचान-साध्य रुक्का है क्योंकि इन दोनों में एक महत्वपूर्ण अन्तर है । जैसा हम ऊपर बता चुके हैं, जहाजी बिल्टी के धारक (holder) का माल पर अधिकार हस्तातरक के अधिकार से श्रेष्ठ नहीं हो सकता; किन्तु बेचान-साध्य रुक्के (जैसे बिल आव एक्सचेंज) का नियमानुसार धारक (holder in due course)—अर्थात् वह व्यक्ति जो सद्विश्वास के साथ, ठीक-ठीक स्वरूप में, मुद्दत समाप्त होने के पूर्व ही और किसी एवज में

प्राप्त करता है—हस्तांतरक के अधिकार में दोष होते हुए भी माल पर निर्दोष अधिकार प्राप्त कर लेता है। यह अन्तर बहुत महत्वपूर्ण और मार्के का है, और इसे स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिये। क्योंकि जहाजी बिल्टी बेचान साध्य रुक्के से कुछ बातों में मिलती है और दूसरी बातों में नहीं, इसलिए इसे बहुधा **अर्ध बेचान-साध्य रुक्का** (semi-negotiable instrument) कहा जाता है।

जहाजी बिल्टी के कार्य—जहाजी बिल्टी कई कार्य सम्पन्न करती है : (१) यह जहाज पर लादे गये माल का स्वीकार-पत्र होती है। (२) यह जहाजी किराये का प्रसंविदा होती है और इसमें माल ले जाने की समस्त शर्तें दी होती हैं। (३) यह माल का अधिकार-पत्र है जिसका धारक माल की सुपुर्दगी लेने का अधिकारी होता है, और इसका बेचान लेख और सुपुर्दगी द्वारा हस्तांतरण किया जा सकता है। (४) यह ऋण की सिक्योरिटी (या प्रतिभूति) के रूप में जमा की जा सकती है।

भारतीय जहाजी कम्पनियाँ

यहाँ हम अपने देश की जहाजी कम्पनियों के विषय में दो शब्द कह देना आवश्यक समझते हैं। ससार के प्रत्येक देश के पास अपना निजी जहाजी बेड़ा है और यह बात उन देशों पर भी लागू होती है जिनका महत्व भारतवर्ष से बहुत कम है। किन्तु यह खेद का विषय है कि प्रथम महायुद्ध के समय तक भारत का अपना जहाजी बेडा था ही नहीं और उसे पूर्णतया विदेशी बेड़े पर निर्भर रहना पड़ता था। किन्तु प्रथम महायुद्ध के पश्चात् हमारे देश में स्वदेशी भावना की एक महान् लहर उठी और सेठ नरोत्तम मुरारजी ने सुप्रसिद्ध सिंधिया स्टीम नेवीगेशन कम्पनी लि० की नींव डाली। आधुनिक काल मे जहाजी क्षेत्र में यह प्रथम भारतीय प्रयास था और इसके लिए सेठ नरोत्तम मुरारजी का नाम भारतीय इतिहास मे अमर रहेगा। आरम्भ मे इस राष्ट्रीय संस्था को बहुत सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। शक्तिशाली विदेशी कम्पनियों ने अन्यायपूर्ण स्पर्धा की, बीमा कम्पनियों ने सिंधिया के जहाजों पर लादे गये माल का बीमा

नहीं किया, और विनिमय बैंकों (Exchange Banks) ने सिंधिया के जहाजों पर आने जाने वाले माल के सम्बध क बिलों का भुनाना रोक दिया। किन्तु फिर भी सिंधिया कम्पनी इन सब कठिनाईयों से लड़ती रही और अन्त में उन पर विजयी हुई। अब इसका जहाजी बेड़ा काफी बड़ा है और इसके जहाज प्रत्येक देश के किनारा को चूमते हैं। अब हमारा देश स्वतन्त्र हो गया है और निस्सदेह शीघ्र ही हमारा राष्ट्रीय जहाजी बेड़ा बहुत शक्तिशाली हो जायगा।

§ ३. आयात-निर्यात-कर

जब माल विदेशी बन्दरगाह पर पहुँचता है और जहाज से उतारा जाता हे, तब उस पर कर लगता है जिसका अदा करने क पश्चात् ही आयात कर्ता को माल ले जाने का आज्ञा मिलती है। क्याकि यह कर माल के आयात पर लगाया जाता है, इसलिए इसे हम आयात-कर (Import Duty) कहते हैं। इसी प्रकार जब किसी माल का एक देश में नियात किया जाता है तब कभी-कभी उस पर भी कर लगाया जाता है जिसे निर्यात कर (Export Duty) कहते हैं। यदि आयात निर्यात कर की मात्रा आधिक होती है, तो माल का मूल्य बढ जाता है, और इससे विदेशी व्यापार में बाधा पड़ती है।

आयात और निर्यात करों कि किस्म

आगम, सरक्षण और अधिमान्य कर—आयात निर्यात कर कई प्रकार के होते हैं। उनके लगाने के उद्देश्य की दृष्टि से उनका वर्गीकरण किया जा सकता है। इस दृष्टि से वे आगम कर (revenue duties) हो सकते हैं या सरक्षण कर (protective duties)। साधारणतया सरकार उन्हें केवल आगम या आमदनी का दृष्टि से लगाती है। ऐसी दशा में इनकी दर बहुत नीची होती है और इन्हें आगम कर (Revenue Duties) कहा जाता है। इनके लगाने से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के प्रवाह में बाधा नहीं होती। जिस देश के आयात कर आगम स्वभाव के होते हैं, उसे स्वतन्त्र व्यापार (free trade) वाला देश कहते हैं। किन्तु हाल में माल के आयात पर कर लगाने का उद्देश्य देशी उद्योगा की रक्षा करना रहा है। उदाहरण के लिये, यदि देशी चीनी

बाजार मे दस आने सेर बिकती है और विदेशी चीनी नौ आने सेर, तो विदेशी चीनी पर ५ पैसे सेर आयात कर लगा देने से भारतीय चीनी उद्योग की रक्षा हो सकती है। ऐसी हालत में विदेशी चीनी सवा दस आने सेर बिकने लगेगी और देशी चीनी उससे सस्ती पड़ेगी। सरक्षण की दृष्टि से लगाये जाने वाले करों की दर बहुधा ऊँची होती है और उन्हें संरक्षण कर (Protective Duties) कहते हैं। सरक्षण कर लगाने वाला देश सरक्षण देश कहा जाता है।

कभी-कभी किन्हीं खास देशों से आयात किये जाने वाले माल पर पूरे सरक्षण-कर नहीं लगाये जाते; उनमें कुछ कमी कर दी जाती है। उदाहरण के लिए ब्रिटिश काल में भारत में जो माल ब्रिटिश एम्पायर के देशों से आता था, उस पर और देशों के माल की अपेक्षा कम दर पर आयात-कर लगाया जाता था। इसका उद्देश्य कुछ देशों के माल को अन्य देशों से अधिक मान्य (Preference) देना होता है। इसी कारण इस प्रकार के रियायती करो को अधिमान्य या रियायती कर (Preferential Duties) कहते हैं।

परिमाण-कर और मूल्य-कर—आयात-निर्यात करों का वर्गीकरण उनके ... ने की रीति के अनुसार भी किया जा सकता है। जब वें आयात या निर्यात किये जाने वाले माल के परिमाण (quantity) के हिसाब लगाये जाते हैं—जैसे प्रति टन या प्रति गैलन या प्रति इतना रुपया—तब उन्हें परिमाण कर (specific duties) कहते हैं; किन्तु जब वे आयात या निर्यात किये जाने वाले माल के मूल्य के अनुसार लगाये जाते हैं—जैसे प्रति रुपये या प्रति सौ रुपये पर अमुक रुपया—तब उन्हें मूल्य कर (ad valorem duties) कहते हैं। मूल्य-कर या तो स्थिर मूल्य पर आँका जाता है या बाजार मूल्य पर। स्थिर मूल्य (Tariff Value) माल का वह मूल्य है जो सरकार स्वयं स्थिर कर देती है और यह मूल्य बाजार मूल्य से कम या ज्यादा हो सकता है। बाजार-मूल्य वह मूल्य है जिस पर माल बाजार में बेचा जा सकता है। माल के ठीक ठीक बाजार मूल्य का अनुमान लगाना सर्वदा सभव नहीं, ऐसी दशा में माल के बीजक वाले मूल्य में उसका एक प्रतिशत लाभ के रूप में जोड़ देते हैं, और इस योग को

बाजार मूल्य मान लिया जाता है। हमारे देश में अधिकाश आयात-निर्यात-कर मूल्य-कर हैं।

आयात निर्यात-कर सूची (Tariff) आयात और निर्यात किये जाने वाले माल पर लगाये जाने वाले करों की सूची को टैरिफ या आयात निर्यात-कर सूची कहते हैं। यह बहुत ही महत्वपूर्ण वस्तु है।

भारत में आयात-निर्यात-कर

हमारे देश में आयात किये जाने वाले और यहाँ से निर्यात किये जाने वाले बहुत से माल पर कर लगाया जाता है, जो भारत सरकार को जाता है। यह कर आगम-कर और संरक्षण-कर दोनों ही प्रकार का होता है और अधिकतर मूल्यानुसार लगाया जाता है। आयात-करों की सामान्य दर १५ प्रतिशत है; किन्तु कुछ विलासिता की वस्तुओं पर और रक्षित माल पर अधिक कर भी लगाये जाते हैं। कुछ ऐसी भी वस्तुएँ हैं—जैसे पुस्तकें और खेती के औजार—जिनका आयात प्रोत्साहित करने के लिये कर-मुक्त कर दिया गया। हमारे देश में कुछ निर्यात कर भी लगाये जाते हैं जैसे जूट या सन पर।

विवेकपूर्ण संरक्षण (Discriminating Protection)

अब हम भारतीय आयात-निर्यात-कर सूची या टैरिफ पर कुछ प्रकाश डालेंगे। भारत कृषि-प्रधान देश है। एक समय था जब कि उसके उद्योग बहुत उन्नत अवस्था में थे, किन्तु अँग्रेजी राज्य में यन्त्र के बने हुए माल की स्पर्धा के कारण इन उद्योगों का विनाश हो गया। इसके पश्चात् जब भारत में ही कारखाने स्थापित करने के प्रयास किये जाने लगे, तब देशी माल का मूल्य विदेशी माल के मूल्य से अधिक होने लगा और देशी कारखानों के बन्द करने की नौबत आ गई। अतएव देशी कारखानों को सफल बनाने के लिए यह आवश्यक हो गया कि विदेशी माल पर इतना आयात-कर लगाया जाय कि वे देशी माल से कम मूल्य पर न बिक पावें। दूसरे शब्दों में, संरक्षण की नीति को अपनाना आवश्यक हो गया।

यह बात स्पष्ट तो बहुत पहले ही हो गई थी, किन्तु प्रथम महायुद्ध के पश्चात् ही इसे रचनात्मक रूप दिया गया। सन् १९२१-२२ के फिस्कल

कमीशन (Fiscal Commission) की सिफारिशों के अनुसार यह घोषित कर दिया गया कि सरक्षण चाहने वाले उद्योग को सरकार के पास एक आवदन पत्र भेजना चाहिये। तब सरकार एक टैरिफ बोर्ड द्वारा उस उद्योग की जाँच करावेगी। यदि जाँच द्वारा यह पता लगे कि उद्योग की उन्नति बिना सरक्षण के नहीं हो सकती, उद्योग को स्थानीय सुविधाएँ प्राप्त हैं और कुछ काल बाद सरक्षण की आवश्यकता दूर हो जायगी, तो टैरिफ बोर्ड सरक्षण दे देने की सिफारिश करेगा। यह सिफारिश धारा सभा के सामने रक्खी जाने लगी जो इस बात का अन्तिम निर्णय करती थी। इस प्रकार प्रत्येक उद्योग को सरक्षण नहीं मिलता था किन्तु उन्हीं उद्योगों को दिया जाता था जिन्हे उसकी वास्तविक आवश्यकता होती थी। इसे विवेकपूर्ण सरक्षण (Discriminating Protection) कहा जाता था। स्वतन्त्रता के पश्चात् सरकार इस दिशा में नई नीति बना रही है।

क्वोटा (Quota), अनुग्रह (Bounty) और प्रतिशोध (Retaliation)

क्वोटा-प्रणाली—कभी कभी दो देशों में यह समझौता हो जाता है कि वे एक दूसरे के माल को निश्चित मात्रा अथवा निश्चित अनुपात में खरीद लेंगे। ऐसे समझौता को क्वोटा प्रणाली कहा जाता है। भारत जापान हाल में किये गये विदेशी व्यापारिक समझौते क्वोटा प्रणाली पर ही आधारित हैं।

अनुग्रह या बाउटी (Bounty)—कभी कभी किसी देश की सरकार यह चाहती है कि देश में किसी माल की उत्पत्ति को या देश से किसी माल के नियात को प्रोत्साहित किया जाय जिससे कि वह कुछ काल में विदेशी माल का मुकाबला करने लगे। अत सरकार बनाये जाने वाले या निर्यात किये जाने वाले माल पर उसकी मात्रा के अनुसार कुछ धन पारितोषक (Reward) के रूप मे देता है। इसे अनुग्रह या बाउटी (bounty) कहा जाता है। अनुग्रह या बाउन्टी का उद्देश्य किसी नये उद्योग या राष्ट्रीय महत्व के उद्योग को प्रोत्सा हित करना होता है।

सहायता या सब्सिडी (Subsidy)—किसी नये उद्योग को प्रोत्साहन

देने का एक और तरीका यह है कि उसके कारखानों को कुछ रकम वार्षिक रूप में कुछ समय तक दी जाय या केवल एक ही बार दे दी जाय। इसे सहायता या सब्सिडी (subsidy) कहते हैं।

प्रतिशोध या रिटेलियेशन (Retaliation)—जब कोई देश किसी विदेश से आयात किये माल पर कोई नया कर लगा देता है या कर की दर ऊँची कर देता है, तब दूसरा देश भी उस देश से आने वाले माल पर कर लगा देता है या आयात कर की मात्रा बढ़ा देता है। उदाहरण के लिए, यदि भारत अँग्रेजी सूती कपड़े पर आयात कर पच्चीस प्रतिशत बढ़ा दे, तो कदाचित् इंगलैण्ड भी आयात किये जाने वाले भारतीय माल उतने ही प्रतिशत से आयात-कर बढ़ा देगा। इस प्रकार प्रतिशोध के रूप में आयात-कर के बढ़ाने को प्रतिशोध (retaliation) कहते हैं।

विदेशी चुंगी घर (Customs House)

प्रत्येक बन्दरगाह पर सरकार ने विदेशी चुंगीघर खोल रक्खे हैं जिनका काम आयात-निर्यात-कर वसूल करना होता है। निर्यात किये जाने वाला माल डॉक (dock) पर तभी भेजा जा सकता है जब कि निर्यात कर चुका दिया जाय, इसी प्रकार आयात किया हुआ माल डाक से या प्रमाणित गोदाम (Bonded Warehouse) से आयात-कर चुका देने पर ही हटाया जा सकता है।

आयातकर्ता या निर्यातकर्ता को विदेशी चुंगीघर का अधिपत्र (Warrant) भरना पड़ता है जिसमें माल का सम्पूर्ण व्यौरा देना होता है। विदेशी चुंगी घर के अफसर उस व्यौरे की जाँच करते हैं। यदि वे आवश्यक समझें, तो वे माल के बन्डल खुलवा कर परीक्षा भी कर सकते हैं। वे इस बात को सावधानी से देखते हैं कि आयात किये गये माल की मात्रा और उद्‌गम स्थान (Place of Origin) ठीक ठीक लिखे गये हैं। यह इसलिए किया जाता है कि आयात-निर्यात-कर पूरा पूरा वसूल किया जा सके और निर्दोष क्रेताओं को ठगे जाने से बचाया जा सके। यदि कपड़े के थान की लम्बाई लिखी हुई लम्बाई से कम हो

या जापान में बना माल इगलैण्ड में बना हुआ घोषित किया जाय, तो वे उचित कार्रवाई करते हैं।

माल विदेश से डाकखानों भी द्वारा आता-जाता है। ऐसी पार्सलों पर डाक खानों मे ही आयात निर्यात कर वसूल कर लिया जाता है। प्रत्येक पार्सल पर माल का पूरा विवरण देते हुये एक घोषणा पत्र चिपकाना पड़ता है, जिसके आधार पर डाकखाने वाले कर की मात्रा का हिसाब लगाते हे। सन्देह होने पर पार्सल खोला भी जा सकता है। साधारणतया ऐसा नहीं किया जाता किन्तु खासकर युद्ध काल मे पार्सल खोल कर देखे जाते हैं ताकि शत्रु देशों को कोई उपयोगी माल न जा सके और देश में कोई हानिकारक वस्तु आ भी न सके। हम पृष्ठ १२५ पर एक चित्र देते हैं जिसमें डाकखाने वालों को पार्सलों के खोलने पर जो वस्तुएँ युद्ध के समय में मिली थीं, वे दिखाई गई हैं।

प्रमाणित गोदाम (Bonded Warehouse)

कभी कभी आयात कर्ता कुल आयात कर एकबारगी अदा नहीं करना चाहता या माल का पुनर्निर्यात करना चाहता है जिस अवस्था में उसे कर नहीं देना पडता। तब वह विदेशी चुगीघर के अधिकारी को इस बात का आवेदन पत्र देता है कि माल प्रमाणित गोदाम में रखवा दिया जाय। प्रमाणित गोदाम उस गोदाम को कहते हैं जिसमें आयात कर्ता आयात-कर की अदायगी तक या माल क पुनर्निर्यात के समय तक माल रखवा सकते हैं।

आवेदन पत्र प्राप्त होने पर विदेशी चुगीघर के अधिकारी अपनी देख रेख में माल को प्रमाणित गोदाम म रखवा देते हैं। यदि आयात कर्ता माल की सुपुर्दगी लेना चाहता है, तो वह आयात कर अदा करके माल छुड़ा सकता है। अगर वह माल का निर्यात चाहता है, तो उसे विदेशी चुङ्गी घर के अधिकारियों को एक बाड भर कर देना पड़ता है और तब वे अपनी देख रेख में माल जहाज पर लदवा देते हे।

यह आवश्यक नहीं कि प्रमाणित गोदाम सरकार की ही सम्पत्ति हो। हाँ, यदि वे किसी व्यक्ति, फर्म या कम्पनी की सम्पत्ति हैं, तो उन्हें गोदाम सरकार के आदेश के अनुसार बनवाने पड़ते हैं। फिर उन्हें सरकार को एक बडी रकम का

बाड भी देना पडता है जो गोदाम के उचित प्रबन्ध का आश्वासक होता है। इसके अतिरिक्त ऐसे गोदाम पर उनके स्वामियों तथा विदेशी चुङ्गीघर के अधि-
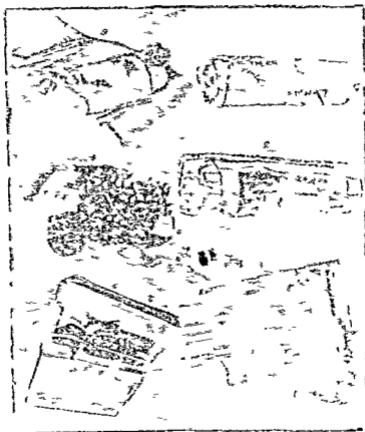
Picture showing some War Discoveries by the Postal Censor

कारियों दोनों का संयुक्त नियन्त्रण रहता है। यदि प्रमाणित गोदाम से बिना विदेशी चुंगीघर के अधिकारियों के आज्ञा के कोई माल निकाल कर आयात

कर्ता को सौंप दिया जाय, तो गोदाम के स्वामी तथा आयात कर्ता दोनों को ही भारी दण्ड देना होता है।

उद्गम का प्रमाण पत्र (Certificate of Origin)

जब एक देश किसी विशेष देश से आये हुये माल पर कम आयात कर लगाता है, तो आयात कर्ता अपने निर्यात कर्ता से यह प्रार्थना करता है कि वह अपने देश के किसी सुयोग्य अधिकारी से इस बात का प्रमाण पत्र भेज दे कि माल उसी के देश म बना है। ऐसे प्रमाण पत्र को उद्गम का प्रमाण पत्र (Certificate of Origin) कहते हैं। उद्गम का प्रमाण-पत्र वह रुक्का होता है जिसमें निर्यात किये जाने वाले माल उद्गम स्थान की घोषण की जाती है। यह प्रमाण पत्र बीजक के पीछे छपा रहता है। वह विदेशी चुगी घर से भी प्राप्त किया जा सकता है। यह आवश्यक है कि इस पर निर्यात कर्ता या उसके एजेन्ट के हस्ताक्षर हों। कुछ चेम्बर आव कामर्स भी उद्गम के प्रमाण पत्र देते हैं जिन पर कि चैम्बर के मन्त्री का हस्ताक्षर होता है। यह प्रमाण पत्र उपस्थित करने पर आयात कर नीची दर पर लगाया जाता है।

आयात कर की फिरती (Drawback)

जब आयात किये हुए माल का, जिस पर आयात कर अदा कर दिया जाता है, निर्यात किया जाता है, तो आयात कर वापस कर दिया जाता है। इसे **आयात कर की फिरती** कहते हैं। इस फिरती को वसूल करने के लिये व्यापारी को जहाजी बिल (Shipping Bill) के साथ एक घोषणा पत्र लगाना पड़ता है और इन कागजों को माल के निर्यात के पहले ही विदेशी चुगीघर के अधिकारियो के सामने प्रस्तुत करना पड़ता है। जब माल का निर्यात हो जाता है, उसके पश्चात् आयात कर की फिरती की जाती है।

उत्पादन कर (Excise Duties)

आयात निर्यात कर उत्पादन कर से भिन्न होते हैं। उत्पादन कर देश के अन्दर कुछ खास वस्तुओं की उत्पत्ति पर लगाये जाते हैं। उदाहरण के लिये, हमारे देश में चीनी, दियासलाई, गाँजा और शराब पर उत्पादन कर लगाया

जाता है। इसके विपरीत, आयात-निर्यात-कर माल के आयात और निर्यात पर लगाया जाता है।

चुंगी (Octroi Duty)

म्यूनिसिपल बोर्ड तथा अन्य स्थानीय संस्थाएँ अपने शहर में आने वाले माल पर कुछ कर लगाती हैं, जिसे चुंगी कहा जाता है। यदि बाद को यह माल शहर के बाहर भेजा जाता है, तो चुङ्गी लौटा दी जाती है। किन्तु यदि चुङ्गी की रकम एक निश्चित न्यूनतम रकम से कम हो, तब उसकी फिरती नहीं होती।

§ ४. विदेशी भुगतान

विदेशी सौदे का अन्तिम सोपान विदेशी आयात कर्ता को रुपया अदा करना या विदेशी आयात-कर्ता से रुपया वसूल करना होता है। यह आसान काम नहीं है। इस सम्बन्ध में दो कठिनाइयाँ सामने आती हैं। एक तो विभिन्न देशों के चलन की विभिन्नता और दूसरी है स्वयं भुगतान का तरीका।

पहली कठिनाई बहुत तात्विक है। विभिन्न देशों के चलन अलग अलग तो होते ही हैं, साथ ही जिन दरों पर इन चलनों का अदल-बदल होता है वे भी रह-रह कर परिवर्तित होते रहते हैं। यदि विक्रेता क्रेता के चलन में भुगतान स्वीकार करने को राजी हो जाता है, तो हो सकता है कि विनिमय की दर (exchange rate) उसके प्रतिकूल बदल जाय जिसके परिणामस्वरूप उसे अपने चलन में आशा से कम रकम मिले। इसी प्रकार यदि क्रेता विक्रेता के चलन में भुगतान करने के लिए तैयार हो जाता है, तो हो सकता है कि विनिमय की दर प्रतिकूल हो जाने के कारण उसे अपने चलन में अनुमान से अधिक द्रव्य देना पड़े। किन्तु विनिमय की दर में होने वाले परिवर्तन को रोका नहीं जा सकता। किन्हीं दो देशों के बीच में जितने सौदे होते हैं, वे व्यापारिक प्रथा के अनुसार अधिकतर उनमें से एक ही देश के चलन में किये जाते हैं। उदाहरण के लिए, इंगलैण्ड और भारत के बीच में होने वाले सारे सौदे पौंड स्टर्लिङ्ग में होते हैं।

रुक्के वाले बिल (Documentary Bill)

किसी विदेशी व्यक्ति को रुपये भेजने के कई तरीके हैं। उनमें से सर्वश्रेष्ठ तरीका रुक्के वाले बिलों द्वारा भुगतान करने का है। यदि आयात कर्ता पर निर्यात कर्ता को पूरा विश्वास है, तो वह उसे जहाजी बिल्टी, बीजक और बीमा पत्र (Insurance Policy) सीधे ही भेज सकता है और उस पर एक सादा बिल लिख सकता है। यदि आयात-कर्ता विश्वस्त हुआ, तो वह बिल अवश्य स्वीकार कर लेगा। किन्तु यह प्रथा खतरे से खाली नहीं और इसलिए विदेशी व्यापार में यह अधिक प्रचलित नहीं। अधिक प्रचलित प्रथा यही है कि निर्यात कर्ता आयात कर्ता पर बिल लिखता है (जिसमें वह उसे एक निश्चित रकम किसी उल्लेखित व्यक्ति को अथवा उसके द्वारा आदेशित किसी अन्य व्यक्ति को अदा करने का आदेश देता है), और इस बिल में जहाजी बिल्टी, बीजक और सामुद्रिक बीमा-पत्र नत्थी कर देता है। जिस बिल में ये सब रुक्के नत्थी होते हैं वह रुक्के वाला बिल (documentary bill) कहलाता है। निर्यात कर्ता रुक्के वाला बिल अपने बैंक को इस आदेश के साथ सौंप देता है कि नत्थी किये हुये कागजात आयात कर्ता को तभी दिये जायँ जब कि वह या तो बिल स्वीकार कर ले या उसका भुगतान कर दे। इस प्रकार निर्यात कर्ता को यह निश्चय हो जाता है कि बिल की स्वीकृति या भुगतान के पश्चात् ही आयात कर्ता को आवश्यक कागजात दिये जायँगे।

१ डी ए बिल (D/A or Documents against Acceptance Bill)

भुगतान का पहला तरीका डी/ए बिल के प्रयोग के द्वारा है। विक्रेता विदेशी क्रेता पर एक बिल लिखता है और उसमें ऊपर बताये गये कागजात नत्थी कर देता है। फिर वह इस बिल को अपने बैंक को इस आदेश के साथ सौंप देता है कि साथ वाले कागजात आयात कर्ता को तब ही दिये जायँ जब कि वह बिल स्वीकार कर ले। ऐसे बिल को डी/ए बिल कहते हैं। विक्रेता का बैंक ऐसे बिल को क्रेता के देश में स्थित अपनी शाखा या अपने एजेंट को भेज देता है जो आयात कर्ता से बिल स्वीकार करा कर उसे कागजात दे देते

हैं। डी/ए बिल की मुद्दत बहुधा दो या तीन महीने की होती है। मुद्दत बीत जाने पर बैंक बिल को आयात-कर्ता के सामने भुगतान के लिए उपस्थित करता है जो उसका भुगतान कर देता है। जब इसका समाचार विक्रेता के बैंक को मिलता है, तब वह बिल का रुपया विक्रेता के खाते में जमा कर लेता है।

विक्रेता डी/ए बिल पर माल के निर्यात करने को तभी राजी होगा जब उसे यह विश्वास हो कि आयात कर्ता की आर्थिक अवस्था अच्छी है और वह ईमानदार है जिससे कि मियाद चुकने पर वह बिल का भुगतान कर देगा। यदि विक्रेता आयात कर्ता को उधार नहीं देना चाहता तो वह इस आधार पर सौदा करने को सहमत नहीं होगा।

२ डी/पी बिल D/P or Documents against Payment Bill)

जब कि विक्रेता आयात कर्ता को माल उधार नहीं देना चाहता और चाहता है कि उसे कागजात कुल भुगतान कर देने पर ही सौंपे जायँ, तो वह आयात कर्ता पर दर्शनी (demand) बिल लिखता है और उसमें आवश्यक कागजात नत्थी कर देता है। वह रुक्के वाला बिल अपने बैंक को इस आदेश के साथ देता है कि आयात कर्ता को बिल का भुगतान करने के बाद ही कागजात दिये जायँ। बैंक रुक्के वाले बिल को, आयात कर्ता के देश में स्थित अपनी शाखा या एजेंट को भेज देता है जो क्रेता से रुपया वसूल करके उसे कागजात सौंप देता है। वसूली का समाचार मिलने पर बैंक विक्रेता के खाते में बिल का रुपया जमा कर देता है। ऐसे बिल को डी/पी बिल कहते हैं।

३ बैंक पर लिखा गया बिल

कभी कभी निर्यातकर्ता, आयात कर्ता के बजाय किसी बैंक पर बिल लिखना अधिक पसन्द करता है, क्योंकि एक तो बैंक पर लिखे गये बिल के प्रतिष्ठित (honour) होने की अधिक सम्भावना होती है और दूसरे बैंक पर लिखा गया बिल कम बट्टे पर भुन जाता है। ऐसी दशा में क्रेता अपने बैंक से इस बात का प्रबन्ध कर लेता है कि विक्रेता उस पर बिल लिखे और वह बैंक उस

बिल की प्रतिष्ठा करे। जहाँ तक विक्रेता का सम्बन्ध है, वह बिल लिख कर और उसमें आवश्यक कागजात नत्थी करके अपने बैंक को दे देता है। यह बैंक बिल को देनदार बैंक के सामने प्रस्तुत करता है। यदि वह डी/ए बिल हुआ तो देनदार बैंक उसे स्वीकार कर लेता है और यदि वह डी/पी बिल हुआ तो वह उसका भुगतान कर देता है। इसके बाद साथ के कागजात उस बैंक को दे दिये जाते हैं।

४. भुगतान होने पर रुक्के सौंपना या सी/डी (Cash against Documents or C/D)

भुगतान होने पर रुक्के सौंपने या सी/डी प्रथा भी बहुत अच्छी है। अक्सर विदेशी खरीदार नकद रुपया देने को तो राजी होता है किन्तु वह माल रवाना हो जाने के बाद तथा आवश्यक कागजात उसके या उसके प्रतिनिधि के हाथ में आ जाने पर ही रुपया अदा करना चाहता है। ऐसी दशा में वह अपने बैंक के द्वारा विक्रेता के देश में स्थित किसी बैंक में कुछ रुपया जमा कर देता है, और आदेश दे देता है कि जब विक्रेता आवश्यक रुक्के उस बैंक को दे तभी बीजक का रुपया उसे दिया जाय।

यह प्रथा विक्रेता को बहुत उपयोगी सिद्ध होती है। यदि उसे किसी विदेशी खरीदार का पहला आर्डर मिले और वह उससे नकद रुपया माँगे तो सम्भव है वह खरीदार को नाराज कर दे। साथ ही साथ वह उसे माल उधार भी नहीं देना चाहता। ऐसी दशा मे भुगतान होने पर रुक्के सौंपने की प्रथा उसकी समस्या हल कर देती है।

५. विदेशी बैंक ड्राफ्ट

किसी विदेशी को विदेशी बैंक ड्राफ्ट द्वारा आसानी से रुपया अदा किया जा सकता है। विदेशी बैंक ड्राफ्ट एक बिल आव एक्सचेंज होता है जो एक बैंक अपनी विदेशी शाखा या किसी दूसरी विदेशी बैंक पर लिखता है और जिसमें वह उसे इस बात का आदेश देता है कि वह उसमें लिखी हुई रकम बताये गये व्यक्ति या उसके आदेशित व्यक्ति को अदा कर दे। आयात-कर्ता एक निश्चित रकम का बैंक ड्राफ्ट अपने बैंक से खरीद कर विदेशी विक्रेता

को भेज सकता है जिसका रुपया विक्रेता अपने बैंक द्वारा वसूल कर लेता है।

यदि खरीदार नया ग्राहक है, तो विक्रेता उसे ऋण नहीं दे सकता; और ऐसी हालत में खरीदार के आर्डर के साथ ही बैंक ड्राफ्ट भेजना चाहिये। किन्तु यदि विक्रेता क्रेता से पुराने सम्बन्ध होने के कारण उधार देता है, तो क्रेता को ऋण की अवधि बीत जाने पर बैंक ड्राफ्ट भेजना चाहिये। कभी-कभी यह भी तय होता है कि क्रेता को जैसे ही आवश्यक कागजात मिलेंगे, वैसे ही वह विक्रेता को बैंक ड्राफ्ट रवाना कर देगा।

बन्धक-पत्र (Letter of Hypothecation)

यदि कोई निर्यात कर्ता आयात कर्ता पर रुक्केवाला बिल लिखता है, तो उसे रुपया मिलने में कुछ न कुछ समय अवश्य लगेगा। अतः वह मुद्दती बिल को किसी बैंक से भुना लेता है या उसके ऊपर उससे रुपया उधार ले लेता है। (यदि बिल दर्शनी हुआ, तो वह बैंक को वसूली के लिये उसे दे देता है और बैंक से रुपया तुरन्त ही दे देने की प्रार्थना करता है।) ऐसी दशा में बैंक उससे एक बन्धक पत्र लिखा लेते हैं। बन्धक-पत्र बैंक को यह अधिकार देता है कि यदि बिल की अप्रतिष्ठा (dishonour) हो तो बैंक माल को बेच दे। जब कि निर्यात-कर्ता बराबर निर्यात करता रहता है और उसे बराबर बैंक से रुपया लेने की आवश्यकता पड़ती है, तो वह भविष्य के लिये सौदों के लिये एक सामान्य बन्धक-पत्र (General Letter of Hypothecation) दे देता है।

Letter of Hypethecation

London
6th January 1956

To the Directors of the *Midland Bank, Limited,*

London

Gentlemen,

We enclose herewith 60 days' sight bill drawn by us on Messrs Smith Lombard and Sons Bombay for £ 300 and forward the following shipping documents as security

(1) Invoice for bales of silk valued at £ 300

(2) Insurance Policy, £ 300 and

(3) B/L for bales marked S L / Bombay 1/5 per S S *Scindia* for London to Bombay The documents should be surrendered on the payment of the bill

In case the said bill is dishonoured, we hereby authorize you to cause the said goods to be sold on our account at our risk and subject to the usual charges for commission and all incidental expenses

Yours faithfully,
ATKINSON ATKINSON & SONS

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१ विदेशी ऋणदाताओं को भुगतान करने की रीतियों का वर्णन कीजिये। (उत्तर प्रदेश, १६५३)

२ C i f मूल्य से क्या आशय है? कौन कौन से खर्चे स्थानीय मूल्य में जोड़ना आवश्यक है जिनसे किसी विदेशी आयातकर्ता को C i f मूल्य

की सूचना दी जा सके ? एक उदाहरण देकर समझाइये। (उत्तर प्रदेश, १९५३)

३. जहाजी बिल्टी की परिभाषा दीजिये। इसके क्या कर्तव्य हैं ? बेचान-साध्य रुक्के की परिभाषा दीजिये और यह बताइये कि जहाजी बिल्टी इस प्रकार के रुक्के से किन बातों में कम है ? (यू० पी०, १९३१, राजपूताना, १९४०)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

४. काउसलर बीजक, उद्गम का प्रमाणपत्र तथा बिल आव-लेडिंग का वर्णन दीजिये तथा यह बताइये कि निर्यात व्यापार में उनका क्या काम होता है ? (राजपूताना, १९५३)

५. एक व्यापारी F. A. S. मूल्य क्वोट कर सकता है जिसमें माल को जहाज के किनारे तक पहुँचाने का व्यय शामिल होता है। पाँच प्रकार के और मूल्य बताइये जो माल के सम्बन्ध में क्वोट किये जाते हैं, उनके सांक्षिप्त शब्द दीजिये और बताइये कि उनका ठीक-ठीक अर्थ क्या है ? (राजपूताना, १९५१)

६. कप्तान की रसीद क्या होती है ? इसमें और जहाजी बिल्टी में क्या अन्तर होता है ? यह किस अवस्था में दी जाती है ? अच्छी (Clean) और खराब (Foul) रसीद को समझाइये। (राजपूताना, १९५०)

७. रुक्के वाला बिल आव एक्सचेंज क्या होता है ? एक काल्पनिक बिल इस प्रकार का बनाइये। (राजपूताना, १९४७)

८. चार्टर पार्टी और जहाजी बिल्टी में भेद बताइये। प्रत्येक के क्या कर्तव्य हैं ? (राजपूताना, १९४४)

पटना, इंटर कामर्स

९. निर्यातकर्ता अपने माल के मूल्य का भुगतान विदेशों से कैसे प्राप्त करता है। ? (पटना, १९५३)

१०. इन्डेंट, जहाजी बिल, तथा बन्धक-पत्र (Letter of Hypothecation) पर टिप्पणी लिखिये। (पटना, १९५३)

११. क्या जहाजी बिल्टी और चार्टर पाटा एक ही चीज है ? प्रत्येक के कर्तव्यों की विवेचना कीजिये । (पटना, १९४६ पूरक)

१२. आप आयात-निर्यात कर से क्या समझते हैं ? इन करों के लगाने की विभिन्न रीतियाँ बताइये । (पटना, १९४८ पूरक)

१३. देश के वाणिज्य में बिल आव एक्सचेन्ज का क्या महत्व होता है ? विदेशी बिल आव एक्सचेन्ज का एक उदाहरण दीजिये । (पटना, १९४८)

१४ विदेशी भुगतान के विभिन्न तरीके क्या हैं ? किन्हीं दो की विस्तार पूर्वक विवेचना कीजिए । (पटना, १९४८)

१५. आयात निर्यात-कर की मात्रा किस प्रकार निर्धारित की जाती है ? माल के मूल्य का सही अनुमान करने के लिये किन उपायों को काम में लाया जाता है ? (बिहार, १९४६)

सागर, इन्टर कामर्स

१६. यदि एक व्यापारी अपना माल दूसरे देश में बेचना चाहता है, तो ऐसे उपक्रम को आरम्भ करने के पूर्व कौन सी प्रारम्भिक जानकारी आवश्यक है ? माल निर्यात करने की पद्धति सक्षेप में समझाइये । (सागर, १९५५)

१७ जहाजी बिल्टी क्या होती है ? इसका कौन और कब निर्गम करता है ? इसमें क्या ब्यौरा दिया रहता है ? (सागर, १९५१)

नागपुर, इन्टर कामर्स

१८. (अ) जहाजी बिल्टी क्या होती है ? क्या यह रुक्कों का अधिकार-पत्र होती है ? यदि हाँ, तो इसमें क्या गुण होते हैं ? (आ) जहाजी बिल्टी को किस सीमा तक बेचानसाध्य रुक्का कहा जा सकता है ? (नागपुर, १९४५)

बनारस, इन्टर कामर्स

१९. जहाजी बिल्टी की परिभाषा दीजिये । यह क्या कर्तव्य सम्पन्न करती है ? (बनारस, १९४८)

दिल्ली, हायर सेकिंडरी

२०. जहाजी बिल्टी और चार्टर पार्टी का अन्तर बताइये। क्या जहाजी बिल्टी बेचानसाध्य रुक्का होती है ? (दिल्ली, १९५१)

२१. निम्नलिखित का अर्थ बताइये : (अ) प्रवेश बिल, (आ) उत्पादन कर, (इ) सपत्र बिल, (ई) अच्छी जहाजी बिल्टी। (दिल्ली, १९५०)

२२. निम्नलिखित का अर्थ स्पष्ट कीजिये : (अ) प्रवेश बिल (Bill of Entry); (आ) उत्पादन कर; (इ) रुक्केवाला बिल; (ई) अच्छा बिल (Clean Bill)। (देहली, हायर सेकिंडरी, १९४९)

२३. निम्नलिखित का अर्थ बताइये F. O. B.; B/L; C. I. F., Ad valorem, and specific duties. (देहली, हायर सेकिंडरी, १९४७)

मध्यभारत, इन्टर कामर्स

२४. "F. O. B. मूल्य की अपेक्षा C. I. F. मूल्य पर माल खरीदने में अधिक लाभ होता है।" क्या आप इस कथन से सहमत हैं ? यदि हाँ, तो फिर व्यापारी F. O. B. मूल्य पर माल क्यों खरीदते हैं ! यदि नहीं, तो मतभेद के कारण बताइये। (मध्यभारत, १९५२)

उस्मानियाँ, इन्टर कामर्स

२५. निम्नलिखित के अन्तर उदाहरण सहित बताइये : (अ) आयात निर्यात कर और उत्पादन-कर, (आ) परिमाण-कर और मूल्य कर। (उस्मानिया, १९५२)

अध्याय ४२

निर्यात व्यापार

अब हम देश से माल के निर्यात करने की रीति का अध्ययन करेंगे। हमारे यहाँ से अधिकतर कच्चा या अधपका माल बाहर जाता है, यद्यपि पक्के माल का निर्यात इधर कुछ समय से बढ़ चला है। माल के निर्यात के दो माध्यम है :

(१) *निर्यात या कमीशन एजेंट*—सब महत्वपूर्ण बन्दरगाहों पर निर्यात एजेंटों के दफ्तर स्थापित हैं, जिनका काम विदेशों से आये हुये भारतीय माल के आर्डरों को पूरा करना है। कुछ विदेशी फर्म भारतीय माल बड़ी मात्रा में खरीदते हैं, अतः खरीदारों के लिए यह हमारे देश में अपनी शाखायें खोले हुये हैं। प्रत्येक दशा में ऐसे फर्मों या शाखाओं के एजेंट देश के विभिन्न भागो में घूमते-फिरते हैं और जहाँ भी माल का भाव सबसे सस्ता होता है, वे माल वहाँ से खरीद कर फर्म या शाखा को भेज देते है जो माल को विदेशी आर्डरों के अनुसार विदेशों को रवाना कर देते हैं।

(२) *भारतीय व्यापारी*—कभी-कभी विदेशी व्यापारी बड़े-बड़े भारतीय कारखाने वाले या थोक विक्रेताओं के पास सीधा आर्डर भेज देते हैं। भारतीय व्यापारी ऐसी दशा में माल को बिना निर्यात एजेंट के माध्यम के द्वारा विदेशो को निर्यात कर देते हैं।

विदेशी सौदे की वास्तविक गतिविधि (course) के अध्ययन के लिए पाठकों को अध्याय ४० मे दिये हुये दो चित्रो को सावधानी से मनन करना चाहिये।

मान लीजिये अहमदाबाद के कपास के व्यापारी तथा निर्यात एजेंट श्री

रामचन्द्र खूबचन्द्र को लङ्काशायर के मैसर्स एटकिसन एण्ट एटकिंसन के पास कपास का निर्यात करना है। कपास के निर्यात की निम्नलिखित गतिविधि होगी।

१ इन्डेण्ट (Indent)

श्री रामचन्द्र खूबचन्द्र मेसर्स एटकिसन एण्ड एटकिंसन के इडेंट मिल जाने के पश्चात् ही कपास का निर्यात करेंगे। लङ्काशायर का फर्म इडेंट भेजने के पहले पत्र या केबिलग्राम द्वारा अहमदाबाद के फर्म से समस्त आवश्यक शर्ते तय कर लेगा, और जब सब बातें तय हो जायँगी तभी वह उचित रूप में इडेंट लिख कर अहमदाबाद के फर्म को भेजेगा। यदि दोनो फर्मों मे व्यापारिक सम्बन्ध पुराने हैं और वे एक दूसरे पर विश्वास करते हैं, तो इन्डेंट बिना किसी पूर्व पत्र व्यवहार के भी भेजा जा सकता है। ऐसी दशा में जब अहमदाबाद का फर्म लङ्काशायर के फर्म के आर्डर की स्वीकृति लङ्काशायर भेज देता है, तब प्रसंविदा (Contract) लागू हो जाता है। इडेंट आने पर यदि कोई इस विषय पर पहले पत्र व्यवहार हुआ हो तो वह उससे मिलान करके यह जाँच करेगा कि इडेंट में मूल्य आदि ठीक ठीक लिखे गये हैं।

इन्डेंट—यहाँ यह बताना आवश्यक है कि इडेंट वास्तव में क्या है। कुछ लोगो की धारणा है कि इडेंट आर्डर का दूसरा नाम है, किंतु यह धारणा निर्मूल है। वास्तव में इडेन्ट किसी माल को खरीदने के लिए दिए गए आदेश का कहते है, अधिकतर और यह कमीशन एजेन्ट को दिया जाता है। इडेन्ट का स्वरूप निश्चित नहीं होता और उसमें काफ़ी परिवर्तन पाये जाते हैं। इडेन्ट की दो या तीन नकलें निकाली जाती हैं जिनमें से एक आयात-कर्ता अपने पास रख लेता है। इन्डेट या तो बन्द होता है या खुला। जब कि इन्डेट म माल का विवरण, उनका मूल्य तथा अन्य सब आवश्यक बातें पूरे तौर पर दी होती हैं, तब इडेन्ट को बन्द (Closed) इन्डेंट कहते हैं। किन्तु जब कि इन्डेन्ट कुछ बातें निर्यात कर्ता के ऊपर छोड़ देता है, तब उसे खुला (Open) इन्डेंट कहते हैं। खुले इन्डेट में, उदाहरण के लिए, केवल माल की किस्म और मात्रा ही लिखी हो सकती है और शेष समस्त बातें विक्रेता

पर छोड़ा जा सकती हैं। यह भी हो सकता है कि माल का मूल्य विक्रेता द्वारा स्वीकार किये जाने के पश्चात् ही माल भेजने का आदेश दिया गया हो अथवा मूल्य की ऊपर वाली और नीचे वाली सीमाएँ बता दी गई हों। हाल में बन्द इंडेन्ट का रिवाज बहुत लोकप्रिय हो गया है।

२. निर्यात आज्ञा पत्र की प्राप्ति

इंडेन्ट मिलने पर श्री रामचन्द्र खूबचन्द्र (निर्यात कर्ता) एक पत्र निर्यात नियंत्रक (Controller of Exports), वाणिज्य मंत्रित्व, भारत सरकार, नई दिल्ली, को लिखेंगे जिसमें वे सूचित करेंगे कि उन्हें माल का इंडेन्ट मिला है और इसलिए उन्हें निर्यात का आज्ञा पत्र दिया जाय। बिना ऐसे आज्ञा पत्र या परमिट के निर्यात निषिद्ध है। जब उन्हें निर्यात आज्ञा पत्र मिल जाय, तब वे लंकाशायर को माल निर्यात करने के लिए और काम करेंगे।

साधारण समय में व्यापारी जिस देश को चाहें माल का निर्यात कर सकते हैं और इसके लिए सरकार से आज्ञा पत्र या परमिट लेना आवश्यक नहीं होता। किन्तु द्वितीय महायुद्ध के समय में माल की बहुत कमी थी और यह भी देखना आवश्यक था कि माल किसी शत्रु राष्ट्र को निर्यात न हो। अतः निर्यात नियन्त्रण लगाया गया। यह नियंत्रण अब भी जारी है। भारत से निर्यात करने वाले को चाहिए कि वह पहले ही निर्यात आज्ञा पत्र प्राप्त कर ले जिससे कि बाद को कोई न कठिनाई पड़े और बेकार नुकसान न उठाना पड़े।

३. माल एकत्रित करना

यदि आर्डर ठीक है, और निर्यात आज्ञा पत्र मिल गया है, तो निर्यात एजेंट आवश्यक माल एकत्रित करना आरम्भ कर देगा। यदि माल उसके स्टाक में होगा तो वह उसे छाँट छाँट कर एक अलग स्थान पर पैकिंग के लिये रख देगा। जो माल स्टाक में नहीं होगा, वह स्थानीय या बाहर के व्यापारियों से मँगा लिया जायगा। आजकल के घोर स्पर्धा के युग में अधिकतर बड़े बड़े कमीशन एजेन्ट विशेषज्ञों को रखते हैं जिनको माल, उनके बनाने वालों, उनकी

किस्में और उनके सस्ते मिलने के स्थानों के विषय में विस्तृत ज्ञान होता है। ये विशेषज्ञ ही इस बात का निर्णय करते हैं कि माल कहाँ से खरीदा जायगा। जब सब माल एकत्रित कर लिया जाता है, तब इंन्डेंट से मिला-मिला कर यह जाँच कर ली जाती है कि उनकी किस्म और मात्रा आदि ठीक है।

४. दिखावट, पैकिंग और चिन्ह

जब माल निर्यात के लिये एकत्रित कर लिया जाता है, तब यदि आवश्यक हुआ तो उनकी विशेष प्रकार से सजावट और दिखावट (make-up) की जाती है यदि विक्रेता ने इस सम्बन्ध मे कोई आर्डर दिया हो, तो उसका पालन करना आवश्यक है। सजावट निर्यात-कर्ता स्वय ही कर सकता है। यदि माल कहीं बाहर से खरीदा गया हो और सजावट करने के लिये साथ में आदेश दिया गया हो, तो माल आने पर इस बात की जाँच कर लेनी चाहिये कि इन आदेशों का पूर्णतया पालन हुआ है।

एकत्रित किये गये माल का सावधानी से पैकिंग करना चाहिये; और यदि इंडेन्ट में इस विषय पर कोई आदेश दिया गया हो, तो उसका भी पूरा-पूरा पालन करना चाहिये। यदि कोई निश्चित आदेश न हों, तो निर्यात-कर्ता को स्वय अपनी बुद्धि से काम लेना चाहिये। यदि पैकिंग की खराबी के कारण माल को हानि पहुँचे तो हो सकता है निर्यात- कर्ता को उसका उत्तरदायी ठहराया जाय। अतः उसका इस दिशा में सावधान रहना आवश्यक है।

लंकाशायर जाने वाले कपास की गाँठों पर चिन्ह भी डालने होंगे। यदि इंडेन्ट में किसी खास चिन्ह के डालने का आदेश दिया गया हो, तो वही चिन्ह डालना आवश्यक है; अन्यथा किसी भी स्पष्ट चिन्ह के डालने से काम चल सकता है। चिन्ह में क्या क्या होना चाहिये, यह हम पहले ही बता चुके हैं।

५. माल लदाने वाले एजेन्ट (Forwarding Agent) की नियुक्ति

इसके पश्चात् अहमदाबाद का फर्म इस बात का प्रबन्ध करेगा कि कोई व्यक्ति माल की डिलीवरी बम्बई रेलवे स्टेशन से लेकर बम्बई के डॉक तक पहुँचा दे और फिर उन्हें जहाज पर लदा भी दे। यदि फर्म कोई अपना

प्रतिनिधि इस काम के लिये बम्बई भेजे, तो इसमे खर्च बहुत पड़ेगा और इसमें कठिनाई भी अधिक होगी। अतः अच्छा यह होता है कि यह काम लदाने वाले एजेन्ट को सौंप दिया जाय जो थोड़ा सा कमीशन लेकर इस काम को सुचारु रीति से सम्पन्न कर देते हैं। यदि निर्यात-कर्ता बन्दरगाह के शहर म ही रहता हो, तब भी माल लदाने वाले एजेन्ट की नियुक्त से बहुत सुविधा हो जाती है।

६. माल को बन्दरगाह वाले शहर भेजना

माल का पैकिङ्ग हो जाने और लदाने वाले एजेंट की नियुक्ति हो जाने के पश्चात् अहमदाबाद वाला फर्म माल को रेल द्वारा बम्बई भेजेगा। बिल्टी, साधारणतः भेजने वाले (अर्थात् अहमदाबाद वाले) फर्म के नाम में ही ली जाती है जो उस पर लदाने वाले एजेन्ट के हक मे बेचान लेख (endorse) लिख देगा। फिर वह बिल्टी को एक पत्र के साथ लदाने वाले एजेन्ट के पास भेज देगा। पत्र म माल के जहाज पर लदाने के सम्बन्ध में पूरे पूरे आदेश दिये होंगे। इसके पश्चात् माल के जहाज पर लादने का सारा काम माल लदानेवाला एजेन्ट ही करता है।

७. विदेशी चुङ्गी-घर का परमिट (Permit)

माल की डिलीवरी लेने के बाद माल लदाने वाला एजेन्ट विदेशी चुङ्गी घर के अधिकारियों से माल के निर्यात करने की आज्ञा प्राप्त करने के लिये प्रार्थना-पत्र भेजेगा। वह पत्र म माल का पूरा विवरण देगा और माल का उद्दिष्ट स्थान भी बतावेगा। यदि उस माल के उस बन्दरगाह को निर्यात करने पर निषेध नहीं है, तो विदेशी चुङ्गी घर निर्यात करने की आज्ञा दे देगा। ऐसे लिखित आज्ञा पत्र को **विदेशी चुङ्गी-घर का परमिट (Customs Permit)** कहते हैं।

विदेशी चुङ्गीघर के परमिट की आवश्यकता इसलिये होती है कि कभी-कभी किसी माल के किसी खास देश को निर्यात करने की मनाही कर दी जाती है। युद्धकाल मे ऐसे बहुत से निषेध होते हैं। वास्तव में निर्यात कर्ता को बन्दरगाह के शहर को माल रवाना करने के पहले ही इस बात का पता लगा

लेना चाहिये कि उस माल के निर्यात की आज्ञा है या नहीं। यदि वह बराबर निर्यात करता रहता है, तो कदाचित् उसे इस बात का ज्ञान होगा ही। यदि वह यह भी न जानता हो तो माल लदाने वाले एजेन्ट को, जो इस काम में विशेषज्ञ हैं, इस बात का निश्चय ही ज्ञान होगा। फिर भी विदेशी चुङ्गीघर का परमिट साधारणतया अवश्य ही ले लिया जाता है।

८. जहाज द्वारा माल भेजने का प्रबन्ध करना : जहाजी आर्डर

इसके पश्चात् दूसरा काम यह है कि किसी जहाजी कम्पनी से उद्दिष्ट बन्दरगाह तक माल ले जाने का प्रबन्ध किया जाय। यदि निर्यातकर्ता ने किसी खास जहाजी कम्पनी का नाम इस विषय में दिया हो, तो माल उसी कम्पनी द्वारा भेजना चाहिये। किसी विशेष आदेश की अनुपस्थिति में माल लदाने वाले एजेन्ट को अपनी बुद्धि से काम लेना चाहिये और ऐसा जहाज चुनना चाहिये जो सुरक्षित हो और साथ में जिसका किराया भी कम हो। जहाज द्वारा माल भेजने का प्रबन्ध दलाल के द्वारा भी किया जा सकता है और सीधे भी। दलाल अपनी सेवा के पुरस्कार के रूप में थोड़ा कमीशन लेता है; किन्तु उसे इस सम्बन्ध में विशिष्ट और विस्तृत जानकारी होने के कारण, वह माल भेजने का प्रबन्ध किफायत से कर देता है।

यदि जहाजी कम्पनी माल ले जाने के लिये राजी होती है, तो वह एक रुक्का देती है जिसे जहाजी आर्डर (Shipping Order) कहते हैं। जहाजी आर्डर जहाज के कप्तान को दिया जाने वाला आदेशपत्र होता है जिसमें उसे कथित माल को जहाज पर लदाने का आदेश दिया रहता है। बिना जहाजी आर्डर के दिखाये कप्तान जहाज पर माल नहीं लादने देगा।

जहाजी आर्डर दो प्रकार के होते हैं : तैयार (ready) और अग्रिम (forward)। तैयार जहाजी आर्डर वह होता है जिसमें कि माल ले जाने वाले जहाज का नाम लिखा रहता है। अग्रिम जहाजी आर्डर में जहाज का नाम नहीं लिखा रहता—यह नाम बाद में घोषित किया जाता है—किन्तु उसमें जिस तारीख तक माल बन्दरगाह से रवाना कर दिया जायगा वह तारीख लिखी रहती है।

जहाजी आर्डर मिल जाने पर समझौता (agreement) लागू हो जाता है और फिर माल भेजना आवश्यक हो जाता है। यदि किसी कारण से माल न भेजा जा सके, तो जहाजी कम्पनी फिर भी इस वजह पर किराया वसूल कर सकती है कि वह इसके बजाय और माल नहीं ले जा सकी। ऐसी दशा में जो किराया बिना माल भेजे अदा करना पड़ता है, उसे मृत किराया (dead freight) कहते हैं।

९. निर्यात-करः जहाजी बिल (Shipping Bill)

जब जहाज द्वारा माल भेजने का प्रबन्ध कर लिया जाय, तब निर्यात-कर भुगतान कर देना चाहिये। इसके लिये माल लदाने वाले एजेन्ट को जहाजी बिल या विदेशी चुङ्गीघर के चालान की तीन प्रतियाँ भरनी पड़ती हैं। जहाजी बिल की तीनों प्रतियाँ अलग-अलग रग में छपी रहती हैं जिससे वे एक दूसरे से पृथक् दिखाई पडती हैं। जहाजी बिल मे दिये हुये कथन के आधार पर विदेशी चुङ्गीघर वाले निर्यातकर वसूल करते हैं। वे जहाजी बिल की एक प्रति अपने पास रख लेते हैं और शेष दो माल लादने वाले एजेन्ट को दे देते हैं। जो प्रति विदेशी चुङ्गीघर में रह जाती है, वह वहाँ के हिसाब की जाँच के लिये काम मे आती है और उसके आधार पर देश के सामूहिक व्यापार सम्बन्धी आँकड़े भी सकलित किये जाते हैं। हम पृष्ठ १४४-१४५ पर जहाजी बिल का नमूना देते हैं।

निर्यात किये जाने वाले माल या तो मुक्त (Free) होते हैं या कर-देय (dutiable) या तटीय (Coastal)। मुक्त माल वह होता है जिस पर कोई निर्यात-कर नहीं लगाया जाता, कर-देय माल वह होता है जिस पर निर्यात-कर लगता है; और तटीय माल वह होता है जो एक भारतीय बन्दरगाह से दूसरे भारतीय बन्दरगाह को भेजा जाता है। मुक्त, कर-देय और तटीय माल के लिये अलग-अलग प्रकार के जहाजी बिल काम मे लाये जाते हैं।

१०. डॉक चालान (Dock Chalan)

माल लदाने वाला एजेन्ट फिर माल को डॉक पर भिजवाने का प्रबन्ध करेगा। इसके लिए डॉक के अधिकारियों की पहले से आज्ञा लेना आवश्यक

होना है। इसके लिये माल लदाने वाले एजेन्ट को डॉक चालान की दो प्रतियाँ भरनी पड़ती हैं। डॉक का खर्चा (dock dues) दे देने पर चालान की दूसरी प्रति एजेंट को दे दी जाती है। इसके बाद माल डाक पर भेजा जा सकता है। माल लदाने वाले एजेन्ट को, डॉक के अधिकारियों को जहाजी आर्डर (जिसे जहाजी कम्पनी देती है) की एक प्रति और जहाजी बिल (जिसे विदेशी चुंगी घर वाले देते हैं) की एक प्रति भी देनी पड़ती है जिससे कि वे माल को जहाजी पर लदवा दें। जहाज पर माल लदवाने का काम डॉक के अधिकारी ही करते हैं।

११. माल का लादना

जब जहाज माल लादने के लिये तैयार होता है, तब उस पर माल लादना शुरू कर दिया जाता है। इस समय वहाँ चुंगीघर के जाँच करने वाले अधिकार (Customs and Preventive Officers) उपस्थित रहते हैं जो माल को तभी लादने देते हैं जब कि उन्हें जहाज बिल दिखा दिया जाता है। वे केवल उतना ही माल लादने देते हैं जितना कि जहाज बिल में लिखा रहता है। जहाज के कप्तान को जहाजी आर्डर भी दिखाना पड़ता है क्योंकि उसे बिना देखे वह जहाज पर माल नहीं लादने देता।

१२. कप्तान की रसीद (Mate's Receipt)

माल के लद चुकने के बाद जहाज के अफ़सर डॉक के अधिकारियों को लादे गये माल की प्राप्ति स्वीकृति के रूप में एक रसीद देते हैं। इसे कप्तान की रसीद कहते हैं। कप्तान की रसीद में पैकिंग की दशा भी लिखी रहती है। यदि पैकिंग संतोषजनक हो तो रसीद अच्छी (clean) कहलाती है; किन्तु यदि पैकिंग दूषित हो, तो रसीद खराब (foul) कही जाती है। माल लदाने वाले एजेन्ट को जहाजी अफ़सर के ऐसे लेख से विपरीत मत जाहिर करने या उससे सहमत होने के लिए वहाँ उपस्थित रहना चाहिये।

१३. जहाजी बिल्टी (Bill of Lading)

इसके पश्चात् माल लादने वाले एजेन्ट को डॉक के अधिकारियों से कप्तान की रसीद ले लेनी चाहिये और उसे लेकर जहाजी कम्पनी के दफ्तर में जाना चाहिए। वहां उसे मुद्रित जहाजी बिल्टी के फार्म निर्मूल्य मिलेंगे। उसे उन्हें

Dalal No.

SHIPPING BILL FOR DUTIABLE GOODS ORIGINAL Signature

Port Bombay

Exporter's Name ——— Address ———

Name of Vessel	Master or Agents	Colours	Port at which goods are to be discharged
Packages			

Details of goods to be given separately for each class or description

Number and Description	Mark and Numbers	Quantity		Description	Value		Duty		Country of Final Destination	Remarks
		Unit	Amount		Rate	Amount	Rate	Amount		
						Rs a. p		Rs a p		

Entered No 19 I/we hereby declare the particulars given above to be true

Cashier

Signature of Exporter or his Authorised Agent

Let Export after examination and weighment

Bombay, ——— 19

Assistant Collector of Customs

N B —Export Shipping Bills shall be presented by shippers in duplicate

The original of this will be taken with the first boatload of each consignment to the ship and delivered to the master who will keep it until the loading of the vessel is completed and at the time of applying for Port Clearance deliver all such Export Shipping Bills duly endorsed, to his having received on board the quantity covered by these Bills with the Export Manifest in Duplicate as usual

The Duplicate will remain in the Customs House

Vessel's name may be altered — Vessel's name may be altered

Fee one Rupee

195 Assistant Collector — 195 Assistant Collector

Fee Received — Fee Received

Cashier — Cashier

After check with the original

Entry for

Fresh one may be granted to

The portion shut out are not shipped

Fee one Rupee

195 Assistant Collector

No

FOR MEASUREMENT AT BUNDER AND COLLECTION OF MEASUREMENT FEE

Bombay 195 Rs a p

Measurement Fee on Bales on

Signed

Measurement Fee Clerk

Contents received on board

Signature

Master of the Vessel

भर कर कप्तान की रसीद के साथ दफ्तर में दे देना चाहिये। यदि किराया पेशगी देना है, तो उसे किराया भी अदा कर देना चाहिये। जहाजी कम्पनी का दफ्तर किराया अदा करने पर (यदि किराया पेशगी देना हो तब) कप्तान की रसीद ले लेगा और जहाजी बिल्टी की सब प्रतियों पर हस्ताक्षर करके माल लदाने वाले एजेंट को दे देगा। साधारणतया जहाजी बिल्टी की कई प्रतियाँ ली जाती हैं। प्रत्येक प्रति पर एक आने का टिकट होना आवश्यक है।

कप्तान की रसीद में पैकिङ्ग के विषय में जो भी लेख लिखा रहता है उसकी नकल जहाजी बिल्टी पर उतार दी जाती है किन्तु यदि कोई कप्तान की खराब रसीद के बदले में अच्छी जहाजी बिल्टी प्राप्त करना चाहे, तो उसे क्षतिपूर्ति का बन्धक पत्र (Indemnity Bond) भर कर देना पड़ता है।

१४. सामुद्रिक बीमा

यदि अहमदाबाद के फर्म ने माल लदाने वाले एजेंट को माल का सामुद्रिक बीमा कराने का आदेश दिया हो, तो उसे बीमा भी करा देना चाहिये। यदि इस विषय में निर्यातकर्ता किसी खास बीमा कम्पनी का नाम बताये, तो बीमा उसी कम्पनी से कराना चाहिये। अन्यथा एजेंट को अपने विवेक से काम लेना चाहिये और ऐसी कम्पनी चुननी चाहिये जो अच्छी भी हो और जिसके साथ बीमा कराने में किफायत भी हो। माल लदाने वाले एजेन्ट को माल के मूल्य में दस प्रतिशत लाभ के लिए जोड़ देना चाहिये और योग की रकम के लिए बीमा कराना चाहिये। आवश्यक प्रीमियम अदा कर देने पर बीमा कम्पनी सामुद्रिक बीमा-पत्र देती है।

१५. माल लदाने वाले एजेंट की सूचना

अब माल लदाने वाले एजेंट को जो कुछ काम करना था, वह उसके द्वारा सम्पन्न हो चुका। अब उसने निर्यातकर्ता के लिए जो कुछ भी रुपया व्यय किया है, उसका वह एक लेखा बनायेगा और उसमें अपना कमीशन भी जोड़ देगा। वह इस लेखे को और उसके साथ जहाजी बिल की दो प्रतियाँ, डॉक चालान जहाजी बिल्टी की दो या तीन प्रतियाँ और बीमा-पत्र निर्यातकर्ता के पास भेज

देगा। निर्यातकर्ता ये सब कागज मिलने पर माल लदाने वाले का बिल चुका देगा।

१६. निर्यात बीजक

अब निर्यातकर्ता भेजे गये माल का बीजक तैयार करेगा। निर्यात बीजक बनाने की वास्तविक रीति हम अगले अध्याय में बतायेंगे। बीजक की दो या तीन प्रतियाँ तैयार की जाती हैं।

व्यापार-दूत द्वारा प्रमाणित बीजक (Consular Invoice)—कुछ देशों के क्रेताओं को व्यापार-दूत से प्रमाणित बीजक भेजना आवश्यक होता है। व्यापार-दूत विदेश में रहने वाला एक बहुत महत्वपूर्ण अफसर होता है, जिसका कर्तव्य अपने देश के व्यापारिक हितों की रक्षा करना होता है। व्यापार-दूत से प्रमाणित बीजक प्राप्त करने के लिये निर्यातकर्ता को उसके दफ्तर से मुद्रित बीजक के तीन फार्म लेने पड़ते हैं। इन तीन फार्मों में उसे माल का पूरा पूरा विवरण देना पड़ता है और वहाँ के अधिकारियों के सामने यह भी घोषणा करनी पड़ती है कि उसके सारे कथन सत्य हैं। फिर उन पर व्यापार-दूत हस्ताक्षर कर देता है। व्यापार-दूत बीजक की दो प्रतियाँ अपने पास रख लेता है और एक प्रति निर्यातकर्ता को दे देता है। इसी को व्यापार दूत द्वारा प्रमाणित बीजक कहते हैं। निर्यातकर्ता यह बीजक क्रेता के पास भेज देता है। राजदूत बीजक की एक प्रति अपने देश के विदेशी चुंगीघर के अधिकारियों को भेज देता है जो उसके आधार पर माल के आने पर उन पर आयात-कर लगाते हैं।

उद्गम का प्रमाण-पत्र (Certificate of Origin)—कुछ देशों से आने वाले माल पर कभी-कभी कुछ कम कर लगाया जाता है। ऐसी दशा में आयातकर्ता निर्यातकर्ता से उद्गम का प्रमाण-पत्र मँगा लेता है। यह प्रमाण-पत्र तैयार करके किसी चैम्बर आव कामर्स के मन्त्री से अथवा अन्य किसी अधिकारी व्यक्ति से हस्ताक्षर करा लेना चाहिये और अन्य कागजातों के साथ आयात-कर्ता के पास भेज देना चाहिये।

१७ भुगतान

अब निर्यातकर्ता, अर्थात् श्री रामचन्द्र खूबचन्द्र, को लङ्काशायर के फर्म से रुपया पाना अवशेष रहा। भुगतान का तरीका दोनों पक्षों के समझौते के ऊपर निर्भर होता है। यदि भुगतान डी/पी बिल के द्वारा होना हो, तो निर्यातकर्ता लङ्काशायर के फर्म पर बिल लिखेगा और उसमें सब जहाजी कागजात नत्थी कर देगा। वह रुक्के वाले बिल को किसी विनिमय बैङ्क को दे देगा और उसे यह आदेश दे देगा कि जब बिल का भुगतान हो जाय तभी कागजात दिये जायँ। इस बैङ्क की विदेश शाखा या एजेंट इस आदेश का पालन करेगा अर्थात् रुपया मिलने पर कागजात आयातकर्ता को दे देगा। अपनी शाखा या एजेंट से रुपया पाने की सूचना प्राप्त होने पर बैंक निर्यातकर्ता के हिसाब में उतना रुपया जमा कर लेगा।

१८. क्रेता को सूचना

निर्यातकर्ता अपने बैंक को रुक्के वाला बिल दे देने के पश्चात् लङ्काशायर के फर्म का एक पत्र लिखेगा कि माल रवाना कर दिया गया है और उस पर एक बिल दिया गया है। इस सूचना-पत्र के साथ निर्यात बीजक की एक प्रति भी भेजी जाती है।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१. कानपुर का एक व्यापारी लंदन के एक व्यापारी को ५०० बोरा शक्कर का निर्यात करना चाहता है। इस माल के निर्यात की रीति का संक्षिप्त रूप में वर्णन कीजिये और उन सब मुख्य पत्रों के नाम लिखिए जिन्हें निर्यात व्यापारी प्रयोग करेगा। (उत्तर प्रदेश, १९५२)

२. यदि आपको रुई का इंगलैण्ड को निर्यात करना हो, तो आप किस रीति का पालन करेंगे? सौदे की गतिविधि में जिन रुक्कों का प्रयोग होगा उनको बताइये। (यू० पी०, १९४६, १९४७)

३ यदि आप आस्ट्रेलिया को तिल का निर्यात करना चाहें, तो आप जिस रीति का अनुगमन करेंगे उसका वर्णन कीजिये। (यू० पी०, १६४८)

४. कानपुर के एक निर्यातकर्ता फर्म को कुछ माल का इंडेट डर्बन से मिला है स्पष्ट रूप से बताइये कि इस आर्डर की प्राप्ति के समय से माल जहाज द्वारा भेजने के समय तक उसे किस रीति का अनुगमन करना पड़ेगा। (यू० पी०, १६४४)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

५, व्यापार दूत द्वारा प्रमाणित बीजक (Consular Invoice), उद्गम का प्रमाण पत्र (Certificate of Origin) और जहाजी बिल्टी (Bill of Lading) को समझाइये और यह भी बताइये कि निर्यात व्यापार में उनका क्या हाथ होता है ? (राजपूताना, १६५३)

६. सर्वश्री गुप्ता एण्ड सन्स ने मैनचेस्टर के एक फर्म को ६० गाँठ कपास का निर्यात किया है। माल के निर्यात करने में वे जिस विधि का पालन करेंगे उसका साक्षिप्त व्यारा दीजिये और उन मुख्य पत्रों के नाम गिनाइये जिनका निर्यातकर्ता प्रयोग करेगे। (राजपूताना, १६५१

७ अहमदाबाद के अनन्तराम ने मेनचेस्टर के एक फर्म को कपास की साठ गाँठों का निर्यात किया है। निर्यात करने की रीति का वर्णन कीजिये और इस सौदे में जो प्रमुख शब्द प्रयुक्त हुए हों उनको भी बताइये। (राजपूताना, १६४६)

८ बम्बई वेस्टर्न ट्रेडिंग कम्पनी कपास की १०० गाँठों को स्पैंसर एण्ड कम्पनी लिवरपुल को निर्यात करती है। निर्यात की रीति का वर्णन कीजिये और तत्सम्बन्धी कागजों को गिनाइये। (राजपूताना, १६४६)

पटना, इन्टर कामर्स

६ सर्वश्री रामजीदास एण्ड ब्रादर्स, पटना, कुछ माल मार्शल, पोगू एण्ड क० लन्दन को भेजते हैं। निर्यात विधि का ब्यौरा और प्रयुक्त होने वाले पत्रों का जिक्र कीजिये। (पटना, १६५२ वार्षिक)

१०. विदेशों को माल निर्यात करने की रीति को बताइए। किसी देश के

सामुद्रिक व्यापार मे बिल आव एक्सचेंज और जहाजी बिल्टी का क्या हाथ होता है ? (पटना, १६५२)

११. कलकत्ते के निर्यातकर्ता।को लंदन के किसी फर्म को जहाज द्वारा माल भेजने में जिस रीति का अनुगमन करना पड़ेगा उसका वर्णन कीजिये। (पटना, १६४६)

१२. बम्बई के एक निर्यातकर्ता को मैनचेस्टर के किसी फर्म को २०० गाँठ रुई निर्यात करने में जिस गतिविधि के अनुसार काम करना होगा, उसका सचित्र विवरण दीजिए। इस सम्बन्ध मे जिन रुक्कों का प्रयोग होगा, उनको भी बताइए। (पटना, १६४८)

१३. भारत का एक गलीचा बनाने वाला न्यूयार्क को माल का निर्यात सगठित करना चाहता है, और आप से इस सम्बन्ध मे सलाह माँगता है। बताइए उसे किस रीति का अनुगमन करना चाहिये ? (पटना, १६४७)

बिहार, इन्टर कामर्स

१४. कलकत्ते से लन्दन को जूट निर्यात करने का तरीका बताइये, और इस सम्बन्ध मे प्रयुक्त होने वाले प्रलेखों का हवाला दीजिये। (बिहार, १६५५)

सागर, इन्टर कामर्स

१५. सागर नगर के एक व्यापारी को दो सौ गाँठ रुई एक लन्दन के व्यापारी को भेजना है। सक्षेप में वर्णन करो कि यह माल कैसे भेजा जायगा, और इस सम्बन्ध मे किन-किन मुख्य व्यापारिक पत्रों का प्रयोग किया जायगा। (सागर, १६५३)

१६. नागपुर के सर्वश्री अग्रवाल ब्रदर्स को आस्ट्रेलिया के एक व्यापारी का ५०० कपास की गाँठ का आदेश प्राप्त हुआ है। निर्यातकर्ता एक्सचेन्ज बैंक आव आस्ट्रेलिया के द्वारा अधिकार पत्र भेजना चाहते हैं। माल निर्यात करने की विधि का वर्णन कीजिये। (सागर, १६५१)

१७. कौंसिल का बीजक (Consular Invoice), उद्गम प्रमाण पत्र तथा जहाजी बिल्टी का ब्यौरा दीजिये और बताइये निर्यात व्यापार में उनका क्या काम होता है ? (सागर, १६४६)

१८. यदि आपको इगलैण्ड को कपास का निर्यात करना हो तो आप किस रीति का अनुगमन करेंगे ? सौदे में जिन रुक्कों का प्रयोग होगा उनको भी बताइये (सागर, १९४८)

नागपुर, इन्टर कामर्स

१९. आप विलायत की एक कम्पनी से ट्रेक्टर्स मँगवाना चाहते हैं । इसके लिये आप क्या कार्यवाही करेंगे, पूर्णतया लिखिये। (नागपुर, १९५१)

२०. यदि आपको अमेरिका से ट्रैक्टर मँगाना हो, तो आप किनसे किस प्रकार की लिखा पढ़ी करेंगे और उसका मूल्य चुकाने की क्या व्यवस्था करेंगे ? (नागपुर, १९५०)

२१. डर्बन (अफ्रीका) के एक व्यापारी ने नागपुर के फर्म से कपास की कुछ गाँठे मँगवाई हैं । आरम्भ से अन्त तक जिस रीति का अनुगमन करना होगा उनका संक्षिप्त ब्यौरा दीजिये और उन रुक्कों को भी बताइये जिनका कि प्रयोग किया जाएगा। (नागपुर, १९४९)

बनारस, इन्टर कामर्स

२२. जहाज द्वारा माल भेजने वाला जिस रीति द्वारा जहाजी कम्पनी से हस्ताक्षर की हुई जहाजी बिल्टी प्राप्त करता है, उस रीति का वर्णन कीजिये।(बनारस, १९४९)

२३ आपको लिवरपूल के व्यापारी को १०० गाँठें कपास भेजना है। निर्यात की रीति तथा सम्बन्धित रुक्कों का ब्यौरा दीजिये। (बनारस, १९४५)

दिल्ली, हायर सेकिंडरी

२४. यदि आप इङ्गलैण्ड को कपास का निर्यात करने मे जिस रीति का पालन करेंगे, उसकी संक्षिप्त व्याख्या कीजिये। सौदे की गतिविधि में किन प्रलेखों (documents) का प्रयोग होगा उनके नाम बताइये। (दिल्ली, हा० से०, १९५४)

२५. भारत से इङ्गलैण्ड को जूट के निर्यात करने की विधि विस्तारपूर्वक लिखिये। (दिल्ली, १९५०)

२६. भारत से इङ्गलैण्ड को माल निर्यात करने का तरीका विस्तारपूर्वक बताइये। (दिल्ली, हायर सेकिंडरी, १९४८)

२७. श्री मित्तल एण्ड कम्पनी देहली, ने न्यूयार्क के श्री फिलिप एण्ड कम्पनी को कुछ गलीचो का निर्यात किया है। निर्यात का तरीका तथा इसमें प्रयुक्त होने वाले रुक्कों की व्याख्या कीजिये। (दिल्ली, हायर सेकण्डरी, १९४८(

मध्यभारत, इन्टर कामर्स

२८. बम्बई की नयन सुख एण्ड कम्पनी सूती कटपीस की गाँठों का कराँची के हलील श्रदर्स को निर्यात करते हैं। निर्यात की विधि बताइये और प्रयुक्त किये जाने वाले पत्रा का जिक्र कीजिये। (१९५२)

अध्याय ४३

आयात व्यापार

द्वितीय महायुद्ध के पहले हम लगभग १५० करोड रुपये से लेकर १७५ करोड रुपये तक का माल प्रति वर्ष आयात करते थे। अधिकतर हम पक्के माल का आयात करते हैं। इनमें प्रमुख मशीन, औजार, मोटर, कागज, रासायनिक पदार्थ आदि होते हैं। हमारे अधिकतर आयात इंगलैंड और अमेरिका से आते हैं।

यदि कोई भारतीय व्यापारी किसी विदेशी कारखाने वाले से माल मँगाना चाहे, तो वह उनके पास सीधा आर्डर भेज सकता है। किन्तु यदि उसे कई विदेशी फर्मों से माल खरीदना हो, तो कदाचित् वह किसी निर्यात एजेन्ट के पास इंडेंट भेजना अधिक अच्छा समझेगा।

अब हम माल के आयात करने की रीति की विवेचना करेंगे। पाठक को चाहिये कि वह अध्याय ३६ में जो दो चित्र दिये गये हैं, उनका पहले सावधानी से मनन कर ले। मान लीजिये कि इलाहाबाद का किताब महल इंगलैंड के मैसर्स पी० एस० किंग एण्ड सन्स, पैंगिवन बुक्स लि०, और सर आइजक पिटमन एण्ड सन्स लि० से पुस्तकें खरीदना चाहता है। आयात व्यापार की वास्तविक गतिविधि इस प्रकार होगी।

१. आयात आज्ञा पत्र तथा विनिमय की प्राप्ति

किताब महल का मनेजर सबसे पहले आयात नियन्त्रक (Controller of Imports), वाणिज्य मन्त्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली को यह लिखेगा कि वह कुछ पुस्तकों को इंगलैंड से आयात करना चाहता है, अतः उसे आयात आज्ञा पत्र दिया जाय। जब आयात आज्ञा पत्र प्राप्त हो जाय, तो उसे रिजर्व बैंक आव इंडिया के बम्बई कार्यालय के विदेशी विनिमय (Foreign Ex-

change) अर्थात् पौंड प्राप्त करने के लिये पत्र लिखना चाहिये। आयात-आज्ञा-पत्र मिल जाने का आशय यह होता है कि आयात के लिये आवश्यक विनिमय रिजर्व बैंक से मिल जायगा। यही विनिमय आयात-कर्ता निर्यात-कर्ता को भेज कर दाम चुकाता है।

यहाँ यह बता देना आवश्यक है कि साधारणतया व्यापारीगण किसी भी देश से माल का आयात करने के लिये स्वतन्त्र होता है और इसके लिये सरकारी आज्ञा-पत्र की आवश्यकता नहीं होती। किन्तु दूसरे महायुद्ध के समय में आयात को सीमित और नियंत्रित करनेकी आवश्यकता समझी गई और तब से यह नियन्त्रण अब भी जारी है, अतः किसी विदेशी फर्म के पास आर्डर भेजने के पहले आयात आज्ञा पत्र प्राप्त कर लेना आवश्यक है। यह स्मरण रखना चाहिये कि दूसरे महायुद्ध के पहले किसी भी बैंक से विदेशी विनिमय या चलन प्राप्त किया जा सकता था। किन्तु अब केवल रिजर्व बैंक आफ इंडिया से ही इसे प्राप्त किया जा सकता है; और यह बैंक आयात आज्ञा-पत्र दिये जाने पर ही विनिमय देगा।

२. इन्डेन्ट

किताब महल का मैनेजर इन फर्मों से जितनी किताबें खरीदना चाहता है, उसकी एक सूची तैयार करेगा। उसके पश्चात् वह उचित रूप मे एक इडेंट बनायेगा और उसे इंग्लैंड के किसी निर्यात एजेन्ट के पास भेज देगा। वह उपरोक्त प्रकाशकों में से प्रत्येक को अलग-अलग आर्डर नहीं भेजेगा। क्योंकि इसमें समय तथा रुपये दोनों का ही अपव्यय होगा। वह इडेंट बनाने मे विशेष सावधानी से काम लेगा और किताबों के नाम और उनकी मात्रा, उनके मूल्य, रवाना करने का समय, पैकिंग व ढंग आदि समस्त बातों के सम्बध में निश्चित आदेश देगा।

३. निर्यात एजेंट

जब निर्यात एजेंएट को इलाहाबाद के फर्म का इडेंट मिल जायगा, तब वह प्रकाशकों से पुस्तकें खरीदने का प्रबन्ध करेगा। वह इस बात की सावधानी रक्खेगा कि किताबें वे ही खरीदी जाय जो इंडेन्ट में बताई गई हैं और उन

माना भी इडेंट के अनुसार हो। वह फिर किताबों की अच्छी तरह पैकिंग करायेगा और फिर वह उन्हें बदरगाह को जहाज द्वारा भेजने के लिये रवाना कर देगा। वह इस काम के लिये लदाने वाले एजेण्ट की सेवाओं का उपयोग करेगा। यदि इस सम्बंध में किताब महल ने कुछ आदेश दिये हों तो वह उनका पूरा पूरा पालन करेगा।

माल जहाज पर लद जाने और जहाजी बिल्टी तथा सामुद्रिक बीमा पत्र प्राप्त कर लेने के पश्चात् निर्यात एजेंट एक बीजक बनायेगा जिसमें वह किताबों का मूल्य, उसके द्वारा इलाहाबाद के फर्म के लिए दिया गया खर्च और स्वय उसका कमीशन भी शामिल होगा। वह क्रेता पर बीजक की रकम का एक बिल लिखेगा और उसमें ऊपर बताये गये कागजात लगा देगा मान लीजिये कि यह बिल डी/पी बिल है। निर्यात एजेंन्ट इसके वाले बिल को अपने बैंक को वसूली के लिए दे देगा। वह किताब महल के मैनेजर को माल के रवाना होने की सूचना भी दे देगा और साथ में बीजक की एक प्रति भी भेज देगा।

४. जहाजी कागजात की प्राप्ति

जब इगलैण्ड के निर्यात एजेन्ट से माल रवाना होने की सूचना और बीजक आ जायगा, तब किताब महल का मैनेजर बीजक का मिलान इडेंट से करेगा। इसी बीच में अंग्रेजी बैंक की इलाहाबाद वाली शाखा के पास डी/पी बिल भी जायगा और वह किताब महल के पास इस बात का पत्र भेजेगी कि रुपया अदा करके जहाजी कागजात ले लिए जायँ। यदि बिल डी/ए हुआ, तो किताब महल द्वारा बिल स्वीकृत कर लिये जाने पर ही साथ के कागजात किताब महल को दिये जायँगे। जहाज कागजात प्राप्त कर लेने के पश्चात् किताब महल बम्बई में जाहज से माल लेने, आयात कर अदा करने और उन्हें इलाहाबाद लाने का प्रबन्ध करेगा।

५. माल उतारने वाले एजेन्ट को आदेश

किताब महल इस काम के लिये अपने निजी प्रतिनिधि को बम्बई भेजना पसन्द नहीं करेगा, क्योंकि इसमें रुपये और समय दोनों की बरबादी होगी।

यह काम माल उतारने वाले एजेन्ट के द्वारा किफायत से कराया जा सकता है। अतः एक **माल उतारने वाले एजेन्ट** (Clearing Agent) की नियुक्ति कर दी जायगी। किताब महल ऐसे एजेन्ट को जहाजी कागजात भेज देगा और उसे एक उचित आदेशपत्र भी भेजेगा। माल उतारने वाला एजेन्ट अपनी सेवाओं के लिये बहुत थोड़ा कमीशन लेता है।

६. सुपुर्दगी के लिये बेचान

जहाजी बिल्टी में माल लाने वाले जहाज का नाम लिखा रहता है। माल उतारने वाला एजेन्ट उस जहाज के आने की बाट देखता रहेगा। जैसे ही जहाज आयेगा, वह जहाजी कम्पनी के दफ्तर में जाकर जहाजी बिल्टी पर कम्पनी के एजन्ट से बेचान लेख (endorsement) लिखा लेगा जिससे कि सुपुर्दगी उसे मिल जाय। यदि किराया अभी नहीं लिया गया हो या जहाजी कम्पनी का कुछ रुपया देना बाकी रह गया हो, तो उसका भुगतान हो जाने के पश्चात् ही जहाजी कम्पनी का एजेन्ट जहाजी बिल्टी का बेचान करेगा।

७. आयात-कर : प्रवेश-बिल

इसके पश्चात माल उतारने वाला एजेन्ट आयात-कर सम्बन्धी कार्रवाई करेगा। वह प्रवेश बिल (Bill of Entry) की तीन प्रतियाँ भरेगा और उन्हें विदेशी चुङ्गी घर में उपस्थित करेगा। प्रवेश-बिल की तीनों प्रतियाँ अलग अलग रंग में छपी होती हैं जिससे कि वे एक दूसरे से पृथक् दीख पड़ें। यह भी स्मरण रखना चाहिये कि मुक्त, करदेय और तटीय माल के लिये अलग-अलग प्रकार के फार्म होते हैं। यदि करदेय माल देश के अन्दर बिक्री और उपभोग की दृष्टि से लाया गया हो, तो जो प्रवेश बिल भरा जाता है उसे **घरेलू उपभोग की प्रविष्टि** (Entry for home use ex-ship) कहते हैं। यदि वह भारत से पुनर्निर्यात के लिये मँगाया गया हो, तो जो प्रवेश बिल भरना होता है उसे **पुनर्निर्यात प्रविष्टि** (Entry of bond) कहते हैं। प्रवेश बिल में आयात किये गये माल का पूरा विवरण देना होता

है। हम पृष्ठ १५८-१५६ पर एक प्रवेश बिल का नमूना उद्धृत करते हैं। इसमें की गई घोषणाओं के आधार पर विदेशी चुङ्गीघर के अधिकारी यदि आवश्यक हो तो आयात-कर की रकम का निश्चय करते हैं यदि प्रवेश बिल में दिये विवरण की सत्यता पर उन्हें कुछ सदेह हो, तो वे माल खुलवाकर देख सकते हैं। अब आयात कर दे दिया जाता है, तो विदेशी चुङ्गीघर के अधिकारी प्रवेश बिल की एक प्रति अपने पास रख कर शेष दो प्रतियाँ माल उतारने वाले एजेन्ट को दे देंगे। इनमें से एक आयात कर की प्राप्ति की रसीद होती है और दूसरा वास्तविक प्रवेश-बिल।

दृष्टि बिल (Bill of Sight)—कभी कभी माल उतारने वाले एजेन्ट के पास आयात किये जाने वाले बिल का पूरा विवरण नहीं होता। ऐसी दशा मे वह प्रवेश बिल नहीं भरता क्योंकि उसमे इस बात की घोषणा करनी पड़ती है कि दिया गया विवरण सत्य है। उसके स्थान पर वह एक **दृष्टि बिल** भरता है जिसमें वह इस बात का आश्वासन देता है कि जहाँ तक उसे जानकारी है, आयात किया गया माल बिल में दिये गये विवरण के ही अनुसार है। ऐसी दशा में कदाचित् विदेशी चुङ्गीघर वाले माल देखकर ही चुङ्गी निश्चय करें।

८ डॉक के चार्ज (Dock Charges)

यदि कुछ आयात कर देना हो, तो उसे देने के पश्चात माल उतारने वाला एजेन्ट डॉक के चार्ज अदा करने के लिये डॉक चालान (dock chalan) की दो प्रतियाँ भरेगा। इनके उपस्थित किये जाने पर डॉक के अधिकारी चार्ज वसूल कर लेंगे और माल उतारने वाले एजेन्ट को डॉक चालान की प्रति लौटा देंगे जो चार्ज मिल जाने की रसीद होती है। जब तक डॉक चार्ज अदा नहीं किये जायँगे तब तक डॉक के अधिकारी माल नहीं हटने देंगे

डॉक से माल की सुपुर्दगी लेना

जब जहाज बन्दरगाह मे आ जाता है, तब उस पर माल उतारा जाता है माल उतार उतार कर विशेष चिन्हों के अनुसार छाँट-छाँट कर अलग रख जाता है। माल उतारने वाला एजेन्ट चिन्ह देख कर अपने माल को आसानी

ORIGINAL [DEBIT PER

BILL OF ENTRY

Vessel	General Manifest No.	Master or Agent	Colours	Port of Shipment
SS				

Packages — Details of goods to be

Number and Description	Marks and Numbers	Quantity	Descrip-tion
		Unit Amount	

Total No. of packages (in Words)...............................

G M. Clerk

Index No. of 194	For use in Cash Department	Orders	
Court Fee Stamp			

पहचान लेगा। वह माल की सावधानी से परीक्षा करेगा और यदि उन्हें कुछ हानि पहुँची है या कुछ टूटा-फूटा है, तो वह जहाजी कम्पनी के एजेन्ट से माल की परीक्षा करा लेगा। बाद को जो हानि हुई होगी वह या तो जहाजी कम्पनी से या बीमा कम्पनी से परिस्थिति के अनुसार वसूल कर ली जायगी।

जब माल छाँट लिया जायगा, तब जहाज़ कम्पनी का एजेन्ट जहाजी बिल्टी पर बेचान लिख गा उसके बाद प्रवेश बिल, डॉक चालान तथा बेचान की हुई जहाजी बिल्टी के देने पर डॉक के अधिकारी माल ले जाने की आज्ञा दे देंगे। जहाँ तक हो सके, माल जल्दी ही हटा लेना चाहिये क्योंकि देरी होने में हर्जाना (demurrage) देना पड़ता है।

सुपुर्दगी का आर्डर (Delivery Order)—कभी-कभी आयात कर्ता डाक के अधिकारियों से माल सुपुर्दगी लेने के पहले ही माल को कई खरीदारों के हाथ बेच देता है। ऐसी दशा में खरीदार स्वयं डॉक के अधिकारियों से माल की सुपुर्दगी ले लेता है। आयातकर्ता प्रत्येक खरीदार को एक सुपुर्दगी का आर्डर दे देता है जिसमें वह डॉक के अधिकारियों को माल लिखित व्यक्ति को सौंपने का आदेश दे देता है। वह इस बात को जहाजी बिल्टी पर भी लिख देता है जिसे वह जहाजी कम्पनी के एजेंट से बेचान करा कर डॉक के अधिकारियों को दे देगा। जिससे सुपुर्दगी के आर्डर के धारकों (holders) को माल आसानी से मिल जाय।

१०. माल का गोदाम में रखना

कभी कभी आयातकर्ता माल पर पूरी चुङ्गी तुरन्त ही नहीं चुकाना चाहता है। ऐसी दशा में वह विदेशी चुंगीघर में अधिकारियों से यह निवेदन करता है कि माल प्रमाणित गोदाम (bonded warehouse) में रख दिया जाय। इसके लिए आयातकर्ता को एक विशेष प्रवेश बिल भर कर चुंगीघर में दाखिल करना पड़ता है। इसके पश्चात् विदेशी चुङ्गीघर के अधिकारियों के निरीक्षण में माल प्रमाणित गोदाम में रखवा दिया जाता है। वहाँ से आयात-कर अदा हो जाने के पश्चात् ही माल की सुपुर्दगी दी जाती है।

कभी-कभी आयात-कर्ता आयात-कर अदा कर देने के बाद भी माल को

किसी गोदाम में, उनकी बिक्री होने तक, रखवाना चाहते हैं। प्रत्येक बन्दरगाह पर प्राइवेट कम्पनियों ने या बन्दरगाह के अधिकारियों ने इस काम के लिए अपने गोदाम खोल रक्खे हैं जिनमें थोड़ा सा किराया देकर माल रक्खा जा सकता है।

माल आ जाने पर गोदाम वाला एक रसीद देता है जो डॉक वारट (Dock Warrant) का स्वरूप लेती है। डॉक वारट पर टिकट लगा रहता है और इसका हस्तान्तरण बेचान और सुपुर्दगी द्वारा किया जा सकता है। कभी-कभी माल को कई भागों में बाँट दिया जाता है और प्रत्येक भाग के लिए एक अलग डॉक वारट बनाया जाता है। डॉक वारट दे देने पर सम्बन्धित माल की सुपुर्दगी दी जाती है।

यदि डॉक वारट का प्रयोग न हुआ हो तो आयातकर्ता गोदामवाले को लिखित आदेश इस बात का दे सकता है कि उसका माल किसी खास व्यक्ति को सुपुर्द कर दिया जाय। सुपुर्दगी के आदेश का भी हस्तान्तरण बेचान और सुपुर्दगी द्वारा किया जा सकता है।

११. माल को रेल द्वारा भेजना

यदि किताब महल को माल की तुरन्त आवश्यकता हो और गोदाम का प्रयोग न करना हो, तो माल उतारने वाला एजेन्ट माल को माल गाड़ी द्वारा बम्बई की स्टेशन पर पहुँचा देगा, और रेल में लदवा कर रेल की रसीद प्राप्त कर लेगा। वह फिर किताब महल को इस बात की सूचना दे देगा कि माल रेल द्वारा इलाहाबाद रवाना कर दिया गया। साथ में वह रेल की रसीद, प्रवेश बिल, डाक की रसीद और अपने खर्चे का बिल भी भेज देगा।

१२. रैल से माल छुड़ाना

जब किताब महल के पास रेल की रसीद आ जायगी तब वे स्टेशन से माल की सुपुर्दगी ले लेंगे। वहाँ से गाड़ी में भर कर माल किताब महल के गोदाम में लाया जायगा। रास्ते में बीजक में दिये हुये विवरण के आधार पर चुंगी भी चुकानी पड़ेगी। इसके पश्चात् माल आयातकर्ता के गोदाम में आ

जायगा। आयातकर्ता माल उतारने वाले एजेंट के बिल को चुकता कर देगा।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टरकामर्स

१. सर्व श्री महावीर प्रसाद श्री गोपाल, दिल्ली, ने बर्मिंघम से साइकिलों का आयात किया है। निर्यात-कर्ताओं ने सब अधिकार पत्र (Documents of Title) सेन्ट्रल बैंक आफ इंडिया के मार्फत भेज दिये हैं। माल आयात करने का पूरा विवरण दीजिये और कौन-कौन से प्रलेखों (Documents) का प्रयोग होगा इस पर भी प्रकाश डालिये। (१९५५, उ० प्र०)

२. लखनऊ का एक व्यापारी लंदन के किसी एक फर्म से साइकिल का आयात करना चाहता है। माल को आयात करने की, आयातकर्ता के गोदाम में माल पहुँच जाने के समय तक की रीति का सचित विवरण दीजिए। (यू० पी०, १९५१)

३. दिल्ली का एक व्यापारी कनाडा के सूखे दूध का आयात करना चाहता है। माल के प्राप्त करने के लिए वह जिस रीति का पालन करेगा उसका ब्योरा दीजिए। (यू० पी०, १९४५)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

४. आगरे का एक व्यापारी इङ्गलैण्ड से मशीन मँगाना चाहता है। माल आयात करने की रीति की व्याख्या कीजिए। (राजपूताना, १९४७)

५. लंदन से अजमेर को माल का आयात करने में किन-किन सक्कों का उपयोग करना पड़ेगा? किन्हीं दो का नमूना दीजिए। (राजपूताना, १९४५)

पटना, इन्टर कामर्स

६. बिहार मशीन कम्पनी ने इङ्गलैण्ड से कुछ मशीनों का आयात किया है। माल की सुपुर्दगी लेने के लिये आयातकर्ता को जिस रीति का अनुगमन करना पड़ेगा, उसका वर्णन कीजिए। (पटना, १९५१ पूरक)

७. कलकत्ते के एक व्यापारी ने न्यूयार्क से कुछ माल मँगवाया है।

कलकत्ता के विदेशी चुंगीघर (Customs House) से माल निकालने के लिए उसे किस रीति का पालन करना पड़ेगा ? (पटना, १६४४)

सागर, इन्टर कामर्स

८ इलाहाबाद के श्री बारूमल न्यूयार्क (यू० एस० ए०) से फोर्ड जीप आयात करना चाहते हैं। आदेश भेजने से लेकर माल के इलाहाबाद पहुँचने तक जिस रीति का पालन करना होगा उसका ब्यौरा दीजिये । (सागर, १६५४)

६ जबलपुर का एक व्यापारी इङ्गलैंड से ट्रैक्टर का आयात करना हत है। इसके लिए वह जिस विधि का पालन करेगा, उसका वर्णन कीजिये। (सागर, १६५२)

१० दिल्ली का एक व्यापारी अमेरिका से वस्तुएँ मँगाना चाहता है। सक्षेप में उस विधि का वर्णन कीजिये जिसके द्वारा वह ऐसा कर सकेगा। (सागर, १६५१ पूरक)

११ दिल्ली का एक व्यापारी ब्रिटेन से माल का आयात करना चाहता है। उसे जिस रीति का अनुगमन करना पड़ेगा, उसका सक्षिप्त ब्यौरा दीजिये। (सागर, १६४६)

नागपुर, इन्टर कामर्स

१२. विदेश से कुछ यत्र मँगवाये हैं। निराक्राम्य करगृह में से उनका निष्कासन करने के लिए किस प्रकार कार्यवाही करनी होगी ? (नागपुर, १६५२)

१३ नागपुर के श्री अग्रवाल ब्रदर्स ने आस्ट्रेलिया से कपड़े की कुछ गाँठों का आयात किया है। निर्यात कर्ता ने अधिकार पत्र एक्सचेंज बैंक आव आस्ट्रेलिया के द्वारा भेजे हैं। उन सब कामों का ब्यौरा दीजिये जिनके संपन्न करने पर माल आयात कर्ता की दूकान में पहुँचेगा। (नागपुर, १६४८)

बनारस, इन्टर कामर्स

१४ सर्व श्री रामगोपाल वशीधर, लखनऊ, बीस पेटी साइकिल का स्टैंडर्ड साइकिल कं०, लि० लन्दन से आयात करना चाहते हैं। माल के

आयात की विधि बताइये और प्रयोग में आने वाले पत्रों के नाम दीजिये। (बनारस, १९५१)

१५ कलकत्ते क एक व्यापारी का इगलैंड से माल का निर्यात करना है। जिस रीति का अनुगमन करना पड़ेगा और जिन दस्कों का उपयोग करना पड़ेगा उनका वर्णन कीजिये। (बनारस, १९४९)

दिल्ली, हायर सेकिंडरी

१६ आयात व्यापार के विभिन्न सोपानों की आर्डर देने से जहाज आने तक की रूपरेखा दीजिये। इस व्यापार में प्रयुक्त होने वाले प्रलेखों के नाम बताइये और उनका विवरण दीजिये। (दिल्ली, हा० से०, १९५३)

१७. कर देय (dutiable) माल के आयात का विस्तृत वर्णन दीजिये, और इस सम्बन्ध में थोक (wholesale) तथा प्रमाणित (bonded) गोदाम जो काम करते हैं, वह बताइये। (दिल्ली, हा० से०, १९५२)

१८ आयात व्यापार की विभिन्न श्रेणियों का, आर्डर देने से माल की पहुच तक, वर्णन कीजिये। प्रयुक्त होने वाले पत्रों का भी हवाला दीजिये। (दिल्ली, १९५०)

१९ करदेय (dutiable) माल के आयात करने का तरीक़ा विस्तारपूर्वक बताइये। इस सम्बध में प्रमाणित गोदाम (Bonded Warehouse) की उपयोगिता को भी समझाइये। (देहली हायर सेकिंडरी, १९४७)

अध्याय ३४

विदेशी बीजक बनाना

विदेशी व्यापार में बीजक का स्थान बहुत महत्वपूर्ण है। जैसे ही कारखाने वाला या निर्यात एजेंट विदेशी खरीदार को माल भेजता है, वैसे ही वह बीजक की तीन प्रतियाँ तैयार करके खरीदार के पास रवाना कर देता है। बीजक में खरीदार के लिये अदा किये गये खर्चे और माल के मूल्य सम्बन्धी विवरण दिये रहते हैं, साथ में बण्डलों पर लगाया गया चिन्ह, उनकी संख्या और साइज, जिस जहाज में माल आ रहा है उसका नाम भी लिखा रहता है। बीजक मिलने पर आयात-कर्ता इसका प्रबन्ध करता है कि जैसे ही जहाज बन्दरगाह पर आवे, माल की सुपुर्दगी ले ली जाय।

§ १. बीजक का स्वरूप

ऐसे बीजक के आरम्भ मे भेजे जाने वाले माल की मात्रा और किस्म, लाने वाले जहाज का नाम, उद्गम बन्दरगाह और उद्दिष्ट बन्दरगाह के नाम और खरीदार का नाम लिखा जाता है। यदि इडैंट की कोई संख्या हो, तो वह भी लिख दी जाती है।

शीर्षक के पश्चात् एक तालिका दी होती है। इसके पहले स्तम्भ (column) में बण्डलों पर लिखा हुआ चिन्ह लिखा जाता है, दूसरे स्तम्भ में माल का विवरण तथा पौतिक (अर्थात् माल भेजने वाले) ने विक्रेता के लिये जो खर्चा किया हो उसका विवरण लिखा जाता है; तीसरे स्तम्भ में दर लिखी जाती है; और चौथे और पाँचवें स्तम्भों में रकम। बीजक के नीचे "भूल चूक लेने देनी" (Errors and Omissions Excepted या E. & O. E.) लिख दिया जाता है; और उसके पश्चात् बीजक की तारीख दी जाती है और विक्रेता का हस्ताक्षर होता है।

Specimen Invoice

TWENTY CASES OF SILK
shipped by the undersigned per S S *Rajtarangini*
from London to Bombay
by order and for account and risk of
MESSRS B RAMDAS & CO, BOMBAY
Indent No 175

Mark	Particulars	@	Rs	as	p	Rs	as	p
	E & O E (Name of Exporter)							

विदेशी बीजकों के विषय में निम्नलिखित बातें ध्यान देने योग्य हैं

(१) विदेशी बीजक, प्रचलित प्रथा के अनुसार, या तो देशी चलन में या विदेशी चलन में बनाये जाते हैं। उदाहरण के लिए, ब्रिटेन और भारत के बीच में होने वाले व्यापार सम्बन्धी बीजक स्टर्लिंग में बनाये जाते हैं, रुपयों में नहीं। (यह बताना यहाँ आवश्यक नहीं है कि बीजक विक्रेता या निर्यात-कर्ता बनाता है, खरीदार या आयात कर्ता नहीं)

(२) निर्यात कर्ता को बीजक बनाने में विशेष सावधानी से काम लेना चाहिए। बीजक निर्यात किये गये माल के अनुसार ही होना चाहिये। भेजे जाने वाले माल और बीजक में लिखे हुये विवरण में कुछ अन्तर हुआ, तो विदेशी चुंगीघर में कदाचित् इसका पता लग जाय और आयात कर्ता को इसके लिए भारी दण्ड देना पड़े। ऐसी दशा में आयात-कर्ता निर्यात-कर्ता से दण्ड का रुपया माँगेगा। यह भी हो सकता है कि वह निर्यात कर्ता के आचरण से इतना अप्रसन्न हो जाय कि उससे वह माल मँगवाना ही बन्द कर दे।

(३) बीजक, स्थानीय (Loco Invoice) हो सकता है, या जहाज लदाई-माफ (Free on Board या F. O. B.) बीजक, या जहाज-किराया-माफ (Cost and Freight या C. & F.) बीजक, या बीमा खर्च-माफ (Cost, Insurance & Freight या C. I. F.) बीजक, या सब खर्च-माफ (Franco) बीजक। बीजक इनमें से किस प्रकार का होगा, यह क्रेता और विक्रेता के बीच में जो समझौता हुआ हो, उस पर निर्भर होता है। मूल्य के अतिरिक्त बीजक में वे भी खर्चे लिखे जाते हैं जो कि निर्यातकर्ता आयातकर्ता के लिए अदा करता है। उदाहरण के लिए अगर माल स्थानीय मूल्य के आधार पर भेजा गया है तो बीजक में पैकिंग का खर्च, बन्दरगाह तक गाड़ी से माल पहुँचाने का खर्च, जहाज पर लदाने का खर्च, किराया, प्रीमियम आदि लिखे जायँगे। यदि आधारित मूल्य जहाज-लदाई-माफ मूल्य हो, तो बीजक में केवल किराया और बीमा का खर्च शामिल किया जायगा। यहाँ पर यह बता देना आवश्यक है कि अधिकांश सौदे जहाज-किराया-माफ मूल्य (C. & F.) और बीमा-खर्च-माफ (C. I. F.) के आधार पर होते हैं।

§ २. किराये की गणना

विदेशी बीजक बनाने में विद्यार्थियों को जहाजी किराये की गणना करनी पड़ती है। जहाजी किराया अधिकतर प्रति टन के हिसाब से, किन्तु कभी-कभी प्रति बन्डल या प्रति स्टर्लिंग पाउंड के हिसाब से, आँका जाता है। जो टन गणना का आधार होता है, उसकी दो किस्में होती हैं :

(१) तौल का टन (Ton Weight)—यह २२४० पौंड का साधारण टन होता है; या

(२) माप का टन (Ton Measurement)—यह बन्डलों के घनाकार (cubical) माप से निकाला जाता है। प्रत्येक बन्डल का घनाकार माप उसकी लम्बाई, चौड़ाई और ऊँचाई के गुणा करने से प्राप्त किया जाता है। उसके पश्चात् ४० घनाकार फीट को एक टन के बराबर मान लिया जाता है। उदाहरण के लिए यदि बन्डलों का माप १०० घनाकार फीट हो, तो तौल

$\frac{\text{४००}}{\text{१८०}}$ = २$\frac{\text{२}}{\text{९}}$ टन होगी। इस स्टैंडर्ड को माप का टन कहते हैं। कभी-कभी ४० घनाकार फ़ीट को एक टन के बराबर मानने के बजाय ५० घनाकार फ़ीट को १ टन के बराबर माना जाता है। साधारणतया बन्डलों का माप प्रमाणित मापकर्ता (Licensed Measurers) करते हैं जो बन्दरगाहों में पाये जाते हैं। उनके मापों को जहाजी कम्पनियाँ मान्य समझती हैं।

किराया जहाजी कम्पनी की इच्छानुसार या तो तौल के अनुसार आँका जाता है या माप के टन के अनुसार। जहाजी कम्पनी उसी आधार का प्रयोग करती है जिसमें उसे अधिक किराया मिले। जहाज का स्थान सीमित होता है और यदि दो बन्डलों पर जिनका बोझ बराबर हो किन्तु जिनमें से एक दूसरे की अपेक्षा तिगुनी या चौगुनी जगह घेरे, बराबर किराया लेना अनुचित होगा। सामान्यतया माप के टन के आधार पर ही अधिकतर किराये की गणना की जाती है।

Illustration. A exports ten cases containing artificial silk, each measuring 60″×42″×45″. Freight is to be charged per ton of 40 cubic feet. Find out the freight @ 35s. per ton

The calculation involves three steps as follows

(*i*) The volume of all the 10 packages comes to

$10\,(60''\times42''\times45'')=10\left(5'\times\frac{7'}{2}\times\frac{15}{4}\right)=\frac{5250}{8}$ c f =

656.25 cubic feet.

(*ii*) Since 40 cubic feet make one ton, 656·25 cubic feet=

$\frac{656\ 25}{40}$ = 16 4 tons

(*iii*) Now we have to find out the freight of 16 4 tons @ 35s per ton The freight will be -

£ 16 4 @ 20/-per ton
£ 8.2 @ 10/-per ton
£ 4 1 @ 5/-per ton
Total £ 28.7 @ 35/-per ton
= £ 28-14-0.

यहाँ यह बता देना चाहिये कि गुणा करने का ऊपर वाला तरीका साधारण तरीके से अच्छा होता है। साधारण तरीके के अनुसार तौल को सीधे किराये की दर से गुणा करने म (ऊपर के मे १६:४ × ३५ शिलिङ्ग) कठिनाई होती है और उसम त्रुटियाँ भी हो सकती हैं। किन्तु ऊपर वाला तरीका आसान है और उसमें त्रुटियाँ होने की सम्भावना कम होती है। गणना को और भी आसान बनाने के लिये जहाँ तक हो सके, दशमलव का प्रयोग करना चाहिये।

अतिरिक्त किराया (Primage)—जहाजी कम्पनी वास्तविक किराये में १० प्रतिशत और जोड़ देती है। इसे **अतिरिक्त किराया या प्राइमेज** कहते हैं। आरम्भ में यह किराया जहाज के कप्तान को माल की देख रेख करने के उपलक्ष में दिया जाता था। किन्तु अब कप्तानों को जहाजी कम्पनियाँ पूरा वतन देती है और अतिरिक्त किराया रस्सी तथा अन्य ऐसी ही वस्तुओं की लागत के लिए रख लेती हैं। कभी-कभी अतिरिक्त किराया माल भेजने वाले को, पूर्णतया या आंशिक रूप में, बट्टे की तरह दे दिया जाता है। आजकल की प्रवृत्ति यह है कि अतिरिक्त किराये को किराये म ही विलीन (merge) कर दिया जाय।

§ ३. सामुद्रिक बीमे की प्रीमियम की गणना

जहाज से जो भी माल भेजा जाता है उसका सामुद्रिक बीमा अवश्य करा लिया जाता है जिससे कि विनाश या हानि होने पर समुचित क्षतिपूर्ति हो जाय। प्रीमियम की दर बीमा क दलाल या स्वयम् बीमा कम्पनियो से पूछ कर जानी जाती है। बीजक की रकम म १०% या १५ प्रतिशत लाभ के रूप में जोड़ कर कुल रकम का बीमा कराया जाता है। बीमा इस रकम से न तो अधिक का कराना चाहिये और न कम का। सामुद्रिक बीमे का प्रसंविदा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा* (contract of indemnity) होता है इसलिये यदि कोई हानि बीमे की रकम से अधिक हो तो बीमे की रकम से अधिक रुपया बीमा कम्पनी से

*देखिये अगला अध्याय "सामुद्रिक बीमा"।

नहीं मिल सकता, और यदि हानि की रकम बीमे के रकम से कम हो तो केवल हानि की रकम ही मिल सकेगी। मान लीजिये किसी माल का मूल्य १२००) रुपया है किन्तु उस पर केवल १०००) का बीमा कराया गया है। यदि माल का पूर्ण विनाश हो जाय तो १०००) से अधिक नहीं मिलेगा। यदि माल का मूल्य ८००) हो और बीमा १०००) का हो, तो पूर्ण विनाश होने पर केवल ८००) ही मिलेंगे। अतः यह स्पष्ट है कि यदि बीमा कराने वाला उचित रकम से अधिक या कम का बीमा करायेगा, तो वह घाटे में रहेगा।

बीमे की प्रीमियम की गणना करते समय आधी शिलिंग से कम की रकम को छोड़ दिया जाता है और आधी शिलिङ्ग या उससे अधिक की रकम को एक शिलिंग मान लिया जाता है। उदाहरण के लिए, पौं० २६४६—५—५ को पौं० २६४६ के बराबर माना जायगा; किन्तु पौं० २६४६—१२—५ को पौं० २६५० माना जायगा। विद्यार्थियों को जो प्रश्न दिये जाते हैं उनमें जिस रकम पर प्रीमियम की गणना करनी होनी है, वह दी होती है; और कभी-कभी प्रीमियम की रकम ही दे दी जाती है।

§ ४. मूल्य की गणना

विदेशी व्यापार में जो मूल्य काम में आते हैं, उनकी विस्तृत विवेचना हम अध्याय ५४ में कर चुके हैं। जब आपको कोई खास मूल्य (जैसे जहाज-लदाई-माफ मूल्य या बीमा-खर्च-माफ मूल्य) आँकना हो, तो पहले आपको यह बात स्पष्ट होनी चाहिये कि उस मूल्य में कौन-कौन से अंश सम्मिलित होते हैं। उस मूल्य में जो भी अंश शामिल होते हों, उनको माल के मौलिक मूल्य में जोड़ देने से आवश्यक मूल्य निकल आता है। यदि पाठक नीचे दिये जाने वाले बीजकों का सावधानी से अध्ययन करें, तो उन्हें मूल्य आँकने का तरीका मालूम हो जायगा।

§ ५. बीजकों के उदाहरण

On 10th February 1950, Douglas Fraser & Sons, Ltd., Lon-

don, shipped the following goods per S S *Demos* to Bombay by order of Bansidhar Ramgopal, General Merchants, Delhi

Ten cases marked

each containing 500 pieces of artificial silk (Sample No 87345), each piece of 8 yards at $1\frac{1}{4}$d per yard The charges in connection with the ship were Packing 7s 6d per case, Carriage to port, 12s Dock charges, 17s 6d, Bill of Lading, etc, 5s Freight @ 35s per ton of 40 cubic feet plus 10%, the measurements of each case being 60′×42″×45″, Insurance on £ 250 @ 5s % Commission @ 5% You are required to make (1) Loco Invoice (2) F O B Invoice (3) C & F Invoice, (4) C I F Invoice, and (5) Franco Invoice

(१) स्थानीय बीजक (Loco Invoice) यदि माल स्थानीय मूल्य पर बेचा गया हो, तो जो मूल्य प्रश्न में दिया हो उसी को बीजक में लिखना चाहिये। जितने भी खर्चे हों, वे अलग से दिखाने चाहिये। माल के मूल्य तथा सब खर्चों को जोड़कर जो कुल रकम आवे उस पर कमीशन मालूम किया जाता है। हम नीचे स्थानीय बीजक देते हैं

स्थानीय (Loco) बीजक

INVOICE OF TEN CASES OF ARTIFICIAL SILK
Shipped by the undersigned per S. S. *Demos*
From London to Bombay
By order and for account and risk of
MESSRS BANSIDHAR RAMGOPAL, DELHI
Indent No. 1375

			£	s.	d.	£	s.	d
B. R. / Bombay 1/0	Ten cases, each containing 500 pieces of Artificial Silk. Sample No. 87345, each piece of 8 yds., 40,000 yds.	1¼d.				208	6	8
	Charges							
	Packing of ten cases	7/6	3	15	—			
	Carriage to port		—	12	—			
	Dock charges ...		—	17	6			
	Bill of Lading, etc. ...		—	5	—			
	Freight on 10 (60″×42″×45″)=656. 25 cubic feet @ 35 per ton=£28—14—0 +10%=£ 2— 7—5		31	11	5			
	Marine insurance on £250	5%	—	12	6			
						37	13	5
						246	0	1
	Commission	5%				12	6	—
					£	258	6	1

E. & O. E.
London, February 10, 1930.
Douglas Fraser & Sons, Ltd.

(२) जहाज-लदाई-माफ (F. O. B.) बीजक—यदि माल जहाज-लदाई-माफ मूल्य पर बेचा गया हो, तो प्रश्न हल करने के लिए सबसे पहले

जहाज-लदाई-माफ मूल्य का पता लगा लेना चाहिये। इस मूल्य में किराया और बीमे की प्रीमियम सम्मिलित नहीं होती; अतः इनको व्यय के शीर्षक के अन्तर्गत दिखाना चाहिये। जहाज-लदाई-माफ मूल्य की गणना अगले पृष्ठ पर दिखाई गई है।

जहाज-लदाई-माफ (F. O. B.) बीजक

INVOICE OF TEN CASES OF ARTIFICIAL SILK
Shipped by the undersigned per S. S. *Demot*
From London to Bombay
By order and for account and risk of
MESSRS BANSIDHAR RAMGOPAL, DELHI.

Indent No. 1375

			£	s.	d.	£	s.	
B. R. Bombay	Ten cases, each containing 500 pieces of Artificial Silk (Sample No. 87345), each piece of 8 yds. = 40,000 yds. F. O. B London ...	1.33d				213	16	2
	Charges							
	Freight on 10 (60″×42″×45″) = 656.28 cubic feet @ 35 per ton £ = 28—14—0 +10% = 2—17—5		31	11	5			
	Marine Insurance on £250	5%	—	12	6			
						32	3	11
						246	0	1
	Commission ...	5%				12	6	0
						258	6	1
	E. & O. E. London, February 10, 1950 Douglas, Fraser & Sons Ltd.							

	£	s	d
0 pieces of artificial Silk each piece of 8 yds @ $1\frac{1}{2}$ d per yd.	208	6	8
— Add packing of ten cases @ 7/6	3	15	0
" carriage to port	0	12	0
" dock charges	0	17	6
" B/L etc.	0	5	0
Cost of goods on board ...	213	16	2

F O B price per yard = £213-16-2 ÷ 40,000 1 33 d

(३) जहाज किराया माफ (C & F.) बीजक—यदि उपरोक्त समाचार के आधार पर आपको जहाज किराया-माफ बीजक बनाना हो, तो आपको सबसे पहले जहाज किराया-माफ मूल्य की गणना करनी चाहिये। बीमा की प्रीमियम ही केवल ऐसी वस्तु है जो मूल्य में सम्मिलित नहीं होती, अतः उसे अलग से व्यय के रूप में दिखाना पड़ेगा। जहाज किराया माफ मूल्य इस प्रकार निकाला जायगा :

	£	s	d
Price of goods on board	213	16	2
Add freight	31	11	5
Total	235	7	7

C and F. Price per yard = £245-7-7 ÷ 40,000 = 1 47d

जहाज-किराया-माफ (C. &. F.) बीजक

INVOICE OF TEN CASES OF ARTIFICIAL SILK

Shipped by the undersigned per S. S. *Demos*

From London to Bombay

By order and for account and risk of

MESSRS BANISDHAR RAMGOAL, DELHI,

Indent No. 1375,

			£	s.	d.	£	s.	d.
B. R. Bombay 1/10	Ten cases, each containing 500 pieces of Artificial Silk (Sample No. 87345) each piece of 8 yds. = 40,000 yds., C. & F. Bombay ...	1.47d				245	7	7
	Charges Insurance on £250	5s.%					12	6
						246	0	1
	Commission ...	4%				12	6	0
E. & O E,	London, Feb, 10, 1950. Douglas Fraser & Sons, Ltd.				£	258	6	1

(४) बीमा-खर्च-माफ (C. I. F.) बीजक—जैसा ऊपर किया गया है, उससे पहले आप बीमा-खर्च-माफ मूल्य निकाल लीजिये। प्रश्न में बताये गये सब खर्च इस मूल्य में सम्मिलित होते हैं; केवल कमीशन ही अलग से व्यय के रूप में दिखाना पड़ता है। बीमा-खर्च-माफ मूल्य की गणना इस प्रकार होगी :

		£	s.	d.
C. & F. price	.. ...	245	7	7
Add Insurance	... ...		12	6
Total	...	246	0	1

C. I. F. price per yard = £246-0-1 ÷ 40,000
= 1.48d.

बीमा-खर्च-माफ (C. I. F.) बीजक

INVOICE OF TEN CASES OF ARTIFICIAL SILK
Shipped by the undersigned per S. S. *Demos.*
From London to Bombay
By order and for account and risk of
MESSRS BANSIDHAR RAMGOPAL, DELHI
Indent No. 1375.

			£	s.	d.	£	s.	d.
B, R, Bombay 1/10	Ten cases, each containing 500 pieces of Artificial Silk (Sample No. 87345) each piece of 8 yds. = 40,000 yds., C I F., Bombay. ...	1.48d				246	0	1
	Charge Commission ...	5%				12	6	0
						258	6	0
	E. & O. E.							
	London. Feb. 10. 1950. Douglas Fraser & Sons. Ltd.							

(५) सब खर्च माफ (Franco) बीजक—इस प्रकार के बीजक बनाने के पहले सब-खर्च माफ मूल्य निकाल लेना चाहिए। माल के आयातकर्ता के दरवाजे तक पहुँचने मे जितना भी व्यय होता है, वह इस मूल्य मे सम्मिलित होता है। माल का सब खर्च माफ मूल्य मालूम करने के लिए, हमें बीमा खर्च माफ मूल्य में निम्नलिखित व्यय जोड़ने पड़ेंगे . बम्बई में लगने वाला आयात कर, डाक का चार्ज, बम्बई स्टेशन तक गाड़ी द्वारा ढुलाई का व्यय, दिल्ली तक रेल का किराया और दिल्ली स्टेशन से आयातकर्ता के गोदाम तक माल की ढुलाई। सब खर्च-माफ मूल्य मे कमीशन भी शामिल होता है। सब खर्च माफ बीजक अधिकतर आयातकर्ता के चलन में ही तैयार किये जाते हैं। किन्तु माल इस मूल्य पर कदाचित् ही कभी खरीदा जाता हो। अत ऐसे बीजक बनाने का अवसर बहुत कम आता है। हम नीचे इसका उदाहरण देते हैं

	Rs	as	ps
C I F price £246 0 1, which is equal to @ Re 1=1s 6d	3,280	1	0
Add Import Duty	600	0	0
" Dock Charges	15	0	0
" Cartage	6	0	0
" Railway Freight	300	0	0
" Octroi duty	50	0	0
" Cartage	6	0	0
	4257	1	0
" Commission @ 5%	212	13	7
	4469	14	7

Franco price per yard Rs 4,469 14 10 ÷ 40 000
=1 a 9 5 ps

सब-खर्च-माफ (FRANCO) बीजक

INVOICE OF TEN CASES OF ARTIFICIAL SILK

Shipped by the undersigned per *S. S. Demos*
From London to Bombay
By order and for account and risk of
MESSRS BANSIDHAR RAMGOPAL, DELHI
Indent No 1375

Marks	Particulars	Rate Rs. A p.	Rs.	A. p.
B.R. / Bombay / 1/10	Ten cases, each containing 500 pieces of Artificial Silk (Sample No. 87345), each piece of 8 yds. = 40,000 yds. Franco Bombay	1 a. 9.5p.	4,469	4 10
	E & O. E.		4469	4 10
	London, February 10 1950. Douglas Fraser & Sons. Ltd.			

६. एक और उदाहरण : स्थानीय (LOCO) बीजक

Prepare a loco invoice for ten cases marked $\frac{\text{I H.}}{\text{B.}}$ numbers 31/40 containing 30 pieces of 26" Artificial Silk, the lengths being 2/60, 5/70, 8/65, 10/66, 5/68 @ 1s per yd. shipped by Messrs Smith, Bolton & Co., London, to Messrs Ramchand Hirachand. Poona, per S. S. *Jaltarang*. The charges were : Packing. 9s per case, carriage to port, 10s.; freight to Bombay at 18s, 6d. per ton and ten per cent ; each case measuring 2'10"×1'11"×11"; B/L and shipping charges, 10s. 8d.; Marine insurance @ 5s. per cent.

INVOICE OF TEN CASES OF ARTIFICIAL SILK
Shipped by the undersigned per *S. S Jalatarang*
From London to Bombay
By order and for account and risk of
MESSRS RAMCHAND HIRACHAND, POONA

			£	s	d.	£	s	d
R. H / B 31/40	Ten cases, containing 30 pieces 26″ Artificial Silk 2/60, 5/70 8/65, 10/66, 5/68 = 1990 yds.	1 s				99	10	
	Charges							
	Ten cases, packing	6d		3	—			
	Carriage to port		—	10	—			
	Freight on 95 c f — 40 @ 18/9 + 10%		2	9	—			
	B/L & shipping charge		—	10	8			
	Marine Insurance on £117	5s	—	5	10			
						6	15	2
	E & O E London, May 1, 1950 Smith, Bolton & Co					106	5	2

§ ७. एक और उदाहरण · जहाज-लदाई-माफ (F. O. B.) बीजक

Messrs Atkinson & Atkinson, Leicester, shipped to the Standard Leather Stores, Bombay, the following goods per

S. S. Victoria : four cases, 2 containing 200 pairs of Men's Leather Boots each priced @ 12s F. O. B. London, and the other two containing 200 pieces of Ladies' Leather Boots each priced @ 10s F. O. B. London. Freight is paid on 65′ 4″ @ 85s Marine insurance is effected @ 10s. per cent. Prepare the F. O. B Invoice which Messrs. Atkinson & Atkinson, Leicester, will send to the Standard Leather Stores, Bombay.

INVOICE OF FOUR CASES OF SHOES
Shipped by the undersigned per *S. S. Victoria*
From London to Bombay
By order and for account and risk of
THE STANDARD LEATHER STORES, BOMBAY.

			£	s.	d.	£	s.	d.
L. S. \B/ 10/2 12/14	Two cases, each containing 200 pairs of Men's Leather Boots, F O B. London.	12s.	240	—	—			
	Two cases, each containing 200 pairs of Ladies' Leather Boots, F. O. B. London.	10s.	200	—	—	440	—	—
	Charges							
	Freight 65′4″ @ 85s = £6-18-10+10%-£0-13-11		7	12	9			
	Marine Insurance on £452	10s.	2	9	2	10	1	11
						450	1	11
	E. & O. E. Leicester, May 1, 1950. Atkinson & Atkinson							

८. सब खर्च माफ (FRANCO) बीजक

Prepare a Franco Invoice for the following goods sold by Tupman and Sons, London, to Quixote & Bros, Bombay 8 cases, each 45 pcs, 20' white shirtings, at 35 3s per piece Packing 3s per case Carriage to London and Freight at 22s per steamer ton plus 10% Each case measures 3'2"×1'1"× 2'4" Marine insurance, B/L and charges come to 2s 4d Import duty Rs 10 Exchange Re 1=1s 6d Shipped from London per S S Windsor

हल

1 *Price*

45 pieces @ 3s 3d = £7 6s 3d

8 cases, each containing 45 pieces = £ 58 1 0

2 *Packing* @ 3s — £ 1-4 0

3 *Freight*

8 (3' 2"×1'1"×6'4"=8 cubic feet)
=64 cub ft

@ 11s per ton of 40 cub ft
=£ 0 17 7
Add 10% = £ 0 1 9

£ 0 19-4

4 *Insurance, B/L and Charges* — £ 0 2 4

Total — £ 60 15 8

£60 15 8 @ 1s 6d = Re 1 — = Rs 810 7 0
Add import duty — = Rs 10 0 0

Total Cost — = Rs 820 7 1

Price per piece is $\frac{\text{Rs } 820\ 7\ 1}{360}$ = Rs 2 4 6

INVOICE OF EIGHT CASES OF WHITE SHIRTINGS Shipped by the undersigned per S. S *Windsor* From London to Bombay By order and for account and risk of MESSRS. QUIXOTE & BROS , BOMBAY					
		Rs.	Rs.	a	p
Q. B. Bombay 10/17	Eight cases, each containing 45 pieces 20′ White Shirtings, Franco Bombay	2-4-6	820	7	1
			820	7	1
	E. & O E				
	London August 1 1951. Tupman & Sons.				

अभ्यास के प्रश्न

१. बीजक क्या होता है ? इसमें क्या लिखा रहता है ? इसका एक नमूना दीजिये।

२. विदेशी बीजक बनाने में कौन-सी बातों पर विशेष ध्यान देना चाहिये।

३. जहाजी किराये की गणना करने के क्या आधार हैं और उनमें से कौन-सा सबसे अधिक महत्व का है ? W/M का क्या आशय है ?

४. एक काल्पनिक उदाहरण लेकर जहाजी किराये की गणना करने की विधि बताइये। अतिरिक्त किराया (Primage) क्या होता है ?

५. सामुद्रिक बीमे की रकम मालूम करने के लिए माल के बीजक वाले मूल्य में १० प्रतिशत, क्यों जोड़ देते हैं ?

6. Messrs Pickwick and Snodgrass want 1 ton 3 cwt of furniture valued at £25 10s to be placed on board the S S *Winter* at London for conveyance to Marseilles The rate is 35s 9d per ton The charges for transferring the goods from quay to the hold of the vessel is 1s per ton weight Add stamps 6d, gratuities 2s 6d Find out the F O B quotation (Answer £ 27 15s)

7 A merchant in Bombay requests Messrs J Middleton & Co of Leeds, to quote for 10 tons cwt of iron bars 10′×2″×1/2″ F O B at Liverpool The cost of collection is 2s per ton, of transit to Liverpool 8s per ton, of cartage in Liverpool 12s and a sum of 5s 6d has to be added for dues and incidentals The metal is worth £ 3 10s per ton Find out the F O B price (Answer £ 42 1s 6d)

8 Messrs T Robbins and Bros, Pall Mall, S W, want to prepare a quotation for linen packed in cases and delivered F O B at Liverpool to be sent to Brazil Taking railway freight from London to Liverpool as £ 3 15s prepare an F O B quotation, given that the gross weight is 1 ton 10 cwt, that the cost of packing £ 2 15s, of cartage in London 12s 6d, of cartage, dues and shipping charges at Liverpool £ 2 3s and of fire insurance, 7s 6d p c on the value of the goods which is £ 850 (Answer £862 9s 3d)

9 Quote Franco, London to Sydney, for two tanks of soap valued at £ 225 15s less 20 p c trade discount, if the expenses are as follows 2 tanks at 50s each, Bs/L 2s, shipping costs, 2s 6d, lighterage on 2 tons 10 cwt 2 qrs at 4s 9d per ton, 2s 6d, lighterage on 2 tons 10 cwt 2 qrs at 4s 9d per ton, port rate in London, 1s 2d insurance, £ 217 at 6s 3d p c and stamps 3d, freight on 141′ 10′ at 52s 6d per ton + 10 p c, import duty on soap 20 p c ad valorem, wharfage 5s per ton (measurement), cartage £ 1, agents, commission 10s, sale of cases 15s, each, bond rent, four weeks at 3d per week, delivery charges 1s 6d Also prepare a Franco Invoice (Answer £ 243 10s 1d)

10 Make out an invoice, a freight account and a C I F. quotation for the locomotives shipped from Newcastle-on-Tyne to Buenos Aires via London Locomotives weigh 80 tons and are valued at £ 2000, coasting steamer, Newcastle-on Tyne to London @ 25s per ton, lighterage by barge from coasting steamer to outward Buenos Aires steamer @ 12s 6d, per ton, Ocean freight, London to Buenos Aires, @ 60s per ton, marine insurance 15s p c, revenue stamps on policy @ 1d p c, policy, 3d, Bs/L, 1s, 6d, duck dues at Newcastle £ 11 2s, agents' commission, 1 p c on his disbursements (i e, on everything but the cost of the goods)

There are ten cases, numbered 21 to 30 and the marks are

N V,
B A
B A

(Freight £406 15s 5d, C I F £2,410 16 9d)

11 What would be the amount for freight on the following. (a) 4 cases each 3'4"×2'6"×3'9" @ 36s and 10 p c, (b) 5 bales each 3'9"×4'3"×3'3" @ 32s and 10 p c, (c) 3 cases each 3'5"×4'2"×2'3" @ 19s and 10 p c, (West Riding C C Inter)

12. 20 rolls of cloth each of 100 yds, are quoted 9d per yd The cases cost 18s 6d, Dock charges 4s 9d, Insurance 5s. 3d, Freight & B/L £3-0 10 Show how you will arrive at F O B, C I F and C and F prices

13 Draw up in proper style and form an invoice for the following produce shipped from Jamaica per steamer Port Kingston, by Arnold and Co, and consigned to Jones and Co, Bristol 25 cwt Ginger @ 65s, 1200 lbs Pimento @ 23/4d, 50 cwt Beeswax @ 155s, 200 lbs Sarsaparilla @ 1s 3d, 200 tons Logood @ 85s, 50 tons Fustic @ 60s Charges. warehousing and wharfage, £ 10 5s Advertising £ 5 13s. Brokerage, 1 p c.

(Lancashire and Cheshire Union Senior Exam)

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१ अपनी तरफ से ५ कल्पित सौदे लेकर निर्यात बीजक तैयार कीजिये।

(उ० प्र० १९५४)

३ बम्बई के मैसर्स रतीलाल एण्ड कम्पनी ने डरबन के श्री मुबारक अली को ५,००० गज सफेद कमीज का कपड़ा 'जलविहार' जहाज द्वारा भेजा है जिसका विवरण निम्नलिखित है :—

कपड़े का गोदाम पर मूल्य ।।।=) गज ; पैकिंग खर्च २०।=) ; बन्दरगाह पर माल भेजने का खर्च १४।।), बन्दरगाह की फीस २५।।=); स्टाम्प खर्च २।।), जहाज का भाड़ा २२०) जिस पर १० प्रतिशत प्रायमेज लगा; बीमा खर्च ।।) प्रतिशत।

उपरोक्त विवरण से निर्यात बीजक बनाइए और जिन बातों की आवश्यकता हो स्वयं भरिए। (यू० पी०, १९५१)

४. नवम्बर २०, १९४८ को लन्दन की मेसर्स मार्टिन एण्ड कम्पनी ने लन्दन नगर जहाज द्वारा निम्नलिखित माल बम्बई की मिडलैण्ड एण्ड कम्पनी को भेजा :—

१० पेटियाँ मार्का [म] जिसमें प्रत्येक में १५६ छाते थे। इन छातों का मूल्य ६४ शि० प्रति दर्जन था। माल भेजने में निम्नलिखित खर्चा हुआ :—

बँधाई १५ शि० प्रति पेटी; बन्दरगाह तक गाड़ी भाड़ा १२ शि० ६ पेंस, जहाज महसूल २३ शि०, बिल बनाने का खर्चा आदि ४ शि० ३पैंस; कमीशन ५ प्रतिशत; बीमा ४२५ पौंड पर ६ शि० प्रति शत। प्रत्येक पेटी का नाप इस प्रकार है—४' ६" × ३' ४" × ३' ३" और महसूल दर २७ शि० प्रति ४० घन फीट प्रति टन है। इसके अतिरिक्त १० प्रतिशत जहाज की दस्तूरी भी लगी है।

बीजक के रुपये के लिए ६० दिन के डी/ए बिल की तीन प्रतिलिपियाँ बनाकर अन्य अधिकार पत्रों के साथ नेशनल बैंक आव इंडिया लि० बम्बई को भेज दिये गये हैं।

उपयुक्त विवरण से (अ) बीजक बनाइए और (ब) उचित नमूने पर बिल का पहला प्रतिरूप तैयार कीजिये। (यू० पी० १९५०)

5. From the following particulars prepare in proper form an invoice to be submitted to Messrs Himmat Ram Kripa Shanker of Bombay

On 15th January, 1940, Messrs, Allen Brothers & Co, of Manchester, shipped the following goods per S S Light of Asia to the order of Messrs Himmat Ram Kripa Shanker of Bombay —

10 cases marked | N K | of Bombay each containing 50 pieces of grey shirtings @ 12 as per piece of 40 yards The charges in connection with the shipment were —

Packing 5s per case, Carriage to port, 12s 6d; Shipping Charges, 10s, Bills of Lading, etc., 3s 6d Each case measures 4'5"×3'8"×3'4" and freight is to be charged at the rate of 22s per ton of 40 cubic feet and 10 p c primage Insurance is to be effected at £350 at 5s per cent (U P 1945)

6 Prepare an A/S of 100 bales of Kashmir Wool ex- S S Orient from Karachi, sold by Sydney Webb & Co, London, for account and risk of Rahim Baksh & Sons, Karachi

Gross Weight 364 cwt 2 qr 14 lb
Tare and draft 14 cwt 1 qr 7 lb

Sold at 64 shillings per cwt The charges incurred by the consignees were · Freight on gross weight @ 60 shilling per ton or 20 cwt, Fire insurance, £ 2 15-0, Dock and warehouse charges, £ 16 7 6, Sales expenses @ 6d per bale, Brokerage @ 1/2 p c, on gross proceeds, Commission and del credere @ 2½ p c (U P, 1944)

7 On 5th January 1943, Messrs John Anderson Co, of Manchester, shipped the following goods per S S City of Karachi to the order of Messrs K I Mehta and Company, Bombay —

Five cases of artificial silk marked KL M & Co / Bombay each containing 24 pieces of 48 yards each @ 7 3/4d per yard The charges in connection with the shipment are —

Packing 10s 6d per case, carriage to port, 83s 3d, Shipping charges, 12s, 4d, Bills of Lading, 3s 6d, Freight 35s per ton of 40 cub ft and 10 p c primage

Marine Insurance on £ 220 at 6s per cent F P A Each case measured 4′4″×2′6″×4′0″

Make out the invoice in proper form, and calculate the price per yard C I F Bombay (U P Com, 1943)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

8 On 10th March, 1950, A B & Co, Ltd, London, shipped the following goods per S S *Demos* to Bombay by order of Bansidhar Ram Gopal, Merchants, Delhi —

Ten cases marked B R each containing 300 pieces of Artificial Silk Trimmings each piece of 8 yds @ 1¼ d less 12½% The charges in connection with shipment were Packing 7/6d per Case, carriage to port 12/, Dock charges, 17/6 d, B/L etc 5/, Freight @ 20/ per ton of 40 c. f +10%, the measurement of each case being 60″×42″×45″, Insurance on £250 @ 5/ per cent, Commission @ 5/ per cent

You are required to make out the invoice in proper form (Rajputana, 1951)

9 Make an export invoice, using imaginary particulars *(Rajputana, 1948)*

10. Bhatia & Co, of Bombay, order from Shorts and Co, London, the following goods 500 000 P J Cigarettes 'Standard' Size, 100,000 P J Cigarettes 'Large size,' 6 Gross Briar Pipes, and 10 dozen Oil skin tobacco pouches

Submit the above order in form of an indent with the usual instruction such documents contain

Assume your own price for the above goods, and prepare the invoices Shorts & Co would send to Bhatia & Co, with

the additional charges usual in such transaction The cigarettes are subject to 10 per cent, and the remaining goods to 15 per cent trade discount (Rajputana, 1944)

सागर, इन्टर कामर्स

11 Make out a C & F invoice from the following particulars —

Sellers—Messrs Southey & Co , London
Buyers—Messrs Badruddin & Co , Bombay
Steamship—Star of India
Shipment—One case measuring 3'6"×4'9"×3'3"

marked containing

the following —

6 Silver flasks @ £ 1/8/6 each
6 Leather, cases @ 13 sh each
6 Dozen Silver Cofee Spoons @ £ 2/18/4 doz Discount 15% Trade Discount

Charges Freight £ 2/8/ per ton measurement (1 Ton=40 c. f) +10% primage, carriage to the port of London /8/6d , Dock charges & B/L, /4/
Insurance for the amount of invoice @ 10/6 d per cent
(Sagar 1951 S)

१२ फरवरी १०, १९४८ को दिल्ली के श्री वशीधर रामगोपाल के आर्डर क अनुसार श्री डगलस फ्रेजर एण्ड सन्स निम्नलिखित माल 'जलतरग' नामक जहाज के द्वारा बम्बई को भेजा।

१० पेटी जिन पर यह चिन्ह

B R.
0/40
BOMBAY

अकित है और प्रत्येक पेटी में ५०० टुकड़े नकली सिल्क के (नमूना न० ८७३४५) हैं। प्रत्येक टुकड़ा

८ गज का है और दर है १३/४ पैंस प्रति गज ऋण १२।। प्रतिशत। माल भेजने के सम्बन्ध में निम्नलिखित व्यय हुआ :

पैकिंग ७ शि० ६ पैंस प्रति पेटी; बन्दरगाह तक ढुलाई १२ शि०; डाक व्यय, १७ शि० ६ पेंस; जहाजी बिल्टी, ५ शि०, जहाजी किराया, ३५ शि० प्रति टन (४० घन फीट या Cubic feet का) घन १० प्रतिशत (प्रत्येक पेटी का नाप है ६०"×४२"×४५"; २५० पौंड पर बीमा दर ५ शि० प्रतिशत। कमीशन बीजक की कुल रकम पर ३ प्रतिशत।

माल का बीजक उपयुक्त स्वरूप में बताइए। नेशनल बैंक आव इंडिया के पक्ष में एक रुक्के वाला बिल भी बनाइए जो स्वीकृति से ३० दिन बाद देय होगा। (सागर, १६४६)

नागपुर, इन्टर कामर्स

१३, बम्बई की रामचंद्रा कम्पनी ने मैनचेस्टर की एडर्सन कम्पनी से निम्नलिखित माल खरीदा : —

(१) १०० गज ट्वीड क्रमाक ६०५ दर २।) प्रति गज।

(२) ८०० गज वर्स्टेड क्रमाक १०१५ दर २।।।) प्रति गज।

(३) १,००० गज ओवरकोट का कपड़ा क्रमाक २१२५ दर २।) प्रतिगज।

(४) १,५०० गज पैंट का कपड़ा क्रमांक ३२२३ दर १।।) गज।

प्रत्येक प्रकार का माल अलग-अलग पेटियों मे बन्द कर 'जलऊषा' जहाज द्वारा बम्बई भेजा गया। प्रत्येक पेटी पर बगल की मुहर थी। खर्च इस प्रकार हुआ : वेष्ठन १०); वाहन व्यय १२); नौ व्यय १५); वहन-पत्र २); भाटक ४० घनफुट के लिए ३५) के प्रमाण मे और अधिनौभाटक १०%; समुद्र आगोप ५५); प्रत्येक पेटी का नाप ४'×२'×४' है। C. I. F. बीजक तैयार कीजिये (नागपुर, १६५२)

रामचन्द्रा कम्पनी बम्बई

बनारस, इण्टर कामर्स

१४. अपनी कल्पना से ब्यौरा देकर, एक स्थानीय बीजक बनाइये। (बनारस, १६४६)

15. On 10th December, 1950, Messrs Read & Co, of Liver-

pool, shipped the following goods per S S *City of London* to Messrs Prem & Co, Kanpur —

Five cases marked | P C | each containing 75 pieces of white shirting @ 23s per piece of 40 yards The charges in connection with the shipment are packing 8s per carriage to port 125 case, 6d commission £ 5, insurance is to be effected on £ 450 at 5s per cent Each case measures 4'6"×3'8"×3'8" and freight is charged @ 22s per ton of 40 c f and 10% primage All the cases weigh 1½ tons

A thirty days' after sight D/A Bill is drawn in triplicate for the amount of the invoice and the shipping documents are sent through the National Bank of India, Ltd, Kanpur

You are required (*a*) to make out the *invoice* for the goods and (*b*) to draft the *first copy of the bill* (Banaras 1952)

दिल्ली, हायर सेकिंडरी

16 On 25th March, 1951, Smith & Co of London shipped to Messrs Deviprasad and Co, Bombay, the following goods per *S S Renown*—

12 Cases, each containing 450 pieces of artificial silk trimmings, each piece of 10 yds @ 1/8d per yard less 10% The charges in connection with the shipment were packing 7s 6d per case, carriage to port 15s, dock charges 25s, B/L etc 6s, freight @ 25s per ton of 40 c f plus 10%, the measurement of each case being 70"×48"×36", Insurance £ 400 @ 6s 4d per cent, Commission

@ 5s per cent Cases | D C / Bombay | 1/12 Make out invoice on Loco and F O B terms (Delhi, 1951)

बिहार, इन्टर कामर्स

१८ प्राइमेज (Primage) का क्या अर्थ होता है ? (बिहार, १६५४)

बीमा

अध्याय ४५

बीमा (Insurance)

§ १- प्रारम्भिक

मनुष्य के जीवन और सम्पत्ति को अगणित दिशाओं से विनाश या क्षति का सकट लगा रहता है। यह हो सकता है कि किसी परिवार के पोषक की मृत्यु हो जाय और उसका परिवार निर्धनता की यातनाओं का शिकार बन जाय। यह भी हो सकता है कि किसी मनुष्य के घर में आग लग जाय और कुछ समय में ही वह राख का ढेर हो जाय। व्यापारी का जहाज ऊँची-ऊँची लहरों के कारण उलट सकता है और उसकी क्षति हो सकती है या पूर्ण विनाश हो सकता है। जो व्यक्ति ऐसे संकटों के शिकार होते हैं उनको भारी आर्थिक हानि उठानी पड़ती है और उनमें से बहुत से वस्तुतः उजड़ ही जाते हैं। ऐसे संकटों से रक्षा प्राप्त करने के लिए ही बीमा की प्रणाली का आविष्कार किया गया है। बीमा कम्पनी थोड़े से रुपये, जिन्हें प्रीमियम (Premium) कहते हैं, के एवज में इस बात की प्रतिज्ञा करती है कि किसी विशेष घटना के घटित होने पर वह एक निश्चित धन-राशि अदा करेगी। उदाहरण के लिये, एक कारखाने का स्वामी जिसका मूल्य बीस हजार रुपये है, थोड़ा प्रीमियम देकर कारखाने का बीमा २०,०००) का करा सकता है। यदि कारखाने म आग लग जाय और वह राख का ढेर हो जाय, तो बीमा कम्पनी उसके स्वामी को २०,०००) अदा करेगी। इसी प्रकार एक २३ वर्ष का युवक लगभग २५०) वार्षिक प्रीमियम के एवज में अपने जीवन का बीमा १०,०००) का करा सकता है। यदि उसकी मृत्यु हो

जाय, तो बीमा कम्पनी उसके उत्तराधिकारी को १०,०००) देगी। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि बीमा कम्पनी मनुष्यों की भारी आर्थिक हानि से रक्षा करने का एक बहुत ही उपयोगी व्यापारिक उपाय है।

बीमा एक ऐसा प्रसविदा है जिसके अनुसार किसी प्रतिफल (consideration) के एवज में एक पक्ष दूसरे पक्ष को किसी विशेष घटना के घटित होने पर एक निश्चित धनराशि अदा करने के लिये सहमत हो जाता है। अमरीकन न्यायाधीश, चीफ जस्टिस टिन्डाल, ने एक बार कहा था कि बीमा ऐसा प्रसविदा है जिसमें कि बीमा पात्र बीमा कर्ता को रुपये की एक रकम उसकी इस प्रतिज्ञा के एवज में देता है कि वह एक कथित घटना के घटने पर उससे बड़ी रकम अदा करेगा। वह व्यक्ति जो दूसरे व्यक्ति की किसी संकट से रक्षा करता है **बीमा कर्ता** (Insurer) कहलाता है, **और** जिस व्यक्ति की सकट से रक्षा होती है, वह **बीमा-पात्र** (Insured) कहलाता है। जिस रकम के लिये बीमा-पत्र लिया जाता है वह **बीमा की रकम** (Insured amount) कहलाती है। बीमा-पात्र बीमा-कर्ता को जो प्रतिफल देता है, उसे प्रीमियम (Premium) कहते हैं।

यह साफ-साफ समझ लेना चाहिये कि बीमा हानि या विनाश के संकट को नहीं रोक सकता, वह केवल संकटजन्य हानि को, जो एक व्यक्ति पर पड़ती है, अनेक व्यक्तियों पर फैला देता है।

बीमा का स्वभाव

एक विद्वान् ने बीमा के उपयोगिता की इस प्रकार व्याख्या की है :

सम्पत्ति और व्यक्ति, दोनों को ही कुछ सकटों का भय लगा रहता है और विद्वान् मनुष्य अपने या अपने ऊपर निर्भर रहने वालों के लिये आमदनी के बने रहने के उद्देश्य से उस आमदनी का एक भाग उन व्यक्तियों को प्रसन्नता से दे देते हैं जो इन सकटों के भय को अपने ऊपर ले लेने को तैयार हो जाते हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि स्वभाव में बीमा सट्टे की भाँति है, किन्तु बीमा को जुये का स्वरूप ग्रहण करने से रोकने के लिये विधान ने यह नियम बना दिया है कि ऐसे प्रसविदे वे ही व्यक्ति कर सकते हैं जिन्हें बीमे के विषय में

आर्थिक हित हो। अतः कोई व्यक्ति किसी प्रकार की सम्पत्ति अथवा किसी दूसरे व्यक्ति के जीवन का बीमा तभी करा सकता है जब कि उस सम्पत्ति के विनाश अथवा उस व्यक्ति की मृत्यु से उसे आर्थिक हानि हो। जिस व्यक्ति के हित के लिये बीमा कराया जाता है वह हानि का सङ्कट बीमा कर्त्ता पर रख देता है और बीमा पत्र इस सङ्कट को जो कोरे सट्टे के समान है निश्चितता (Certainty) में परिवर्तित कर देता है.. बीमा-पत्र का यह काम होता है कि वह विभिन्न श्रेणियों के सङ्कटों को विस्तृत क्षेत्र पर फैला दे, प्रत्येक श्रेणी में इतनी अधिक वस्तुओं की छोटी छोटी रकमों का बीमा करे कि उनके क्षतिपूर्ति का बीमाओं से वही अनुपात पड़े जो कि समस्त क्षति का कुल सङ्कटों से मालूम किया गया अनुपात है। फिर वह प्रीमियम की एक ऐसी दर बीमा पात्र से लेता है कि जो दावे की रकम (Claims) और प्रबन्ध का व्यय अदा करने के लिये काफी हो। ऐसी प्रणाली में सट्टे का अंश लगभग लुप्त हो जाता है और अदा करने के लिये निश्चित साधन प्राप्त हो जाते हैं।*

Assurance और Insurance

अँग्रेजी में बीमा के लिये Assurance और Insurance इन दो शब्दों का प्रयोग होता है। बहुधा ये पर्यायवाची शब्दों, अर्थात् समान अर्थ वाले शब्दों, की भांति प्रयोग में लाये जाते हैं। किन्तु कुछ विद्वानों ने इन शब्दों में भेद माना है।

कुछ लेखकों का मत है कि Assurance शब्द का प्रयोग हमें उन बीमा के प्रसंविदों के सम्बन्ध में करना चाहिये जिनमें कि बीमा की रकम ऐसी घटना के घटित होने पर देय हो, जिसका होना निश्चित हो, और Insurance शब्द का प्रयोग बीमा के उन प्रसंविदों के सम्बन्ध में करना चाहिये जिनमें कि बीमा की रकम ऐसी घटना के घटित होने पर देय हो जो हो भी सकती है और नहीं भी हो सकती या जो अज्ञात हो हो। जीवन बीमा की रकम मृत्यु होने

*Clemson, *Methods and Machinery of Business*, pp 173 174

पर देय होती है, जिसका होना निश्चय है, इसलिये जीवन बीमा के सम्बन्ध में Assurance शब्द का प्रयोग करना चाहिये। अग्नि-बीमा और सामुद्रिक-बीमा में माल के अग्नि या सामुद्रिक सकटो से नष्ट हो जाने या उसकी हानि हो जाने पर ही बीमे की रकम देय होती है, यदि विनाश या हानि न हो तो, बीमे की रकम की अदायगी का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता। अत: इसमें जिस घटना के घटित होने पर बीमे की रकम देय होती है, वह हो भी सकती है और नहीं भी हो सकती; इसलिये बीमा के इन प्रसंविदों के सम्बन्ध में हमें Insurance शब्द का प्रयोग करना चाहिये।

कुछ अन्य लेखकों का मत है कि बीमा पात्र अपने जीवन या सम्पत्ति को insure कराता है, और बीमा कम्पनी उसे इस बात की assurance देती है कि बताई हुई घटना के घटित होने पर और विनाश या हानि होने पर उसके घाटे की पूर्ति कर दी जायगी।

किन्तु यह भेद सर्वदा माने नहीं जाते; और न इस प्रकार बाल की खाल निकालने से कोई उद्देश्य ही पूरा होता है। अत: इन दोनों शब्दों को पर्याय वाची ही मानना चाहिये।

§ २. बीमा के प्रकार

बीमा के अगणित रूप होते हैं। जीवन, अग्नि एवं सामुद्रिक बीमे इसके मुख्य रूप हैं। किन्तु हाल में ही अन्य प्रकार के बीमों का भी उदय हुआ है, और अब हम प्राय: प्रत्येक सकट से रक्षा करने के लिये बीमा खरीद सकते हैं। कुछ बीमा कम्पनियाँ तो निश्चित आयु में स्त्रियों के सौन्दर्य का भी बीमा करती हैं: निश्चित आयु में यदि सौन्दर्य बिगड़ जाय तो निश्चित रकम अदा कर देती हैं। सार: हर प्रकार के बीमे की असाधारण उन्नति, आधुनिक काल की सब से महत्वपूर्ण प्रवृत्ति है। जीवन, अग्नि और सामुद्रिक बीमे की तो हाल में उन्नति हुई है, साथ में अन्य प्रकार के अनेक बीमे भी बहुत लोकप्रिय हो चुके हैं और हो रहे हैं।

जीवन बीमा

बीमे की सब ,से महत्वपूर्ण किस्म जीवन बीमा है। एक व्यक्ति अपने जीवन का या ऐसे व्यक्ति के जीवन का जिसमें उसका आर्थिक हित है बीमा करा सकता है; जिससे कि मृत्यु होने पर अथवा बीमा पात्र की निश्चित आयु हो जाने पर (जैसा भी प्रसंविदा हो) बीमा कम्पनी बीमे की रकम अदा कर देती है। किसी भी परिवार के जीविका कमाने वाले की मृत्यु से परिवार को बड़े सकट का सामना करना पडता है। मृतक कदाचित् अपनी विधवा एव बच्चों को नितात दरिद्रता में छोड जाय, और यदि उसके माता पिता तथा अन्य सम्बन्धी उसी के आसरे रहते हों, तो उनको भी आर्थिक यातना भोगनी पड़ेगी। किन्तु यदि उसके जीवन का बीमा कराया जा चुका हो, तो उसके स्त्री, बच्चों एव उसके आसरे पर रहने वाले सम्बधियों को उसकी मृत्यु पर एक निश्चित रकम दे दी जाती है जो उनको आर्थिक कठिनाई से बचाती है। भारत मे सयुक्त परिवार की प्रणाली इस दृष्टि से बहुत अच्छी है क्योंकि किसी सदस्य की मृत्यु हो जाने पर उसका स्त्री और बच्चों का पालन पोषण होता रहता है। किन्तु सयुक्त परिवार की प्रणाली का अब ह्रास हो रहा है और बीमा उसका स्थान ग्रहण कर रहा है।

अग्नि-बीमा

अग्नि बीमा, बीमा की दूसरी महत्वपूर्ण किस्म है। किसी कारखाने या दुकान या घर का स्वामी थोडी सी प्रीमियम देकर अग्नि-बीमा पत्र खरीद सकता है, और यदि उसकी सम्पत्ति पूर्णतया अथवा अशतया जल जावे तो बीमा कम्पनी उसकी क्षति पूर्ति कर देगी। थोड़ी सी प्रीमियम देकर ही उसे बहुत सरक्षण मिल जाता है। हम समझते तो यह हैं कि आग बहुत कम लगती है और उससे नुकसान कम होता है; किन्तु यदि हम विभिन्न देशों में आग द्वारा होने वाले नुकसान के आँकड़े देखें तो हमें पता चलेगा कि ऐसे नुकसान की मात्रा कितनी भीषण होती है।

सामुद्रिक बीमा

बीमा की तीसरी मुख्य किस्म सामुद्रिक बीमा है। समुद्र में चलने वाले

जहाजों को बहुत से संकटों का सामना करना पड़ता है। जहाज कभी-कभी एक दूसरे से टकरा जाते हैं; उन्हें चोर या देश के शत्रु पकड़ सकते हैं; वे चट्टान से टकरा कर चूर-चूर हो सकते हैं। ऐसी दशा में जहाज• तथा उस पर लदे हुए माल दोनों की हानि होगी और उनके स्वामियों को आर्थिक नुकसान उठाना पड़ेगा। यदि ऐसे सकटों से रक्षा करने के लिये बीमा की संरक्षण की प्रणाली न होती, तो अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को बहुत धक्का लगता। सामुद्रिक बीमा का सबसे पहले जन्म हुआ, उसके पश्चात् जीवन और अग्नि बीमा का।

दुर्घटना का बीमा (Accident Insurance)

बीमा की इन तीन किस्मों के अतिरिक्त कुछ और किस्में भी प्रचलित हो चुकी हैं जिनको सामूहिक रूप से दुर्घटना बीमा कहते हैं। बेकारी बीमा (Unemployment Insurance), जिसके अन्तर्गत बेकारी के समय में बीमा कम्पनी एक निश्चित आय अदा करती रहती है, इसी समूह के अन्दर आती है। श्याम के एक नरेश ने राजत्याग के पूर्व कई बेकारी बीमा करा लिये थे, जिनके अनुसार राज-त्याग के पश्चात् उन्हें। ४०,००० डालर प्रत वर्ष की आय मिलने लगी। इसी के अन्तर्गत मजदूर-क्षतिपूर्ति-बीमा (Workmen's Compensation Insurance) भी आता है। यदि कोई मजदूर काम करते समय घायल हो जाय, तो कारखानेवाले को उसकी क्षति-पूर्ति करनी पड़ती है; अतः कारखाने के मालिक बहुधा इस सकट से रक्षा प्राप्त करने के लिये बीमा करा लेते हैं। मोटर बीमा, फसल बीमा, ऋण डूबने का बीमा, ओले का बीमा, लाभ बीमा, रोग बीमा आदि भी इसी श्रेणी में आते हैं। इनका उद्देश्य इनके नाम से ही स्पष्ट है।

§ ३. बीमा संगठन के प्रकार

बीमा के संगठन कई प्रकार के होते हैं। जिनका वर्णन नीचे किया जाता है।

१. बीमा कम्पनी

बीमा व्यवसाय करने के लिये संयुक्त पूँजी वाली कम्पनियाँ बहुत खुल

गई हैं। ऐसी कम्पनी के शेयर-होल्डर उसकी समस्त पूँजी जुटाते हैं; इसका प्रबन्ध एक डाइरेक्टरों का बोर्ड करता है; और इसके लाभ शेयर-होल्डर में बटते हैं। बीमा-पत्र धारकों (Policyholders) की श्रेणी शेयर-होल्डरों की श्रेणी से पूर्णतया भिन्न होती है : वे तो केवल कम्पनी के ग्राहक होते हैं जो किन्हीं खास शर्तों पर बीमा खरीदते हैं। व्यापार में जो लाभ या हानि होती है, वह शेयर होल्डरों को दी जाती है।

कम्पनियों में स्पर्धा अब इतनी तीक्ष्ण हो गई है कि अब कम्पनी के प्रबन्ध मे बीमा-पत्र धारकों को भी एक भाग दिया जाने लगा है, वस्तुत: लाभ का अधिकाश भाग उन्हीं को दे दिया जाता है। साधारणतया लाभ का ६० प्रतिशत पत्र-धारकों में बाँट दिया जाता है और शेष १० प्रतिशत ही शेयर-होल्डरों को मिलता है। ऐसी कम्पनियाँ आजकल बहुत लोक-प्रिय हो रही हैं।

२. सहयोगी समितियाँ (Mutual Associations)

कभी-कभी थोड़े से व्यक्ति मिल कर स्वय अपने जीवन का बीमा कराने के लिये एक बीमा समित स्थापित कर लेते हैं। ऐसी समित को **सहयोगी समिति** कहते हैं।

सहयोगी समित का प्रत्येक सदस्य बीमा करने वाला और कराने वाला दोनों ही होता है। अतः यह स्पष्ट है कि ऐसी समिति का पूरा प्रबंध पत्र धारक स्वय ही करते हैं और व्यवसाय से जो भी लाभ होता है वह उन्हीं को दिया जाता है। इस प्रकार के बीमा सगठन से दो लाभ हैं। पहला तो यह कि बीमा-धारकों का समिति में सीधा हित होने के कारण प्रबन्ध की कार्यक्षमता ऊँची श्रेणी की रहती है। दूसरा यह कि समस्त लाभ पत्र धारकों को मिलने के फलस्वरूप बीमा की असली लागत भी कम पड़ती है।

३. लायड समितियाँ (Lloyd's Associations)

लायड समितियाँ व्यक्तिगत बीमा कर्ताओं की समितियाँ होती हैं, जिन्हे आश्वासक या 'अडरराइटर्स' (Underwriters) कहते हैं। लायड समिति की विशेषता यह है कि इसके अंतर्गत जो भी बीमा पत्र होता है उसकी रकम के कई टुकड़े हो जाते हैं और प्रत्येक टुकड़े का एक अलग बीमा-कर्ता उत्तरदायित्व

ले लेना है। उदाहरण के लिये, यदि कोई एक १०,०००) का सामुद्रिक बीमा पत्र ले, तो हो सकता है कि दस आश्वासक एक एक हजार रुपये का उत्तर दायित्व स्वीकार कर लें। यदि माल का पूर्ण विनाश होजाय, तोप्रत्येक आश्वासक एक एक हजार रुपया देगा। समिति के नियम और उपनियम बहुत कठिन होते हैं और सदस्यों को उनका सावधानी से पालन करना पड़ता है। समिति इस बात की भी सावधानी रखती है कि सदस्य ऐसे ही व्यक्ति बनाये जायें जिनकी ईमानदारी और आर्थिक अवस्था में किसी प्रकार का सन्देह न हो। प्रत्येक सदस्य को समिति में एक बड़ी रकम जमा भी करनी पड़ती है जिससे कि यदि वह कोई दावे की रकम का भुगतान न कर सके, तो समिति उसके जमा रुपये में से दावा सन्तुष्ट कर सके। लायड समितियाँ वैसे तो हर प्रकार का बीमा करती हैं, किन्तु वे सामुद्रिक बीमा के क्षेत्र में विशेषतया विख्यात हैं। इंगलैंड ऐसी समितियों का घर है।

४ स्व-बीमा

कभी-कभी बीमा पत्र किसी कम्पनी से लेने के स्थान पर, व्यापारी स्वयं एक निश्चित रकम अलग रखता जाता है जिससे कि किसी विशेष संकट से हानि होने पर वह इस कोष में से क्षति पूर्ति कर ले। उदाहरण के लिये, यदि किसी जहाजी कम्पनी के पास दस जहाज हों, तो वह एक निश्चित रकम प्रत्येक वर्ष निकाल कर एक कोष में रख सकता है जिससे कि जहाजों को हानि पहुँचने पर या उनका विनाश होने पर इसी कोष में से क्षतिपूर्ति कर ली जाय। स्व बीमा बड़े बड़े व्यापारिक भवन ही करते हैं जिनकी सम्पत्ति इतनी अधिक होती है कि उन्हें अन्य कम्पनियों से बीमा खरीदने की अपेक्षा स्व बीमा सस्ता पड़ता है और प्रति वर्ष होने वाली हानि बहुत कुछ निश्चित सा रहता है।

५ सरकारी बीमा

कुछ देशों में स्वयं सरकार ने कुछ विशेष कार्यों के लिए स्वयं बीमा का व्यवसाय स्थापित कर रक्खा है। ऐसी दशा में सरकार बीमा-कर्ता होती है।

बीमा के इस स्वरूप को सरकारी बीमा (State Insurance) कहते हैं। भारत में डाकखाने में बीमा कराने की स्कीम इसी प्रकार की है। इस स्कीम के अतर्गत सरकारी नौकर सस्ते दर पर बीमा करा सकते हैं। इसकी प्रीमियम की दर व्यापारिक कम्पनियों की प्रीमियम की दर से नीची होती है।

§ ४. बीमा का प्रसंविदा

जब कोई व्यक्ति किसी बीमा कम्पनी में बीमा कराता है तो इन दोनों में एक प्रसंविदा किया जाता है जिसके अनुसार बीमा पात्र एक निश्चित प्रीमियम अदा करने की प्रतिज्ञा करता है और बीमा-कर्ता कथित घटना के घटित होने पर एक निश्चित रकम अदा करने का उत्तरदायित्व लेता है। ऐसे प्रसविदे का **बीमा का प्रसविदा** (Insurance contract) कहते हैं। यह प्रसविदा बीमा पत्र (Insurance Policy) का रूप लेता है।

बीमे के प्रसविदो की किस्मे

बीमे के प्रसविदों को हम दो भागों में बाँट सकते हैं: **क्षतिपूर्ति के प्रसंविदे** (Contracts of Indemnity) तथा **जीवन प्रसविदे** (Life Contracts)।

(अ) **क्षतिपूर्ति के प्रसविदे**—जीवन बीमों तथा व्यक्तिगत दुर्घटना के बीमों के अतिरिक्त लगभग सभी बीमे क्षतिपूर्ति के प्रसविदे होते हैं। इनमें अग्नि बीमा और सामुद्रिक बीमा सब से अधिक महत्वपूर्ण है। इन्हें क्षतिपूर्ति के प्रसविदे इस कारण कहते हैं कि शर्तों के अनुसार बीमा कर्ता यह प्रतिज्ञा करता है कि यदि कथित सकट से बीमा कराई गई सम्पत्ति को कुछ क्षति हो तो बीमा-कर्ता उसकी पूर्ति करेगा। कथित घटना के घटित होने पर बीमा-कर्ता केवल उतनी ही रकम अदा करता है जो बीमा पात्र के नुकसान के बिल्कुल बराबर है। वह वास्तविक हानि से न तो अधिक होती है और न कम। मान लीजिये रामचंद्र अपने घर का बीमा २०,०००) का करता है उसका घर जल कर राख का ढेर हो जाता है, किन्तु विनाश के समय उसके घर का मूल्य केवल १५,०००) था। ऐसी अवस्था में रामचद्र को केवल १५,०००) ही मिलेंगे, २०,०००) नहीं

क्योंकि उसका वास्तविक नुकसान १५,०००) का ही हुआ है । क्षतिपूर्ति का सिद्धान्त इस विचार पर आधारित है कि बीमे के प्रसविदे को बीमा पात्र की वास्तविक हानि से रक्षा करनी चाहिये और उसे लाभ का साधन नहीं बनाना चाहिये ।

(ब) जीवन-प्रसंविदे—जीवन-बीमा का प्रसविदा क्षतिपूर्ति का प्रसविदा नहीं । इस प्रसविदे में बीमा कर्ता इस बात की प्रतिज्ञा नहीं करता कि मृत्यु होने पर जो वास्तविक क्षति होगी वह उसकी पूर्ति करेगा । मृत्यु से जो हानि होती है उसको न तो नापा ही जा सकता है और न उसको पूरा ही किया जा सकता है । अतः जीवन बीमा कितनी ही बडी रकम का कराया जा सकता है और मृत्यु होने पर वह सारी रकम वसूल की जा सकती है । यदि कोई व्यक्ति अपने जीवन का बीमा दो लाख रुपये का कराये तो उसकी मृत्यु होने पर उसका उत्तराधिकारी इस रकम के लिये दावा कर सकता है । अतः यह स्पष्ट है कि जीवन-बीमे का प्रसविदा क्षतिपूर्ति का प्रसविदा नहीं प्रत्युत यह बीमा-पात्र की मृत्यु पर अथवा उसके किसी कथित आयु के हो जाने पर निश्चित रकम के अदा कर देने की प्रतिज्ञा है ।

बीमा के प्रसविदे के आवश्यक लक्षण

बीमे का प्रसविदा किसी अन्य प्रकार के प्रसविदे की ही भाँति होता है और वह भारतीय प्रसविदा विधान (Indian Contract Act) द्वारा शासित होता है । मान्य (Valid) होने के लिये इसमें निम्नलिखित आवश्यक लक्षण अवश्य होने चाहिये : (१) प्रस्ताव और स्वीकृति, (२) योग्य पक्ष, (३) स्वतन्त्र सहमति, (४) वैधानिक उद्देश्य, आदि । किन्तु इन आवश्यक लक्षणों के अतिरिक्त बीमा के प्रसविदे में दो और लक्षण भी होने चाहिये : बीमायोग्य हित (Insurable Interest) और समस्त मूलरूपी बातों का स्पष्टीकरण (Disclosure of all material facts) । हम इन विशेष लक्षणों का नीचे वर्णन करेंगे ।

बीमायोग्य हित

बीमा का प्रसविदा तभी मान्य होगा जब कि बीमा पात्र का बीमा के विषय (subject matter) में बीमायोग्य हित हो अर्थात् बीमा पात्र का बीमा के विषय के साथ इस प्रकार का आर्थिक सम्बन्ध हो कि उसकी सुरक्षा से उसका लाभ हो तथा उसकी हानि से उसको नुकसान पहुंचे। अत **हम यह परिभाषा दे सकते हैं कि बीमायोग्य हित किसी वस्तु में ऐसे आर्थिक हित के होने को कहते हैं कि उसकी सुरक्षा से आर्थिक लाभ और उसकी हानि से आर्थिक हानि हो**। यदि बीमा पात्र का बीमा के विषय में बीमा योग्य हित नहीं है तो ऐसे प्रसविदे का वैधानिक दृष्टि से कुछ भी मूल्य नहीं है। बीमायोग्य हित से हीन बीमे का प्रसविदा एक जुये के समझौते के समान है और वह कानून में विवर्जित (Void) है। उदाहरण के लिये, यदि आत्माराम वशीधर को, एक कुत्ते के बाईं ओर मुड़ जाने पर १०,०००) देने की प्रतिज्ञा करे, तो यह कोरा जुआ हुआ और वह विवर्जित है। इसे हम बीमे का प्रसविदा नहीं कह सकते क्योंकि कुत्ते की क्रिया में वशीधर का कोई बीमायोग्य हित नहीं—यदि कुत्ता दाहिना ओर मुड़ जाता है तो इससे वशीधर को कुछ लाभ नहीं होगा और न उसके बाईं ओर मुड़ने से उसे कुछ आर्थिक हानि ही होगी।

यद्यपि बीमायोग्य हित का अस्तित्व बीमे के प्रसविदे के मान्य होने के लिये नितान्त आवश्यक है, तो भी केवल बीमायोग्य हित के होने से ही और बिना किसी प्रसविदे के किसी व्यक्ति को किसी तीसरे पक्ष पर क्षतिपूर्ति का दावा करने का अधिकार प्राप्त नहीं हो जाता। यदि आप की पुस्तक आग में जल कर राख हो जाय तो यह नहीं हो सकता कि आप किसी भी बीमा कम्पनी के दफ्तर में जाकर उससे अपनी पुस्तक का मूल्य मांगने के अधिकारी हो जाँय, क्योंकि आप में और बीमा कम्पनी में क्षतिपूर्ति का कोई प्रसविदा ही नहीं हुआ। इसी प्रकार यदि आप किसी दूकानदार से १०००) का मालखरीद कर उसी की दूकान पर रक्खा रहने दें और दूकान में आग लग जाने से वह

माल जल कर राख हो जाय, तो आप उस माल का मूल्य दूकानदार से माँगने के अधिकारी नहीं क्योंकि आप के और उसके बीच में अग्नि बीमा का कोई प्रसविदा नहीं हुआ।

जीवन-बीमा में बीमायोग्य हित प्रसविदा होते समय उपस्थित होना चाहिये। बीमा-पत्र खरीदते समय प्रस्तावक को यह दिखाना पड़ेगा कि जो जीवन-बीमा का विषय है उसमें उसका बीमायोग्य हित है। सामुद्रिक बीमे में बीमायोग्य हित उस समय होना चाहिये जब कि कोई हानि अथवा विनाश हो जाय। यदि माल सामुद्रिक यात्रा में नष्ट हो जाय तो बीमा-पात्र को यह प्रमाण देने पर ही कि माल के नष्ट होने के समय उनमें उसका बीमायोग्य हित था, बीमा कम्पनी क्षतिपूर्ति करेगी। अग्नि-बीमा, के सम्बन्ध में वैधानिक नियम बहुत कड़े हैं क्योंकि अग्नि-बीमा में बीमायोग्य हित का बीमा-पत्र लेते समय तथा क्षति होने के समय—दोनों ही समय—उपस्थित रहना आवश्यक है। अग्नि-बीमा का प्रसंविदा बीमा करने वाले और बीमा कराने वाले के बीच में एक व्यक्तिगत प्रसविदा माना गया है, अतः बीमा पात्र को क्षतिपूर्ति का दावा सफल बनाने के लिये यह आवश्यक है कि वह बीमा कर्ता को इस बात से सतुष्ट कर दे कि बीमा के विषय में (अर्थात् बीमा पात्र का) बीमा-पत्र लेते समय तथा क्षति होने के समय, दोनों ही समय उसका बीमायोग्य हित था।

मूलरूपी बातों का स्पष्टीकरण

बीमा के प्रसविदे का दूसरा विशेष लक्षण यह है कि बीमा करने वाला और कराने वाला दोनों ही समस्त मूलरूपी बातों को स्पष्ट कर दें। इसलिए बीमे के प्रसविदे को सच्चे विश्वास का प्रसविदा (Contaact *uberrimae fidei* या Contract of absolute good faith) कहते हैं। मूल रूपी बात (material facts) वे होती हैं जो दूसरे पक्ष के निर्णय को प्रभावित कर सकती हैं। अविश्वास या किसी मूलरूपी बात के छिपाने से बीमा-पत्र विवर्जित (void) हो जाता है। साधारण प्रसंविदे में भी यह आवश्यक है कि उसमें किसी बात का मिथ्या प्रतिनिधित्व (mis-representation) न हो, मिथ्या-प्रतिनिधित्व होने पर दूसरे पक्ष के विकल्प पर प्रसविदा विवर्जनीय

(voidable) हो जाता है। किन्तु बीमा के प्रसंविदे में मिथ्या प्रतिनिधित्व तो होना ही नहीं चाहिए; इसके अतिरिक्त किसी भी पक्ष को कोई भी जानी हुई मूलरूपी बात नहीं छिपानी चाहिए। अन्यथा प्रसंविदा विवर्जित (void) हो जायगा।

लार्ड मेन्सफील्ड (Lord Mansfield) ने एक निर्णय में कहा था कि सम्पूर्ण विश्वास प्रत्येक पक्ष पर यह प्रतिरोध लगा देता है कि वह प्राइवेट तरीके से जानी हुई बात को छिपाकर तथा दूसरे पक्ष की अज्ञानता के कारण और उसके विपरीत विश्वास के कारण उससे प्रसंविदा कर न ले। अब यह पूर्णतया स्थापित हो चुका है कि यदि मिथ्या-प्रतिनिधित्व हो अथवा कोई मूलरूपी बात छिपाई गई हो, चाहे वह जान बूझकर किया गया हो या आकस्मिक हो, तो बीमा-पत्र विवर्जित हो जाता है।

बीमा-पत्र को बीमा के विषय के साथ पूरी जानकारी होती है; अतः पूर्ण स्पष्टीकरण का उत्तरदायित्व मुख्यतया उसी के ऊपर आता है। किन्तु यह उत्तरदायित्व बीमा कर्ता का भी है। उदाहरण के लिए, मान लीजिये किसी व्यापारी को अपने जहाज की स्थिति का ज्ञान नहीं और इसलिए वह उस जहाज का बीमा कम्पनी के साथ करा लेता है जिसे मालूम है कि जहाज उद्दिष्ट स्थान को ठीक-ठीक पहुँच चुका है। यदि बीमा कम्पनी जहाज का बीमा कर दे और इस मूलरूपी बात को न बताये, तो बीमा-पत्र विवर्जित हो जायगा और बीमा-कम्पनी को प्रीमियम वापस करनी पड़ेगी।

§ ५. स्थान-ग्रहण का सिद्धांत (Subrogation), दोहरा बीमा (Double Insurance), और पुनर्बीमा (Re-Insurance)

बीमा के कुछ विधान तथा व्यवहार-सम्बन्धी ऐसी महत्वपूर्ण बातें हैं जिन पर यहाँ प्रकाश डालना आवश्यक है।

स्थान ग्रहण का सिद्धान्त

(१) स्थान ग्रहण का सिद्धान्त (Doctrine of Subrogation) केवल क्षतिपूर्ति के प्रसंविदे, अर्थात् अग्नि और सामुद्रिक बीमों, पर ही लागू होता है, जीवन बीमा पर नहीं। इसके अनुसार बीमा कर्ता जब बीमा पात्र की समस्त अथवा आंशिक क्षति की पूर्ति कर देता है, तब यह बीमा-पात्र का स्थान ग्रहण कर लेता है, और यदि बीमा पात्र को बीमा के विषय के सम्बध में किसी तीसरे पक्ष पर कुछ अधिकार हों, तो वे सब अधिकार बीमा कर्ता के हो जाते हैं। यदि बीमा पात्र किसी तीसरी पार्टी से किसी रकम का लेनदार हो, तो बीमा कम्पनी को यह पद मिल जाता है, और वह बीमा पात्र के नाम में ऐसी तीसरी पार्टी पर दावा कर सकती है। इस सम्बध में दो बातोंपर विशेष ध्यान देना चाहिये: (१) बीमा-कर्ता को बीमा-पात्र के समस्त अधिकार तभी प्राप्त होते हैं जब कि वह बीमा-पात्र को क्षतिपूर्ति कर चुका हो, अर्थात् उसके दावे का भुगतान कर चुका हो। (२) बीमा-कर्ता केवल उन्हीं अधिकारों को प्राप्त करता है जो बीमा पात्र के सम्बध में किसी तीसरे पार्टी के ऊपर स्वय प्राप्त थे, और उसे बीमा पात्र के नाम में दावा करना भी आवश्यक है। हम नीचे इस सिद्धान्त के कुछ उदाहरण देते हैं :—

(१) मान लीजिये कि अजन्ता बीमा कम्पनी न्यू जनरल स्टोर्स की बिल्डिंग का बीमा १०,०००) में करती है। परन्तु एक व्यक्ति मकबूल हुसेन द्वारा आग लग जाने के कारण बिल्डिंग नष्ट हो जाती है। इस दशा में न्यू जनरल स्टोर्स को अजन्ता बीमा कम्पनी से १०,०००) क्षतिपूर्ति के रूप मे मिलेंगे, और अजन्ता बीमा कम्पनी को न्यू जनरल स्टोर्स के मकबूल हुसेन के विरुद्ध समस्त अधिकार प्राप्त हो जायेंगे।

(२) मान लीजिये सिंधिया जहाजी कम्पनी के **जलतरंग** नामक जहाज का भारतीय बीमा कम्पनी ने एक लाख रुपये की रकमका बीमा किया। जलतरंग जहाज को शत्रु पकड़ लेते हैं, और सिंधिया जहाजी कम्पनी भारतीय बीमा कम्पनी से एक लाख रुपया वसूल कर लेती है। यदि जहाज शत्रुओं से वापस मिल जाय, तो वह भारतीय बीमा कम्पनी की सम्पत्ति हो जायगा।

दोहरा बीमा (Double Insurance)

जैसा कि नाम से ही विदित हुआ है, किसी वस्तु पर एक से अधिक बीमा खरीदने को ही दोहरा बीमा कहते हैं। जीवन-बीमा का जहाँ तक सम्बन्ध है, कोई भी व्यक्ति अपने जीवन पर जितने भी बीमे चाहे करा सकता है और सब बीमा पत्रों का रुपया उचित समय पर मिल जावेगा। किन्तु क्षतिपूर्ति के प्रसविदे, अर्थात् अग्नि और सामुद्रिक बीमों में, ऐसा नहीं होता क्योंकि उनके अन्तर्गत बीमा-पात्र अपनी वास्तविक क्षति से अधिक रुपया वसूल नहीं कर सकता। यदि उसी वस्तु पर एक से अधिक बीमा-पत्र खरीदा गया हो और उनकी रकमों का योग माल के वास्तविक मूल्य के बराबर हो, तो माल की पूर्ण क्षति होने पर उन सब का पूरा पूरा रुपया अदा कर दिया जायगा। किन्तु यदि इन बीमा पत्रों की रकमों का योग माल के वास्तविक मूल्य से अधिक हुआ, तो बीमा-पात्र वास्तविक क्षति से अधिक कुछ भी वसूल नहीं कर सकता। वह बीमा पत्रों के अन्तर्गत जिस क्रम में चाहे दावे कर सकता है और जितनी भी रकम का चाहे उतनी का दावा करने का भी उसे अधिकार है, किन्तु वह जितना भी रुपया वसूल करे उसका योग वास्तविक क्षति से अधिक नहीं होना चाहिये। जहाँ तक बीमा कर्ताओं का आपसी सम्बन्ध है, वे क्षति को आनुपातिक भागों में बाँट लेंगे, और यदि किसी बीमा-पात्र ने अपने आनुपातिक भाग से अधिक रुपया अदा कर दिया है, तो वह अतिरिक्त रकम उन बीमा-कर्ताओं से लेने का अधिकारी है जिन्होंने अनुपात से कम रुपया दिया है। मान लीजिए रामलाल ने अपने मकान का बीमा ५०००) के लिए 'क' से, ४०००) रुपये के लिए 'ख' से, और ६०००) के लिये 'ग' से कराया हो, तो इन तीनों की कुल रकम १५,०००) हुई। यदि मकान का मूल्य १००००) हो और मकान पूर्णतया नष्ट हो जाय, तो रामलाल १०,०००) वसूल कर सकता है और वह जिस क्रम में चाहे उसे वसूल करे। उदाहरण के लिये वह 'ख' से ४०००) वसूल कर ले और 'ग' से ६०००) और 'क' से कुछ न ले। किन्तु 'क' 'ख' और 'ग' १०,०००) की क्षति अनुपातिक भागों में, अर्थात् क्रमशः $\frac{५००००}{१५०००}$, $\frac{४००००}{१५०००}$ और $\frac{६००००}{१५०००}$ के हिसाब से, बाँट लेंगे।

'क' अपना हिस्सा 'ख' और 'ग' को इस प्रकार देगा कि इन दोनों का भुगतान उनके अनुपात के अनुसार ही हो।

पुनर्बीमा (Re-insurance)

दोहरे बीमे और पुनर्बीमे का अन्तर्भेद जानना बहुत आवश्यक है। जब कोई बीमा कम्पनी अपनी सामर्थ्य से अधिक रकम का बीमा बेच देती है, तो वह कुल रकम या संकट (risk) के एक भाग का किसी दूसरी कम्पनी से बीमा करा लेती है। इसी को पुनर्बीमा कहते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि किसी बीमा किये हुये संकट का किसी दूसरी कम्पनी से पूर्णतया अथवा अंशतया बीमा कराना ही पुनर्बीमा कहलाता है। पुनर्बीमे पर वे सब शर्तें लागू होती हैं जो मौलिक बीमे के प्रसंविदे में थीं। पुनर्बीमे का प्रसंविदा दो बीमा कम्पनियों के बीच में होता है और उसस बीमा-पात्र का कोई प्रयोजन नहीं। यदि बीमा-पत्र के अन्तर्गत कोई दावा उठे, तो बीमा-कर्ता उस कम्पनी पर दावा करेगा जिसने उसका बीमा किया था, पुनर्बीमा वाली कम्पनी के ऊपर नहीं। वैसे तो पुनर्बीमा बीमा के प्रत्येक क्षेत्र में लोकप्रिय है, किन्तु अग्नि-बीमा में उसका चलन बहुत प्रमुख है। वास्तव में, कुछ अग्नि-बीमा की कम्पनियाँ केवल पुनर्बीमा ही करती हैं।

§ ६. बीमा के लाभ

बीमा के लाभों का संसार भर में अच्छी तरह जाना जा चुका है और स्वर्गीय सम्राट जार्ज पंचम ने इसे "एक महान् और प्रगतिशील उद्योग" कहा था। हम नीचे थोड़े से लाभों को संक्षेप में बताते हैं।

१. जीवन बीमा मितव्ययिता की आदत डालने के लिए, रुपया बचाने के लिए और फिजूलखर्ची रोकने के लिए एक अमोघ साधन है। जब बीमा कराने वाला यह समझता है कि प्रीमियम अदा न करने पर बीमा-पत्र डूब जायगा, तब वह अपना बेकार खर्च काट कर कुछ रुपया अवश्य बचाता है।

२. जीवन-बीमा वृद्धावस्था के लिए, जब कि मनुष्य के कमाने की शक्ति घट जाती है, बहुत अच्छा साधन है। वृद्धावस्था के आरम्भ होने के समय

परिपक्व (mature) होने वाला बीमा-पत्र इतना रुपया दे देता है कि जिससे वृद्धावस्था में आराम से काम चल सकता है।

३. जीवन बीमा में सकट से रक्षा (Protection) तथा विनियोग (investment) के तत्वों का सर्वश्रेष्ठ समन्वय होता है। प्रीमियम अदा कर देने पर बीमा-पात्र को दो लाभों का अधिकार हो जाता है. (१) उसकी मृत्यु से रक्षा होती है, अर्थात् उसकी मृत्यु हो जाने पर उसके उत्तराधिकारी को एक निश्चित रकम मिल जाती है। यह जीवन बीमा का रक्षा तत्व हुआ। (२) उसकी अदा की हुई प्रीमियम का विनियोग कर दिया जाता है और वह चक्रवृद्धि (compound) ब्याज के आधार पर बढ़ती रहती है। यह बीमा का विनियोग तत्व हुआ। जीवन बीमा साधारण विनियोग से इसी दिशा में श्रेष्ठ है कि इसमें विनियोग के साथ साथ रक्षा-तत्व का भी समन्वय होता है। साथ में ही साधारण सिक्योरिटी की भाँति बीमे का मूल्य घटता बढ़ता नहीं।

४. बीमा के समस्त स्वरूपों का यह बड़ा लाभ है कि रक्षा तथा कुशलता की भावना उत्पन्न करते हैं। जीवन के प्राय प्रत्येक क्षेत्र में बड़े और अनिश्चित नुकसान होने की आशंका होती है। बीमा कम्पनी इसे थोड़े और निश्चित नुकसान में परिणत कर देती है। उदाहरण के लिए आप को यह भय होता है कि यदि आप का घर जल कर राख हो जाय, तो आप को भारी आर्थिक क्षति होगी। किन्तु यदि आप थोड़ी सी प्रीमियम अदा करें, तो बीमा कम्पनी आप को इस चिन्ता से मुक्त कर देगी। इस प्रकार की रक्षा और निश्चितता बीमा-पात्र को बहुत सन्तोष और शान्ति प्रदान करती है। यह विशेषतया व्यापारियों को बहुत लाभप्रद है क्योंकि यदि उनके मस्तिष्क में शांति हो तो उनकी कार्यक्षमता बढ़ जाती है। यदि उनका कारखाना और दूकानें अग्नि-बीमा द्वारा सुरक्षित हों, यदि उसके जहाज और उन पर लदा हुआ माल सामुद्रिक सकटों के भय से मुक्त हो और ऋण डूब जाने की जोखिम से उपयुक्त बीमा पत्र द्वारा वह सुरक्षित हो, तो उसके चित्त को बहुत शांति मिलेगी और उसकी कार्यक्षमता का बढ़ जाना स्वाभाविक है।

५. जीवन-बीमा-पत्र से मनुष्य की साख (credit) बढ़ जाती है। यदि माल और सम्पत्ति का अग्नि और सामुद्रिक बीमा करा लिया गया हो, तो उनके आधार पर ऋण आसानी से मिल सकता है। जीवन-बीमा पत्र अत्यन्त उत्तम पार्श्विक प्रतिभूति (Collateral Security) या सहायक जमानत होती है। बीमा पत्र के समर्पण मूल्य (Surrender Value) के बराबर बीमा कम्पनी से ही या किसी बैंक से कम ब्याज पर रुपया उधार लिया जा सकता है। व्यापारी के लिये, जिसे बहुधा ऋण लेने की आवश्यकता पड़ती है, यह बहुत महत्वपूर्ण सुविधा है।

६. सामाजिक बीमा की योजनाएँ—जैसे रोग, वृद्धावस्था, बेकारी तथा दुर्घटना आदि का बीमा—मनुष्यों की निर्धनता एवं यातनाओं से रक्षा करता है। बीमा के अभाव में इन सकटों के शिकार भिखारी के समान हो जाते हैं और वे समाज के लिए भार बन जाते हैं क्योंकि समाज को उन्हें व्यक्तिगत दान अथवा सरकारी सहायता द्वारा पालना पड़ता है। किन्तु बीमा ऐसे बुरे दिनों में बराबर आमदनी मिलती रहने का आयोजन करता है और ऐसे अभागे व्यक्तियों और समाज का महान् हित करता है।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इंटर कामर्स

१. विदेशों से आर्डर प्राप्त करने के लिए कौन-कौन से साधनों का प्रयोग किया जाता है? पूर्णतः अपने विचार प्रकट कीजिये। (उ० प्र०, १९५४)

२. "बीमे का प्रसंविदा क्षतिपूर्ति तथा सद्विश्वास का प्रसंविदा है।" इस कथन का अर्थ समझाइये। यह कथन जीवन-बीमा पर कहाँ तक लागू होता है? (उत्तर प्रदेश, १९५२)

३ किसी व्यापारी को बीमा से जो लाभ होता है, उसकी विवेचना कीजिये। (यू० पी०, १९५०)

४. निम्नलिखित का अर्थ बताइये :

(अ) बीमायोग्य हित; (आ) बीमे का क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा होना; (इ) समर्पण मूल्य। (यू० पी०, १९४७)

५. "बीमा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा होता है।" क्या यह कथन सब प्रकार के बीमों पर घटता है ? (यू० पी०, १९४७)

६. जीवन-बीमा के प्रसंविदे तथा अग्नि-बीमा के प्रसंविदे का अन्तर्भेद बताइये। (यू० पी०, १९४६,१९४५)

७. अग्नि और सामुद्रिक बीमे पर लागू होने वाला बीमा-योग्य हित क्या होता है ? क्या यह आवश्यक है कि बीमा-पत्र के निर्गम के समय तथा क्षति के समय बीमा योग्य हित उपस्थित हो ? (यू० पी०, १९४५)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

८. दोहरा बीमा तथा पुनर्बीमा का अर्थ समझाइये। (राजपूताना, १९४९)

९. बीमे के प्रसंविदे के आवश्यक अंग क्या होते हैं ? बीमे का प्रसंविदा किसी साधारण प्रसंविदे से किन बातों में भिन्न होता है ? "बीमा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा होता है।" क्या यह सब प्रकार के बीमों के विषय में सत्य है ? (राजपूताना, १९४८)

१०. "बीमे का प्रसंविदा सच्चे विश्वास का प्रसंविदा होता है।" अग्नि-बीमा तथा सामुद्रिक बीमा के सम्बन्ध में इस कथन की सविस्तार व्याख्या कीजिये। (राजपूताना, १९४६)

पटना, इन्टर कामर्स

११. स्थान ग्रहण के सिद्धान्त (Doctrine of Subrogation) से आप क्या समझते हैं ? (पटना, १९५३)

१२. बीमे के प्रसंविदे में बीमा योग्य हित का महत्व बताइये। उत्तर में प्रधानतया अग्नि, सामुद्रिक और जीवन बीमा का हवाला दीजिये। (पटना, १९४९, पूरक)

नागपुर, इन्टर कामर्स

१३. जीवन-बीमे तथा अन्य प्रकार के बीमों में वास्तविक अन्तर क्या है ? बीमा-योग्य हित का अर्थ स्पष्ट कीजिये। बीमा कम्पनियाँ विभिन्न प्रकार के बीमा-पत्र क्यों निर्गमित करती हैं ? (नागपुर, १६४६)

१४. बीमा से क्या लाभ हाते हैं ? बामे की मुख्य किस्में बताइये, और इस बात की भी विवेचना कीजिये कि सामुद्रिक बीमा-पत्र में किन जोखिमों का समावेश होता है ? (नागपुर, १६४५)

बनारस, इन्टर कामर्स

१५. अग्नि-बीमे सामुद्रिक बीमे और जीवन-बीमे में क्या अन्तर होता है ? अग्नि-बीमा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा किस प्रकार होता है ? (बनारस, १६४६)

१६. बीमा का प्रसंविदा साधारण प्रसंविदे से किन बातों में भिन्न होता है ? (बनारस, १६४६ १६४७)

१७. बामे के प्रसंविदे के सम्बन्ध में प्रयुक्त होने वाले निम्नांकित शब्दों का अर्थ बताइये : (अ) स्थान ग्रहण; (आ) विशेष औसत, (इ) बीमा-योग्य हित, (ई) माल फेंकना (jettison), (उ) निर्धारित मूल्य वाला बीमा पत्र, (ऊ) लायड समिति; (ए) बन्दोबस्ती बीमा पत्र, (ऐ) औसत वाक्य । (बनारस, १६४६)

दिल्ली, हायर सेकिण्डरी

१८ बीमायोग्य हित की परिभाषा दीजिए। क्या सब प्रकार के बीमों म इस हित का होना आवश्यक है? यदि हाँ, तो किस समय ? (दिल्ली, हा० सें०, १६५३)

१६. बीमायोग्य हित को परिभाषित कीजिए। क्या बीमायोग्य हित सब प्रकार के बीमों में रहना आवश्यक है ? यदि हाँ, तो किस समय ? (देहली, हायर सेकेन्डरी, १६४७)

२०. Assurance और Insurance का भेद बताइए। जीवन य,

या सामुद्रिक बीमा-पत्र लेने की रीति का सविस्तार वर्णन कीजिए। (देहली, हायर सेकेन्डरी, १९४७)

२१ "बीमा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा होता है।" क्या यह सब प्रकार के बीमों पर लागू होता है? (देहली, हायर सेकेंडरी, १९४८)

सागर, इन्टर कामर्स

२२. "बीमा एक प्रकार का क्षति-पूर्ति प्रसविदा है।" इस कथन को स्पष्ट कीजिये। क्या यह कथन हर प्रकार के बीमे में सत्य है? (सागर, १९५२)

अध्याय ४६

जीवन-बीमा

§ १. प्रारम्भिक

जीवन-बीमा बीमा के समस्त स्वरूपों में सब से अधिक महत्वपूर्ण है। यह ऐसा प्रसंविदा है जिसके अनुसार बीमाकर्ता एक या अनेक प्रीमियमों के एवज में, जिस व्यक्ति के हित में बीमा किया गया हो उस व्यक्ति को, बीमा-पात्र की मृत्यु पर अथवा उसके किसी निश्चित आयु के हो जाने पर, उसे एक निश्चित रकम देने की प्रतिज्ञा करता है। बीमा कम्पनी किसी व्यक्ति के जीवन का बीमा प्रीमियम के एवज में ही करती है; और यह प्रीमियम या तो एक ही बार दे दी जा सकती है या यह कई वार्षिक, छमाही, तिमाही या मासिक किस्तों में अदा की जा सकती है। यह बीमा-पात्र की मृत्यु पर या उसके एक निश्चित आयु के हो जाने पर एक निश्चित रकम अदा करने की प्रतिज्ञा करती है। अतः बीमा पात्र को यह आश्वासन होता है कि उसके निश्चित आयु के हो जाने पर बीमा कम्पनी उसे, या उसकी मृत्यु पर उसके उत्तराधिकारियों को, एक निश्चित रकम अदा कर देगी।

बीमा-पात्र को वृद्धावस्था में तथा उसके आश्रितों को उसकी मृत्यु के उपरान्त आर्थिक रक्षा प्रदान करने के लिये जीवन-बीमा सर्वश्रेष्ठ साधन है। यह बहुधा देखने में आता है कि कुछ व्यक्ति जब तक कमाते रहते हैं, तब तक खूब शान से रहते हैं, यहाँ तक कि वे कुछ भी नहीं बचा पाते। किन्तु जब वे वृद्ध हो जाते हैं और उनकी कमाने की शक्ति घट जाती है, तब उन्हें अपना खर्च चलाना असम्भव हो जाता है। इसी प्रकार यदि किसी परिवार का पालनकर्ता मृत्यु का शिकार हो जाय और वह कुछ भी रुपया न छोड़े, तो उसके परिवार को निर्धनता में रहना पड़ेगा। यदि ऐसा

व्यक्ति जीवन बीमा खरीद लेता है, तो उसे वृद्धावस्था प्राप्त करते समय, या उसकी मृत्यु पर उसके परिवार को, एक निश्चित रकम मिल जाती है जिससे बुरे दिन देखने नहीं पड़ते। यदि कोई व्यक्ति प्रति वर्ष अपनी आय के एक भाग का विनियोग (invest) करता जाय, तो भी हो सकता है कि वह इतने दिन तक न जिये, या वह इतने दिन तक कमाता न रहे, कि वह अपने आश्रितों के लिये पर्याप्त धन अपने जीवन काल में एकत्रित कर ले। अतः ऐसे व्यक्ति को बीमा बहुत सौभाग्य की वस्तु है क्योंकि इसके द्वारा उसे यह आश्वासन हो जाता है कि उसकी असामयिक मृत्यु हो जाने पर उसके आश्रितों को, और उसके दीर्घायु होने पर वृद्धावस्था में स्वयं उसी को, एक निश्चित रकम प्राप्त हो जायगी। यही कारण है कि जीवन बीमा का संसार में सर्वत्र ही बड़ा विकास हुआ है और हो रहा है। हमारे देश में संयुक्त परिवार की प्रणाली वृद्धावस्था में एवं मृत्यु के बाद आश्रितों के पालन पोषण का साधन थी, किन्तु अब यह प्रणाली छिन्न भिन्न हो रही है और बीमा इसका स्थान ग्रहण करता जा रहा है। जीवन बीमे के अन्य लाभ पाठक को जीवन बीमा-पत्रों के स्वरूपों एवं उनके विशेष लाभों के अध्ययन से मालूम हो जायँगे।

रक्षा और विनियोग तत्व

जीवन बीमा का मुख्य लक्षण और लाभ यही है कि उसमें रक्षा एवं विनियोग तत्वों का समन्वय है। बीमा कम्पनी एक निश्चित रकम अदा या तो मृत्यु होने पर करती है अथवा बीमापत्र के एक निश्चित आयु के प्राप्त कर लेने पर। जो प्रीमियम बीमा पात्र अदा करता है, वे चक्रवृद्धि ब्याज की दर से बढ़ती रहती हैं और जब निश्चित आयु प्राप्त हो जाती है, उस समय उनकी रकम बीमे की रकम के बराबर हो जाती है और उस समय यह रकम बीमा पात्र को अदा कर दी जाती है। यह विनियोग का तत्व है। किन्तु यदि बीमा-पात्र की मृत्यु उस आयु के प्राप्त होने के पूर्व ही हो जाय, तब भी बीमा कम्पनी उसके आश्रितों को बीमे की रकम अदा करती है। यह रक्षा का तत्व है। अन्य कोई आर्थिक प्रबन्ध ऐसा नहीं है कि जिसमें रक्षा और विनियोग के तत्वों का इतना सुन्दर समन्वय हो। अग्नि-बीमा को ही ले लीजिये। यदि बीमा-पात्र

का घर जल कर नष्ट हो गया है, तो बीमा कम्पनी बीमा की रकम अदा कर देगी। किन्तु यदि घर में आग न लगे, तो बीमा कम्पनी कुछ भी देनदार नहीं। अतः अग्नि बीमा में केवल रक्षा तत्व ही शामिल है विनियोग तत्व नहीं। इसके विपरीत, बैङ्क में जमा किया जाने वाला रुपया निश्चित ब्याज की दर पर बढ़ता रहेगा और जमा करने वाले को या उसके प्रतिनिधि को किसी भी समय मूलधन तथा ब्याज मिल सकता है। अत. इसमें केवल विनियोग-तत्व ही शामिल है। यह जीवन बीमे की ही विशेषता है कि उसमें रक्षा-तत्व और विनियोग-तत्व दोनों ही होते हैं।

२. जीवन-बीमा कराने की विधि

जीवन बीमा पत्र खरीदने की वास्तविक विधि में निम्नलिखित सोपान होते हैं :

१. प्रस्ताव

जो व्यक्ति बीमा कराना चाहता है उसे सबसे पहले उस बीमा कम्पनी से एक प्रस्ताव पत्र (Proposal Form) प्राप्त कर लेना चाहिये जिससे वह बीमा कराना चाहता है। प्रस्ताव पत्र मुद्रित होता है और किसी भी बीमा कम्पनी के दफ्तर से या किसी बीमा एजेन्ट से मुफ्त मिल सकता है। बीमा पत्र में प्रस्तावक को ऐसी सब बातें लिखनी पड़ती हैं जो जोखम की मात्रा (degree of risk) पर प्रकाश डाल सकें। उदाहरण के लिए प्रस्तावक को उसमें अपनी आयु, पेशा, यदि वह रोगी हो तो रोग का नाम, अपने माता, पिता भाई और बहिनों की आयु, यदि वे जीवित हों तो उनके स्वास्थ्य की दशा और यदि वे मर चुके हो तो उनकी मृत्यु का कारण आदि बातें लिखनी पड़ती हैं। जीवन बीमा का प्रसंविदा पूर्ण विश्वास का प्रसंविदा होता है, और प्रस्ताव-पत्र भरते समय इसका ध्यान रखना चाहिये कि मिथ्या प्रतिनिधित्व (misrepresentation) और अपूर्ण विश्वास जीवन-बीमा के प्रसंविदे के लिये घातक होते हैं। प्रस्तावक को अपने ऐसे दो मित्रों के नाम और पते भी देने पड़ते हैं जो उसके एजेंट के सबन्धी न हों और जिनसे पूछताछ की जा सके।

२ डाक्टरी परीक्षा

जब बीमा कम्पनी को प्रस्ताव पत्र मिलता है, तो वह किसी डाक्टर को प्रस्तावक की डाक्टरी परीक्षा करके उसके स्वास्थ्य पर अपनी सम्मति देने के लिये नियुक्त करती है। डाक्टर प्रस्तावक के हृदय और फेफड़ों की परीक्षा करता है, विशेषतया किसी पारिवारिक रोग के अस्तित्व की जाँच करता है, ऊँचाई, तौल आदि नापता है, शारीरिक दोष अथवा विशेषता नोट करता है, और अपनी पूरी रिपोर्ट कम्पनी को भेज देता है।

३. प्रस्ताव की स्वीकृति

यदि प्रस्तावक द्वारा दी हुई बातें सन्तोषजनक हुई और डाक्टर की रिपोर्ट भी ठीक हुई, तो कम्पनी प्रस्ताव स्वीकार कर लेती है और प्रस्तावक से पहला प्रीमियम माँगती है। पहली प्रीमियम अदा होते ही प्रसंविदा सपूर्ण हो जाता है, और जोखिम आरम्भ हो जाती है। इसके पश्चात् बीमा कम्पनी बीमा पत्र तैयार करती है और बीमा पात्र के पास भेज देती है।

४ आयु का प्रमाण

बीमा कम्पनी बीमा पात्र से उसकी आयु का प्रमाण भी माँगती है। किसी महाविद्यालय या विश्वविद्यालय के प्रमाण पत्र की प्रतिलिपि, म्युनिसिपल रजिस्टर में जन्म की प्रविष्टि की प्रतिलिपि, या जन्म कुण्डली मान्य होती है। यदि बीमा पात्र बीमा पत्र लेते समय अपनी आयु का प्रमाण न दे, तो उसे यह प्रमाण बीमा के परिपक्व (mature) हो जाने पर देना होगा, या उसकी मृत्यु हो जाने पर, उसके आश्रितों को यह प्रमाण उपस्थित करना पड़ेगा। इसमें बहुत सी कठिनाइयाँ होना स्वाभाविक है, अतः आयु का प्रमाण पत्र बीमा खरीदते समय ही अथवा उसके उपरान्त ही देना चाहिए।

प्रीमियम

बीमा-पात्र बीमा पत्र के प्रतिफल में जो रुपया अदा करता है उसे प्रीमियम कहते हैं। बीमा पत्र लेते समय प्रीमियम एक ही मुश्त में अदा की जा सकती है। किन्तु एक मुश्त की रकम बहुत बड़ी होती है, और बीमा पात्र की शीघ्र मृत्यु होने पर उसे घाटा भी रहता है, क्योंकि यदि उसने किश्तों में प्रीमियम दी

होती तो उसे मृत्यु के समय तक कम रुपया बीमा कम्पनी को देना पड़ता है। इस लिए अधिकतर प्रीमियम वार्षिक, छमाही, तिमाही या मासिक किश्तों में ही अदा की जाती है। यदि प्रीमियम किश्तों में दी जाती है तो प्रीमियम देय होने के पूर्व कम्पनी एक स्मारक (reminder) भेजती है, यह वैधानिक दृष्टि से अनिवार्य नहीं, किन्तु यह साधारण रिवाज हो गया है। ऐसी दशा में बीमा कम्पनी कुछ अनुग्रह दिवस (Days of Grace) देती है—वार्षिक किश्त में एक महीने और मासिक किश्त में पन्द्रह दिन का अनुग्रह समय साधारणतया दिया जाता है—और प्रीमियम देय तिथि (Due date) के पश्चात् अनुग्रह दिवस के व्यतीत होने तक अदा की जा सकती है। यदि प्रीमियम अनुग्रह समय के व्यतीत होने तक अदा न हो, तो बीमा टूट जाता है और कुछ शर्तों को सतुष्ट करने पर ही वह पुनर्जीवित किया जा सकता है।

यदि आप किसी जीवन बीमा कम्पनी के प्रास्पेक्टस या प्रविवरण को देखें, तो उसमें आप को प्रीमियम की दरों के कई कोष्ठक (Tables) मिलेंगे जो विभिन्न जोखिमों पर लागू होते हैं। आप देखेंगे कि प्रीमियम की दर सर्वदा १०००) के बीमे के लिये दी जाती है। आप को यह भी पता चलेगा कि आयु की वृद्धि के साथ साथ प्रीमियम की दर भी बढ़ जाती है। एक और बात यह भी है कि विभिन्न प्रकार के बीमा पत्रों के लिये अलग अलग प्रीमियम की दरें होती हैं।

किसी व्यक्ति के आय के ⅙ भाग तक प्रीमियम पर आय कर नहीं लगता। इसका उद्देश्य मितव्ययिता एवं बीमा को प्रोत्साहित करना है।

प्रास्पेक्टस या प्रविवरण में जो दर दी होती है, वे प्रसामान्य (normal) जीवन के लिये होती हैं। यदि डाक्टरी परीक्षा से यह पता चले कि प्रस्तावित जीवन प्रसामान्य से नीचे स्तर का है तो प्रीमियम की दर अतिरिक्त जोखिम को ढकने (Cover) के लिये बढ़ा दी जाती है। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति किसी भय ग्रस्त पेशे में सलग्न हो—जैसे अस्त्र शस्त्र बनाने में या हवाई जहाज उड़ाने में—तो भी उससे अधिक प्रीमियम ली जाती है। इसे प्रीमियम का लादा जाना (Loading the premium) कहते हैं। यदि जीवन

किसी भयानक रोग से जैसे क्षय रोग से पीड़ित हो अथवा अशक्त हो या उसमें और कोई दोष हो, तो बीमा कम्पनी उसके प्रस्ताव को अस्वीकृत कर देती है।

बीमा-पत्र

पहली प्रीमियम मिल जाने पर बीमा कम्पनी बीमा-पत्र निर्गमित (issue) करती है। जीवन-बीमा-पत्र एक टिकट लगा हुआ रुक्का या प्रलेख (document) होता है जिसमें जीवन बीमे का प्रसंविदा तथा बीमा करने और कराने वाले के बीच तय की हुई शर्तें दी रहती हैं। साधारणतया इस पर कम्पनी की मुहर लगी होती है, और इस पर दो डाइरेक्टरों के हस्ताक्षर तथा मैनेजर के प्रति-हस्ताक्षर (Counter signature) होते हैं। बीमा पत्र में निम्नलिखित प्रमुख वाक्य होते हैं :

१. बीमा-पात्र का नाम, पेशा, पता और अगले जन्मदिवस पर उसकी आयु।
२. जिस रकम के लिये बीमा पत्र निर्गमित किया गया हो, वह रकम और बीमा पत्र का सलाभ या अलाभ होना।
३. प्रीमियम की रकम और उसकी अदायगी का समय।
४. यदि बीमा पात्र किसी संकटमय पेशे में सलग्न हो, तो उसे उसकी सूचना देनी चाहिये।
५. वे दशाएँ जिनमें बीमा-पत्र विवर्जित (void) हो जाता है, जैसे आत्महत्या।
६. बीमा पत्र का डूबना और उसका पुनर्जीवित होना।
७. बीमा पत्र का समर्पण मूल्य।
८. बीमा-पत्र का हस्तांकन (Assignment)।
९. दावे का भुगतान।

२. जीवन-बीमा-पत्रों के प्रकार

बीमा-पत्र का क्रेता दो बातों पर विशेष ध्यान रखता है : (१) उसे जो प्रीमियम अदा करनी पड़ेगी उसकी रकम, और (२) बीमा कम्पनी द्वारा वादा की गई रकम और वे अवस्थाएँ जब वह देय होगी। विभिन्न मनुष्यों की आर्थिक अवस्था और आवश्यकताएँ अलग अलग होती हैं, अतः वे अलग-

अलग प्रकार की सुविधाओं और प्रीमियम वाले बीमा पत्र पसन्द करते हैं। इस कारण जीवन बीमा-पत्र की बहुत सी किस्में हो गई हैं। इनमें से कुछ मुख्य किस्मों की विवेचना की जाती है।

बन्दोबस्ती बीमा पत्र (Endowment Policy)

बन्दोबस्ती बीमा-पत्र के अन्तर्गत बीमे की रकम मृत्यु पर अथवा निश्चित अवस्था की प्राप्ति पर, जो भी पहले हो, अदा कर दी जाती है। मान लीजिए कोई व्यक्ति २० साल का बन्दोबस्ती बीमा खरीदता है। इसका यह अर्थ हुआ कि यदि उसकी मृत्यु २० वर्ष के पूर्व हो जाय, तो मृत्यु होने के समय ही बीमे की रकम अदा कर दी जायगी। किन्तु यदि वह जीवित रहे, तो २० वर्ष व्यतीत होने पर बीमे की रकम अदा की जायगी।

ऐसे बीमा-पत्र में रक्षा तत्व और विनियोग तत्व का प्रशसनीय समावेश होता है, और यदि बीमा कम्पनी, बीमा पात्र की आयु तथा बीमा पत्र की शर्तों का चुनाव सावधानी से किया जाय, तो जीवित रहने पर ब्याज की दर २% से ३% तक आकर पड़ती है।

ऊपर की स्कीम जिसके अनुसार बीमे की रकम मृत्यु अथवा निश्चित आयु की प्राप्ति होने पर जो भी पहले हो, देय हो जाती है, उसे एक बन्दोबस्ती बीमा पत्र कहते हैं। यह दुगुने बन्दोबस्ती बीमा-पत्र (Double Endowment Policy) से भिन्न होता है जिसके अनुसार निश्चित अवधि में मृत्यु होने पर बीमे की रकम अदा की जाती है। किन्तु उस अवधि तक जीवित रहने पर उसकी दुगुनी रकम अदा की जाती है। इस प्रकार के बीमे पत्र में कभी कभी बीमा कम्पनी एक निश्चित रकम, दी हुई आयु की प्राप्ति पर चुकता करने की प्रतिज्ञा करती है और समान रकम मृत्यु होने पर देने का भी वायदा करती है। इसके अतिरिक्त खालिस बन्दोबस्त (Pure Endowment) भी होता है जिसके अनुसार एक निश्चित रकम एक खास भावी तारीख को देय होती है, यदि उस तारीख का बीमा-पात्र जीवित हो। यदि बीमा कराने वाले की इस तारीख के पहले ही मृत्यु हो जाय, तो बीमा कम्पनी कुछ भी अदा नहीं करती।

आजीवन बीमा-पत्र (Whole Life Policy)

आजीवन बीमा पत्र बहुत पुराना है। इसके अनुसार बीमे की रकम बीमा पात्र की मृत्यु होने पर देय होती है, चाहे वह कभी भी हो। आजीवन बीमा-पत्र केवल एक ही प्रीमियम दे कर या कुछ निश्चित वर्षों तक वार्षिक प्रीमियम अदा करके, अथवा आजीवन वार्षिक प्रीमियम चुकता करके खरीदा जा सकता है। ऐसे बीमा पत्रों को क्रमशः एक **भुगतानवाला आजीवन बीमा-पत्र (Single Payment Life Policy), निश्चित भुगतानवाला आजीवन बीमा पत्र (Limited Payments Life Policy), या साधारण आजीवन बीमा पत्र (Ordinary Life Policy)** कहते हैं।

(१) साधारण आजीवन बीमा पत्र—ऐसे बीमा पत्र के अन्तर्गत जब तक बीमा पात्र जीवित रहता है तब तक वह निश्चित अवधि पर प्रीमियम अदा करता रहता है। प्रीमियम मृत्यु होने पर अदा करनी पड़ती है, यहाँ तक कि वृद्धावस्था में भी, जब कि मनुष्य की आय कम हो जाती है, प्रीमियम अदा करनी पड़ती है जो कि इस बीमा पत्र का बड़ा दाष है।

(२) निश्चित भुगतान वाला आजीवन बीमा पत्र—ऐसे जीवन बीमा-पत्र के अन्तर्गत प्रीमियम निश्चित सालों तक ही अदा करनी पड़ती है। इस अवधि के व्यतीत हो जाने पर प्रीमियम की अदायगी बन्द हो जाती है क्योंकि अदा की जाने वाली प्रीमियमो की सख्या निश्चित होती है, अत इसे निश्चित भुगतान वाला बीमा पत्र कहा जाता है।

(३) अकेले भुगतानवाला आजीवन बीमा पत्र—निश्चित भुगतानवाले बीमा-पत्र की एक विशेष किस्म वह होती है जिसमें केवल एक ही प्रीमियम, बीमा-पत्र के निर्गमित के समय, अदा की जाती है। इसे **अकेले भुगतान वाला आजीवन बीमा-पत्र** कहते हैं क्योंकि इतनी बड़ी रकम एक बार में थोड़े से ही व्यक्ति अदा कर सकते हैं, इसलिए वह लोकप्रिय नहीं है। इसके अतिरिक्त यदि बीमा पात्र की मृत्यु ही हो जाय तो उसे नुकसान रहेगा, क्योंकि इस प्रथा के अन्दर वह अन्य दोनों प्रथाओं की अपेक्षा अधिक रुपया बीमा कम्पनी को अदा करेगा।

हमने साधारण आजीवन बीमा पत्र तथा अकेले भुगतान वाले आजीवन बीमा-पत्र के दोषों का वर्णन ऊपर कर दिया है। इन तीनों में निश्चित भुगतान वाला आजीवन बीमा पत्र सबसे अच्छा है, क्योंकि इसके अन्तर्गत बीमा कराने वाले को प्रीमियम एक निश्चित अवधि तक—ही जब तक कि उसकी आय पर्याप्त हो तभी तक—अदा करनी पड़ती है और जब आदमी वृद्ध हो जाता है और उसकी आय कम हो जाती है या बन्द हो जाती है, तब प्रीमियम देना बन्द हो जाता है।

सलाभ और अलाभ बीमा पत्र

आजीवन या बन्दोबस्ती बीमा-पत्र सलाभ (With Profit) और अ-लाभ (Without Profit) दोनों ही प्रकार के होते हैं। सलाभ बीमा-पत्र के क्रेता को कम्पनी के लाभ में भागी होने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। हाल में सलाभ बीमा पत्र बहुत लोकप्रिय बन गये हैं। साधारणतया कम्पनी के कुल लाभ का ९० प्रतिशत बीमा पात्रों में बाँट दिया जाता है, केवल शेष १० प्रतिशत ही शेयरहोल्डरों को मिलता है। बीमा धारक को कम्पनी के लाभ का मिलने वाला भाग अतिरिक्त लाभांश या बोनस (Bonus) कहलाता है। कम्पनी का लाभ निश्चित अवधि पर मालूम किया जाता है और तभी बाँटा जाता है। बोनस (१) नकद रुपयों के रूप में लिया जा सकता है, या (२) बीमे की रकम में जोड़ा जा सकता है, या (३) वार्षिक प्रीमियम के घटाने में काम आ सकता है। अलाभ बीमा पत्र, कम्पनी के लाभ में भाग लेने का अधिकार नहीं देता। स्वाभाविक रूप से सलाभ बीमा पत्र के प्रीमियम का दर अलाभ बीमा पत्र की अपेक्षा अधिक होती है।

मियादी बीमा पत्र

मियादी बीमा पत्र बीमा काल में रक्षा के निमित्त निर्गमित किया जाता है और उसमें विनियोग तत्व नहीं होता। इसके अन्तर्गत बीमे की रकम बीमा पात्र की निश्चित अवधि में मृत्यु होने पर ही देय होती है। यदि बीमा पात्र निश्चित अवधि तक जीवित रहे तो बीमा कम्पनी कुछ भी रुपया नहीं अदा करती। अत स्पष्ट है कि इसमें विनियोग तत्व का पूर्णतया अभाव होता है। मियादी बीमा-

पत्र की अधिकतम मियाद साधारणतया दस वर्ष होती है। मियादी बीमा-पत्र की प्रीमियम की दर सबसे सस्ती होती है। ऐसा बीमा-पत्र ऋण लेने के लिए पार्श्विक जमानत (Collateral Security) के रूप में बहुधा दिया जाता है। बीमा पत्र-धारक यह भी अधिकार प्राप्त कर सकता है कि वह बाद को पर्याप्त प्रीमियम देकर बीमा पत्र को आजीवन या बन्दोबस्ती बीमा-पत्र में बदलवा ले। ऐसे बीमा-पत्र का विशेष गुण यह होता है कि आरम्भ में आयु कम होने के समय कम प्रीमियम देनी पड़ती है और बाद को आयु बढ़ जाने पर अधिक प्रीमियम दे कर आजीवन बन्दोबस्ती बीमा-पत्र में उसको परिवर्तित कराया जा सकता है। ऐसे बीमा-पत्र को **परिवर्तनशील मियादी बीमा पत्र** (Convertible Term Policy) कहते हैं।

संयुक्त जीवन बीमा पत्र

बीमा-पत्र दो या दो से अधिक जीवनों पर खरीदा जा सकता है। ऐसी दशा में बीमे की रकम बीमा-पात्रों में से किसी एक की भी मृत्यु होते ही देय हो जाती है। ऐसे जीवन बीमा-पत्र बहुधा पति पत्नी या साझेदारों के संयुक्त जीवनों पर लिया जाता है। साझे में ऐसा होता है कि किसी भी साझेदार की मृत्यु होने पर उसके उत्तराधिकारी को उसकी पूँजी तथा ख्याति (Goodwill) का उसका भाग लौटाना पड़ता है, अतः यदि संयुक्त बीमा लिया गया हो तो किसी भी साझेदार की मृत्यु होने पर फर्म को इतना रुपया बीमा कम्पनी से मिल जाता है कि मृतक का भाग अदा कर दिया जाय, और फर्म को किसी भी प्रकार की द्रव्य सम्बन्धी कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ता। पति पत्नी यदि संयुक्त बीमा लें, तो पति की मृत्यु होने पर पत्नी को और पत्नी की मृत्यु होने पर पति को, एक रकम मिल जाती है जिससे कि अकेले रह जाने पर धन की चिन्ता से मुक्ति मिल जाती है।

अन्तिम अतिजीवित बीमा-पत्र (Last Survivor Policy)

कभी कभी संयुक्त बीमा-पत्र इस शर्त पर लिया जाता है कि बीमे की रकम अन्तिम अतिजीवित व्यक्ति की मृत्यु होने पर ही अदा की जायगी। इसको अन्तिम अतिजीवित बीमा पत्र कहते हैं। संयुक्त बीमा-पत्र के अन्तर्गत पहली

मृत्यु होने पर ही बीमे की रकम देय हो जाती है; किन्तु अन्तिम अतिजीवित बीमा पत्र के अन्तर्गत बीमे की रकम अन्तिम मृत्यु होने पर ही देय होती है।

वार्षिक वृत्ति (Annuity)

अधिकांश बीमा कम्पनियाँ वार्षिक वृत्ति भी बेचती हैं। वार्षिक वृत्ति खरीदने वाले को वार्षिक वृत्तिग्राही (Annuitant) कहते हैं, और उसे एक रकम बीमा कम्पनी को देनी पड़ती है। इसके एवज में बीमा कम्पनी उसे जीवन पर्यन्त वार्षिक वृत्ति देती रहती है। समझौते के अनुसार, वृत्ति का भुगतान प्रसंविदे के पूर्ण होने पर ही अथवा कुछ समय व्यतीत होने पर आरम्भ होता है। स्पष्टतया वृत्ति बीमे से बिल्कुल उल्टी वस्तु है; क्योंकि बीमे में बीमा-पात्र वार्षिक भुगतान करता है और बीमा कम्पनी एक रकम अदा करती है। किन्तु वार्षिक वृत्ति में क्रेता एक रकम अदा करता है और बीमा कम्पनी सालाना वृत्ति अदा करती है।

स्त्रियों और बच्चों का जीवन-बीमा

कुछ काल पहले भारतीय बीमा कम्पनियाँ स्त्रियों का जीवन-बीमा नहीं करती थीं क्योंकि प्रसव काल में स्त्रियों का जीवन सङ्कटमय होता है और स्त्रियाँ अपने स्वास्थ्य की सावधानी भी नहीं करतीं। किन्तु अब स्त्रियों का जीवन बीमा किया जाने लगा है यद्यपि यह बीमा अतिरिक्त प्रीमियम लेकर ही किया जाता है। किन्तु ५० वर्ष की आयु के उपरान्त स्त्रियों का प्रसव काल समाप्त हो जाता है और तब उनको मनुष्यों के समान ही प्रीमियम देनी होती है।

बच्चों का भी जीवन बीमा कराया जा सकता है। ऐसे बीमा-पत्र या तो वैवाहिक बीमा-पत्र होते हैं या शिक्षण बीमा पत्र। पहली दशा में पिता को एक निश्चित समय तक प्रीमियम अदा करनी पड़ती है। उसके पश्चात् विवाह के अवसर पर कम्पनी बीमे की रकम अदा कर देती है। यदि पिता की मृत्यु सारी प्रीमियम अदा करने के पहले ही हो जाय, तो शेष प्रीमियम माफ कर दी जाती है। यदि बीमा कराने वाला ही विवाह के पूर्व चल बसे, तो पहली प्रीमियम को छोड़कर शेष सब प्रीमियम लौटा दी जाती है। इसी प्रकार शिक्षण बीमा-पत्र के अन्तर्गत पिता को एक निश्चित समय तक प्रीमियम अदा करनी पड़ती है

और उसके पश्चात् बीमा कम्पनी विद्यार्थी को एक निश्चित समय तक कुछ रुपया सालाना या छमाही या मासिक किश्तों में देती रहती है। बीमा-पत्र के समाप्त होने के पूर्व ही यदि पिता की या बच्चे की मृत्यु हो जाय, तो ऊपर बताई हुई शर्तों के अनुसार ही काम किया जाता है।

§ ४. बीमायोग्य हित, हस्तांकन, आदि

बीमायोग्य हित

यदि बीमा-पात्र का बीमा के विषय में बीमायोग्य हित (Insurable Interest) न हो, तो बीमा का प्रसंविदा मान्य नहीं होता। यह प्रत्येक बीमे के प्रसंविदे की भाँति जीवन-बीमे पर भी लागू होता है। जीवन-बीमे में बीमायोग्य हित बीमा-पत्र लेते समय अवश्य होना चाहिये; बीमा-पात्र के दावा (Claim) करने के समय यदि इसका अभाव हो, तो उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता। प्रत्येक व्यक्ति का अपने जीवन में बीमायोग्य हित होता है। किसी दूसरे के जीवन में बीमायोग्य हित सम्बंधी होने के नाते या विवाह हो जाने पर या द्रव्य सम्बंधी सम्बंध स्थापित हो जाने पर प्राप्त हो जाता है। उदाहरण के लिए, यदि पुत्र अपने पिता पर आश्रित हो, तो पिता के जीवन में उसका बीमायोग्य हित होगा; इसी प्रकार ऋणदाता को ऋण लेने वाले के जीवन में ऋण के रकम की मात्रा तक बीमायोग्य हित प्राप्त हो जाता है। नीचे बीमायोग्य हित के कुछ उदाहरण दिये जाते हैं:

१. प्रत्येक व्यक्ति का अपने जीवन में बीमायोग्य हित होता है।
२. पति को अपनी पत्नी के जीवन में और पत्नी को पति के जीवन में बीमायोग्य हित होता है।
३. यदि पिता पुत्र पर आश्रित हो, तो पुत्र के जीवन में उसका बीमायोग्य हित होता है।
४. यदि पुत्र पिता पर आश्रित हो, तो पिता के जीवन में उसका बीमायोग्य हित होता।
५. ऋणी के जीवन में ऋणदाता का ऋण की रकम की मात्रा तक बीमायोग्य हित होता है।

६. जो हित किसी ट्रस्टी की रक्षा में छोड़ दिया गया हो, उसमें ट्रस्टी का बीमायोग्य हित होता है।

यह स्मरण रखना चाहिए कि जीवन बीमा का प्रसंविदा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा नहीं है। बीमाकर्ता बीमा-पात्रों की मृत्यु होने पर जो क्षति होती है उसे पूरा करने का उत्तरदायित्व नहीं लेता क्योंकि उस क्षति की तो गणना ही नहीं हो सकती। अतः जीवन-बीमा कितनी भी रकम का कराया जा सकता है।

बीमा-पत्र का हस्तांकन (Assignment)

बीमा-पात्र बीमा-पत्र का हस्तांकन किसी दूसरे व्यक्ति को या तो प्रेम या स्नेह के कारण करता है या ऋण की जमानत के रूप में। हस्तांकन बीमा पत्र पर बेचान लेख लिख कर किया जा सकता है या किसी अलग रुक्के के द्वारा किया जाता है। किन्तु बीमा कम्पनी को हस्तांकन की सूचना अवश्य देनी चाहिये और कम्पनी का स्वीकृति-पत्र प्राप्त कर लेना चाहिये। यदि कोई व्यक्ति बीमा-पत्र का हस्तांकन किये बिना ही मर जाय, तो उसके उत्तराधिकारी को उत्तराधिकार का प्रमाण-पत्र देना होगा, और तभी बीमा कम्पनी रुपया चुकायेगी। यह बात ध्यान देने की है कि जिस व्यक्ति के नाम हस्तांकन किया जाता है, उसका बीमा किये हुए जीवन में बीमायोग्य हित होना आवश्यक नहीं। अतः एक व्यक्ति अपने जीवन का बीमा करा सकता है और उसे ऐसे व्यक्ति को हस्तांकित कर सकता है जिसे उसके जीवन में किसी भी प्रकार का बीमा-योग्य हित न हो।

समर्पण मूल्य (Surrender Value)

जब बीमा-पात्र को रुपयों की आवश्यकता होती है या वह अगली प्रीमियम देने में असमर्थ हो जाता है, तब वह बीमा-पत्र समर्पित या वापस कर देता है। तब बीमा कम्पनी बीमा-पात्र को समर्पण-मूल्य अदा कर देती है। अतः यह कहा जा सकता है कि समर्पण मूल्य उस रकम को कहते हैं जो बीमा-कम्पनी बीमा के समर्पण करने पर बीमा-पत्र धारक को अदा करती है। समर्पण-मूल्य उस समय तक अदा की गई प्रीमियमों की कुल रकम से सदैव कम होता है। समर्पण-मूल्य अ-लाभ बीमा-पत्रों की अदा की गई प्रीमियमों की कुल रकम का केवल

२५ प्रतिशत या ३० प्रतिशत भाग होता है, और स लाभ बीमा पत्रों की अदा की गई प्रीमियमों की कुल रकम का लगभग ४० प्रतिशत। मियादी बीमा पत्रों का कुछ भी समर्पण मूल्य नहीं होता। कभी कभी यह कहा जाता है कि समर्पण मूल्य पर्याप्त नहीं होता। किन्तु यह बात ठीक नहीं, दी गई प्रीमियमों में से जो रकम वापस दी जाती है वह प्रदत्त रक्षा की लागत, प्रबन्ध व्यय और बीमा पत्र के समर्पण से कम्पनी को जो अधिक जोखिम झेलनी पड़ती है, उन सबके कारण होती है।

बीमा पत्रों पर ऋण

यदि द्रव्य की आवश्यकता पड़ने पर बीमा पात्र बीमा पत्र समर्पित न करना चाहे तो वह बीमा पत्र की जमानत पर बीमा कम्पनी से साधारण दर पर रुपया उधार भी ले सकता है। समर्पण मूल्य के ६० प्रतिशत तक रुपया उधार दे दिया जाता है।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१ जीवन बीमा पालिसी कैसे प्राप्त की जाती है? बीमा किये हुये व्यक्ति की मृत्यु हो जाने पर उसकी पालिसी का रुपया कैसे वसूल किया जाता है? (उ० प्र०, १९५५)

२ (क) सयुक्त जीवन बीमा पत्र (Joint Life Policy) तथा अन्तिम अतिजीवित बीमा पत्र (Last Survivorship Policy) के भेद बताइये। (ख) वैवाहिक एव शिक्षण जीवन बीमा पत्रों के क्या उद्देश्य हैं? (उ० प्र०, १९५४)

३ (अ) सयुक्त जीवन बीमा (Joint Life Policy) तथा अन्तिम अतिजीवित बीमा (Whole Life Policy) पत्रों के भेद दिखलाइये।

(आ) वैवाहिक एव शिक्षण जीवन बीमा पत्रों के क्या उद्देश्य हैं? समझा कर लिखिये। (१९५४)

४ जीवन-बीमा प्रसंविदे के सम्बध में बीमायोग्य हित से क्या आशय

है ? ऐसे व्यक्तियों के नाम बनाइये कि जिनको जीवन-बीमा प्रसविदे के अन्तर्गत बीमायोग्य हित प्राप्त हो सकता है ? (उत्तर प्रदेश, १९५३)

५. आजीवन बीमा-पत्र तथा बन्दोबस्ती बीमा-पत्र में अन्तर बताइये। (उत्तर प्रदेश, १९५३)

६. आजीवन बीमा पत्र तथा बन्दोबस्ती बीमा-पत्र का भेद बताइये और उनके हानि तथा लाभों का वर्णन कीजिये। (यू० पी०, १९५१)

७. जीवन बीमे तथा अग्नि बीमे के अन्तर्भेद बताइये। (यू० पी०, १९४५)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

८ जीवन बीमे में बीमायोग्य हित से आप क्या समझते हैं ? ब्राउन के स्त्री है, पुत्र है, नौकर है, दादी है और एक मित्र है जिससे ब्राउन को ५० पौंड लेने हैं क्या ब्राउन का इन व्यक्तियों के जीवन में बीमायोग्य हित है ? क्या इन व्यक्तियों का ब्राउन के जीवन में बीमायोग्य हित है ? यदि हाँ, तो किन दशाओं में और किस सीमा तक ? (१९५२)

९. जीवन-बीमा की परिभाषा दीजिये। बीमायोग्य हित से सम्बन्ध रखने वाले नियम बीमा की शाखा पर कहाँ तक लागू होते हैं ? यह भी बताइये कि जीवन-बीमा पत्र हस्तांकित हो सकता है अथवा नहीं, यदि हाँ, तो हस्तांकिती को अपना अधिकार (title) पूरा करने के लिए क्या काम करना चाहिये ? (राजपूताना, १९५०)

१०. आपने १०,०००) के लिये अपना जीवन बीमा कराने का निश्चय किया है। बीमा-पत्र प्राप्त करने के लिए आपको जो काम करना पड़ेगा, उसकी व्याख्या कीजिए। (राजपूताना, १९४९)

पटना, इन्टर कामर्स

११. जीवन-बीमा के सामाजिक तथा आर्थिक महत्व का वर्णन कीजिये। (पटना, १९५५)

१२. जीवन-बीमा के प्रसविदे का स्वभाव तथा उद्देश्य बताइये। बीमा के अन्य प्रसविदों से यह किस प्रकार भिन्न होता है ? (पटना, १९५३)

१३. आजीवन-बीमा-पत्र तथा बंदोबस्ती बीमा-पत्र का भेद बताइये। (पटना, १९५१)

१४. "जीवन-बीमा में रक्षा तथा विनियोग, दोनों के तत्व सम्मिलित होते हैं।" इस कथन की विस्तारपूर्वक व्याख्या कीजिये। क्या जीवन-बीमे की हर किस्म पर यह कथन घटता है? (पटना, १९४९)

१५. जीवन-बीमा के मूल सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए और उस आधार की व्याख्या कीजिए जिस पर कि प्रीमियम की गणना की जाती है। (पटना, १९४६)

सागर, इन्टर कामर्स

१६. "आगोप क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा है"—क्या यह सभी प्रकार के आगोपों के लिए सत्य है? समझाइये। (सागर, १९५५)

१७. जीवन बीमे के प्रसंविदे में बीमायोग्य हित से आप क्या समझते हैं? राम के एक स्त्री है, एक पुत्र है, एक नौकर, एक दादी और एक मित्र जो उसका ५००) का ऋणी है। क्या राम का इनमें किसी के भी जीवन में बीमायोग्य हित है? यदि हाँ, तो किन परिस्थितियों में और किस सीमा तक? (सागर, १९५०)

नागपुर, इन्टर कामर्स

१८. जीवनागोप व अन्य आगोपों में क्या भेद है? (नागपुर, १९५२)

१९. जीवनागोप सम्बन्धी भिन्न-भिन्न प्रकार के गोप-लेखों का वर्णन कीजिए। इनमें से किसको आप सर्वश्रेष्ठ मानते हैं और क्यों? (नागपुर, १९५१)

२०. यदि आपका कोई मित्र आपसे यह सलाह पूछे कि वह बीमा कम्पनी में किस प्रकार का जीवन-आगोप करावे, तो आप उसको क्या सलाह देंगे? उत्तर सकारण दीजिये। (नागपुर, १९५०)

२१. जीवन-बीमा-पत्रों की विभिन्न किस्मों के अन्तर्भेद बताइये। इनमें से कौन सा बीमा-पत्र सबसे अधिक लोकप्रिय है और क्यों? (नागपुर, १९४८)

बनारस, इन्टर कामर्स

२२. जीवन-बीमा का स्वभाव और उद्देश्य बताइये। बीमा के अन्य प्रसंविदों से यह किस प्रकार भिन्न होता है। (बनारस, १६५५)

२३. जीवन-बीमे में बीमायोग्य हित क्या होता है? जीवन-बीमा-पत्र में बीमायोग्य हित रखने वाले व्यक्तियों के नाम बताइये। (बनारस, १६५२)

२४. आजीवन बीमा-पत्र तथा बन्दोबस्ती बीमा-पत्र का अन्तर बताइये। आप अपने मित्र से इनमें से कौन-सा बीमा-पत्र लेने की सिफारिश करेंगे, और क्यों? (बनारस, १६५१)

२५. आप निम्नलिखित जीवन-बीमा-पत्रों से क्या समझते हैं और प्रत्येक किन अवस्थाओं में उपयुक्त है: (अ) आजीवन बीमा-पत्र; (आ) संयुक्त-बीमा-पत्र; (इ) बन्दोबस्ती बीमा-पत्र; और (ई) अकेल भुगतान वाला जीवन-बीमा-पत्र। (बनारस, १६४४)

दिल्ली, हायर सेकिंडरी

२६. भारत में बीमा कम्पनियाँ जिस प्रकार के जीवन-बीमा-पत्र निर्गमित करती हैं, उनकी मुख्य किस्मों की व्याख्या कीजिये। (देहली, हायर सेकिंडरी, १६४६)

२७. जीवन-बीमा कम्पनी बीमित व्यक्ति की और सारे देश की क्या सेवाएँ करती हैं? (देहली, हायर सेकिंडरी, १६३८)

उस्मानिया, इन्टर कामर्स

२८. जीवन बीमा-पत्र के विभिन्न प्रकार बताइये और लिखिये कि प्रत्येक किन अवस्थाओं में उपयुक्त है? (उस्मानिया, १६५२)

अध्याय ४७

अग्नि-बीमा

वैसे तो अग्नि मनुष्य की बड़ी मित्र रही है, किन्तु यह कभी कभी बहुत विनाशकारी रूप धारण कर लेती है; और लगभग प्रत्येक वर्ष ही लाखों रुपयों की सम्पत्ति जल कर राख हो जाती है। जिस अभागे पर यह संकट टूटता है, वह अधिकांश में इतनी क्षति बर्दाश्त नहीं कर सकता और उसकी आर्थिक अवस्था चिन्ताजनक हो जाती है; इस प्रकार की क्षति से मनुष्यों की रक्षा करने के लिए ही अग्नि बीमा का आविष्कार हुआ। थोड़ी सी प्रीमियम देकर ही सम्पत्ति का स्वामी अपनी सम्पत्ति का अग्नि-बीमा करा सकता है; और इसके एवज में बीमा कम्पनी इस बात की प्रतिज्ञा करती है कि यदि उसकी सम्पत्ति को आग लगने से कुछ हानि हो, तो कम्पनी उसे, बीमे की रकम तक, पूरा कर देगी। अग्नि-बीमा बड़ी रक्षा प्रदान करता है, और इसलिए यह बहुत लोकप्रिय हो गया है।

बीमा-पात्र का उत्तरदायित्व

अग्नि-बीमा, बीमा-कर्ता को क्षतिपूर्ति के लिए बाध्य कर देता है। इसी प्रकार बीमा-पात्र प्रीमियम अदा करने के लिए बाध्य हो जाता है। साथ में बीमा-पात्र को चाहिये कि वह पूर्ण विश्वास व्यवहार में लावे। उसे निम्नलिखित बातों का उत्तरदायित्व भी लेना पड़ता है :

(१) बिना बीमा कर्ता की अनुमति के, माल में या जिस इमारत में वह रक्खा हो, उसमें ऐसा कोई परिवर्तन न किया जाय कि जिससे जोखिम बढ़ जाय।

(२) माल को बिना बीमा-कर्ता की अनुमति के न हटाया जाय।

(३) वसीयतनामे के अतिरिक्त और किसी भी प्रकार से बीमा-पत्र को बिना बीमा-कर्ता की अनुमति के हस्ताकित नहीं करना चाहिये।

§ १. अग्नि-बीमा का प्रसंविदा

अग्नि बीमा ऐसा प्रसंविदा है जिसके अनुसार एक पक्ष, प्रीमियम के एवज में, दूसरे पक्ष की उल्लिखित सम्पत्ति को निश्चित अवधि में अग्नि द्वारा क्षति पहुँचने पर, उसकी पूर्ति करने की एक निश्चित रकम तक, प्रतिज्ञा करता है। बीमा-कर्ता एक निश्चित प्रीमियम अदा करता है, इसके बदले में बीमा कम्पनी यह प्रतिज्ञा करती है कि यदि बीमा की हुई सम्पत्ति को अग्नि से एक निश्चित अवधि में कुछ क्षति पहुँचे, तो वह उसकी एक निश्चित रकम तक पूर्ति करेगी।

क्षतिपूर्ति का सिद्धान्त

यह स्पष्ट है कि अग्नि बीमा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा होता है। बीमा पात्र बीमा कराई हुई सम्पत्ति की अग्नि द्वारा होने वाली वास्तविक क्षति को, बीमे की रकम की सीमा तक, पूरा करने के लिए दावा करने का अधिकार होता है। बीमा कम्पनी बीमे की रकम तक अग्नि द्वारा की गई क्षति को पूरा करने की प्रतिज्ञा करती है। बीमा-पात्र अग्नि बीमे से कुछ लाभ नहीं उठा सकता। यदि ऐसा न हो तो बीमा-पात्रों को बेईमानी से अपनी सम्पत्ति स्वयं जलाने का प्रोत्साहन मिलने लगे।

बीमा पत्र एक निश्चित रकम के लिये लिया जाता है। यह अच्छी तरह स्मरण रखना चाहिये कि बीमे की रकम क्षति की वास्तविक रकम से भिन्न होती है। बीमे की रकम वह अधिकतम सीमा है जहाँ तक कि क्षतिपूर्ति का वायदा किया जा सकता है। किंतु सम्पत्ति का आग द्वारा विनाश हो जाने पर बीमा पात्र, बीमे की रकम तक, विनाश के समय उस सम्पत्ति का बाजार मूल्य ही माँग सकता है। मान लीजिये किसी सम्पत्ति का बाजार मूल्य ८०००) है किन्तु उसका बीमा केवल २,०००) के लिये कराया गया है। यदि इस सम्पत्ति को आग लग जाने के कारण २,०००) की क्षति पहुँचे, तो बीमा पात्र कम्पनी से २,०००) ले सकता है। किन्तु यदि नुकसान ४,०००) का हो तो भी वह केवल २,०००) रुपये ही

ले सकता है।* केवल निर्धारित मूल्यवाला (valued) बीमा-पत्र ही इस सामान्य नियम का अपवाद (exception) है। ऐसे बीमा-पत्र में सम्पत्ति का मूल्य पहले निर्धारित कर लिया जाता है और सम्पूर्ण क्षति (Total Loss) हो जाने पर बीमे की रकम वसूल की जा सकती है।

अग्नि-बीमा और जीवन-बीमा

(१) अग्निबीमा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा होता है, किन्तु जीवन-बीमे का ऐसा स्वभाव नहीं होता। अतः अग्नि-बीमा में कम्पनी से अग्नि द्वारा नष्ट होने वाली सम्पत्ति का केवल वास्तविक मूल्य ही वसूल किया जा सकता है, किन्तु जीवन-बीमे में बीमे की पूरी रकम वसूल की जा सकती है, और बीमा कितनी भी रकम का किया जा सकता है।

(२) जीवन-बीमे में रक्षा-तत्व और विनियोग-तत्व दोनों ही सम्मिलित होते हैं; किन्तु अग्नि-बीमे में केवल रक्षा-तत्व ही होता है।

(३) अग्नि-बीमा-पत्र की अवधि १० दिन से लेकर १२ महीने तक होती है; किन्तु जीवन-बीमा-पत्र अधिकतर इससे लम्बी अवधि का होता है।

(४) अग्नि-बीमे में संकट विभिन्न प्रकार के होते हैं। अतः इन संकटों का वर्गीकरण बहुत विषम और लम्बा-चौड़ा होता है; यही कारण है कि अग्नि-बीमे की दरों में बहुत अन्तर पाये जाते हैं। किन्तु जीवन-बीमे में प्रत्येक औसत जीवन को, आयु के अनुसार, एक प्रीमियम देनी पड़ती है। जीवन के औसत स्वास्थ्य से नीचे स्तर के होनेपर ही अतिरिक्त प्रीमियम ली जाती है।

(५) जीवन-बीमा-पत्र दो या तीन वर्ष के बाद समर्पण-मूल्य प्राप्त कर लेता है; किन्तु अग्नि-बीमा-पत्र का कोई भी समर्पण-मूल्य नहीं होता।

(६) जीवन-बीमे में बीमायोग्य हित बीमा कराते समय उपस्थित होना आवश्यक है, किन्तु अग्नि-बीमे में यह हित बीमा कराते समय और हानि होते समय, दोनों ही समय उपस्थित होना चाहिये। अग्नि-बीमे में संकट की

---

*किन्तु यदि बीमा-पत्र में औसत वाक्य (average clause) हो, तो वास्तविक क्षति का केवल $\frac{3}{4}$ भाग ही वसूल किया जा सकता है। देखिये § ३।

मात्रा अधिक होती है। इसलिए अग्नि-बीमे को व्यक्तिगत प्रसविदा कहा जाता है और अग्नि-बीमा-पत्र बिना बीमा कम्पनी की अनुमति के हस्ताकित नहीं किया जा सकता।

अग्नि बीमा और सामुद्रिक बीमा

अग्नि-बीमे और सामुद्रिक बीमे में यह समानता है कि दोनों ही क्षतिपूर्ति के प्रसविदे होते हैं। किन्तु इनमें दो बड़े अन्तर हैं : (१) अग्नि-बीमा में बीमा-पात्र नष्ट होने वाली सम्पत्ति का केवल वास्तविक मूल्य ही वसूल कर सकता है; किन्तु सामुद्रिक बीमे में वह माल की मूल्य के अतिरिक्त जहाज आदि का व्यय तथा १० प्रतिशत या १५ प्रतिशत इसके ऊपर लाभ के रूप में भी ले सकता है। (२) अग्नि बीमे में बीमायोग्य हित बीमा कराते समय भी होना चाहिये और क्षति होते समय भी; किन्तु सामुद्रिक बीमे में इस हित का केवल क्षति के समय ही होना आवश्यक है।

अग्नि-बीमा के प्रसविदे के आवश्यक लक्षण

बीमे के प्रत्येक प्रकार के प्रसविदे की भाँति अग्नि-बीमे के प्रसविदे में, दो विशेष लक्षण होने चाहिये—पूर्ण विश्वास का व्यवहार और बीमायोग्य हित की उपस्थिति।

पूर्ण विश्वास—अग्नि-बीमे के प्रसविदे के दोनों पक्षों को पूर्ण विश्वास व्यवहार में लाना चाहिये, और दूसरे पक्ष को समस्त मूल तथ्यो को बता देना चाहिये। यह बीमा-पात्र पर विशेष रूप से लागू होता है क्योंकि बीमे के विषय के सम्बन्ध में उसकी पूरी जानकारी होना स्वाभाविक है। प्रस्ताव-पत्र में जो सूचना बीमा पात्र देता है, उसी के आधार पर बीमा कम्पनी बीमा बेचती है और प्रीमियम की दर निश्चित करती है। अतः बीमा-पात्र को आवश्यक रूप से सारे मूल तथ्य, जैसे मकान जिस सामग्री का बना हो उसका विवरण, प्रयोग के लिये तैयार रहने वाले अग्नि बुझाने के साधन, इमारत में रक्खे जाने वाले माल का स्वभाव, आसपास की इमारतों का स्वभाव और उनका प्रयोग बता देना चाहिये। किसी भी मूल तथ्य का गोपन प्रसविदे को दूषित कर देगा और दूसरा पक्ष यदि चाहे तो प्रसविदा भंग कर सकता है। बीमे-पात्र के बीमा-पत्र के

पूरे जीवन-काल में पूर्ण विश्वास रखना चाहिये और जोखिम के स्वभाव में परिवर्तन होते ही उसकी सूचना बीमा कम्पनी को दे देना चाहिये।

बीमायोग्य हित—*बीमा-पात्र का अग्नि बीमा के विषय में बीमायोग्य हित* भी होना चाहिये; नहीं तो प्रसविदा जुये की भाँति हो जायगा जो वैधानिक (legal) दृष्टि से विवर्जित है। किसी व्यक्ति का किसी सम्पत्ति में बीमायोग्य हित तब होता है जब कि उस सम्पत्ति के जल जाने से उसकी आर्थिक हानि हो और उसकी रक्षा से उसका आर्थिक हितवर्द्धन हो। ऐसा हित वैधानिक ढग से प्राप्त हो सकता है, जैसे वैधानिक स्वामित्व के कारण; यह न्याय-सिद्धांत (Equity) के अनुसार भी प्राप्त हो सकता है जब कि आर्थिक सम्बन्ध स्वामित्व से कम होता है जैसे किसी सम्पत्ति की जमानत पर ऋण देना। अतः एक मनुष्य अपनी सम्पत्ति का बीमा करा सकता है, ऋणदाता उस सम्पत्ति का जो उसके यहाँ गिरवी रक्खी गई हो, गोदामवाला अपने ग्राहक के माल का, ट्रस्टी ट्रस्ट के माल का, और एजेंट अपने प्रधान के माल का। यदि बीमा कम्पनी किसी सम्पत्ति का बीमा कर दे, तो वह उसका पुनर्बीमा करा सकता है।

§ २. अग्नि-बीमा कराने की रीति

टैरिफ तथा बिना टैरिफ वाली कम्पनी

बीमा-पात्र को पहले इस बात का निर्णय करना चाहिये कि वह किस कम्पनी से बीमा कराना चाहता है। अग्नि बीमा बहुत सी कम्पनियाँ बेचती हैं। इनमें से कुछ तो केवल अग्नि-बीमा ही करती हैं और कुछ और भी प्रकार के बीमे करती हैं। ये सब कम्पनियाँ दो भागों में बाँटी जा सकती है—टैरिफ वाली कम्पनी या आफिस और बिना टैरिफ वाली कम्पनी या आफिस।

टैरिफ वाली कम्पनियाँ—अग्नि-बीमा की कम्पनियाँ आपस में स्पर्धा को रोकने के लिए, जिसका परिणाम प्रीमियम की दर का घटना होता है, एक समिति बना लेती है। इसे टैरिफ समिति कहते हैं। यह समिति मुख्य-मुख्य *जोखिमों पर ली जाने वाली प्रीमियम की दर निश्चित कर* देती है और उसके सदस्यों को यही दरें वसूल करनी पड़ती हैं। इससे दरों में समानता हो जाती

है, स्पर्धा में रोक होती है और प्रीमियम की दर उचित स्तर पर रहती है। टैरिफ समिति के सदस्यों को टैरिफ कम्पनी या आफिस कहते हैं। अधिकांश अग्नि बीमा की कम्पनियाँ ऐसी समिति की सदस्य होती हैं।

बिना टैरिफ वाली कम्पनियाँ—अग्नि-बीमा की सभी कम्पनियाँ टैरिफ समिति की सदस्य नहीं बनतीं। ये बिना टैरिफ वाली कम्पनियाँ कहलाती हैं। यह समिति के नियम से बंधी नहीं होतीं और कम या अधिक जो भी चाहें, प्रीमियम की दर वसूल करती हैं। साधारणतया नई कम्पनियाँ यह चाहती हैं कि यदि वे पुरानी कम्पनियों से कुछ कम प्रीमियम लें तो उन्हें अच्छा व्यापार मिल जायगा, इसलिए वे टैरिफ समिति की सदस्य नहीं बनतीं। ऐसी कम्पनियाँ कभी-कभी बहुत कम प्रीमियम लेती हैं, जिससे कि वे सब दावों का भुगतान नहीं कर पातीं। अतः ऐसी कम्पनियों से बीमा लेना भय से शून्य नहीं। ऐसी कम्पनियाँ थोड़ी होती हैं।

बीमा कराना

(१) **प्रस्ताव-पत्र**—यह निश्चय कर लेने के पश्चात् कि बीमा-पत्र किस कम्पनी से खरीदना है, बीमा-पात्र एक प्रस्ताव-पत्र (Proposal Form) भरता है। यह रुक्का ही प्रसंविदे का आधार होता है और इसके भरने में पूर्ण विश्वास से काम लेना चाहिये। कोई भी मूल्य तथ्य—अर्थात् ऐसी बात जो समवतः कम्पनी के निर्णय पर प्रभाव डालने वाली हो—छिपाना नहीं चाहिये और कोई बात गलत भी नहीं कहनी चाहिये। सब मूल तथ्यों को साफ-साफ और ठीक-ठीक लिखना चाहिये। प्रत्येक प्रश्न का उत्तर ऐसा देना चाहिये कि उसका एक ही अर्थ निकल सके।

बीमा उतनी ही रकम का लेना चाहिये जो उपयुक्त हो। सम्पत्ति का विनाश हो जाने पर, उसके बाजार मूल्य के बराबर ही रकम वसूल की जा सकती है। अतः यह आवश्यक है कि बीमे की रकम सम्पत्ति के मूल्य से कुछ ही अधिक हो जिससे कि यदि विनाश के समय सम्पत्ति का बाजार मूल्य कुछ ऊँचा हो जाय, तो उसको भी वसूल किया जा सके।

(२) सदाचरण का प्रमाण—अग्नि-बीमे में नैतिक जोखिम बहुत होती है। बीमा-पात्र अपनी इमारत में लाभ कमाने की दृष्टि से स्वय ही आग लगा सकता है या कोई दूसरा व्यक्ति उसकी सपत्ति में ईर्ष्या से या किसी प्रकार का मतभेद हो जाने के कारण आग लगा सकता है। इसलिए बीमा कम्पनी इस बात का निश्चय कर लेना चाहती है कि स्वय बीमा पात्र सच्चा और ईमानदार हो। यदि वह उनका परिचित है, तब तो ठीक है। अन्यथा कम्पनी प्रस्तावक से यह प्रार्थना करती है कि वह अपने सदाचार का कुछ प्रमाण दे।

(३) सम्पत्ति का निरीक्षण—यदि जोखिम थोड़ी हो, तो कम्पनी सम्पत्ति का सावधानी से निरीक्षण नहीं करती। किन्तु यदि जोखिम अधिक हो, जो कि विभिन्न तथा विषम कारणों पर निर्भर होती है, तो विशिष्ट निरीक्षक (surveyors) सम्पत्ति का सावधानी से निरीक्षण करने तथा जोखिम की मात्रा का अनुमान लगाने के लिए भेजे जाते हैं। उन्हीं की रिपोर्ट के आधार पर कम्पनी प्रस्ताव को स्वीकार या अस्वीकार करती है। स्वीकार करने पर वह प्रीमियम को क्वोट (quote) करती है।

(४) प्रस्ताव की स्वीकृति—प्रस्ताव पत्र और निरीक्षण का रिपार्ट के आधार पर कम्पनी प्रीमियम की दर निश्चित करती है और बीमा पात्र को प्रीमियम अदा करने के लिए लिखती है। प्रीमियम अदा कर देने पर ही प्रसविदा पूर्ण होता है।

(५) आवरण पत्र (Cover Note)—प्रीमियम चुकता कर देने पर प्रसविदा पूर्ण हो जाता है और बीमा कम्पनी तुरन्त ही एक आवरण पत्र निर्गमित (issue) कर देती है। जब तक बीमा पत्र बन कर तैयार नहीं होता, तब तक आवरण पत्र ही पत्र धारक की रक्षा करता है।

(६) बीमा पत्र—बाद को कम्पनी बीमा-पत्र तैयार करके बीमा पात्र के पास भेज देती है।

प्रीमियम की दर

अग्नि-बीमा पत्रा पर ली जाने वाली प्रीमियम की दर अलग-अलग होती है। प्रीमियम की दर का निर्णय इमारत के स्वभाव, बीमा के विषय की किस्म

और स्वभाव, चारो ओर की इमारत का स्वभाव, अग्नि बुझाने के साधनो की प्राप्ति तथा अन्य ऐसी शर्तों के आधार पर किया जाता है। जहाँ आग लगने की सम्भावना कम होती है और जहाँ आग बुझाने के साधन अच्छे और सुलभ होते हैं, वहाँ प्रीमियम की दर कम होती है।

जोखिम तीन वर्गों में विभाजित की जाती है : साधारण, सकटजनक तथा अत्यन्त सकटजनक। साधारण जोखिम पर सबसे कम प्रीमियम की दर ली जाती है, अत्यन्त सकटजनक जोखिम पर सबसे अधिक; और सकटजनक जोखिम पर बीच की दर वसूल की जाती है। इन सब दरों को आधारभूत या प्रसामान्य दरें (Normal Rates) कहा जाता है। यदि जोखिम प्रसामान्य है, तो प्रीमियम की दर भी प्रसामान्य ही ली जाती है। किन्तु जोखिम प्रसामान्य से कम या अधिक हो, तो प्रीमियम की दर कम या अधिक कर दी जाती है। कोई इमारत कठिनता से जलनेवाली सामग्री की बनी हो और अग्नि बुझाने के साधन भी संतोषजनक और सुलभ हों, तो प्रीमियम की दर घटा दी जाती है। किन्तु यदि इमारत शीघ्र प्रज्ज्वलित होने वाली सामग्री की बनी हो या आसपास की इमारतें इस प्रकार की हों या अग्नि बुझाने के साधन प्राप्त न हों, तो प्रसामान्य दर से ऊँची दर वसूल की जाती है। अग्नि-बीमे की प्रीमियम निश्चित करने की प्रथा विशिष्ट और विषम होती है, अतः उसका इस स्थान पर विवेचन नहीं किया जाता।

§ ३. अग्नि-बीमा-पत्र और उसकी किस्में

अग्नि बीमा-पत्र में बीमा-पात्र का नाम और पता, बीमे की सम्पत्ति का पूरा विवरण, बीमे की रकम, आदि शर्तें दी जाती हैं। इस पर बीमा कम्पनी के किसी प्रतिनिधि का हस्ताक्षर अवश्य होना चाहिए और उस पर रसीदी टिकट भी लगा लेना चाहिये। बीमा पत्र की पीठ पर वे सब शर्तें छपी होती हैं जो प्रसंविदे को शासित करती हैं।

बीमा-पत्र की शर्तें

बीमा-पत्र की पीठ पर छपी हुई शर्तें बहुत महत्वपूर्ण होती हैं क्योंकि प्रस-

विदा इन्हीं के द्वारा शासित होता है। इनमें से मुख्य शर्तें निम्नलिखित हैं :

(१) मिथ्या विवरण, मिथ्या प्रतिनिधित्व या किसी मूल तथ्य को छिपाना बीमा-पत्र को विवर्जित (void) कर देगा।

(२) जोखिम में यदि कोई परिवर्तन हो तो उसकी सूचना कम्पनी को देनी चाहिये और बीमा-पत्र पर बेचान-लेख भी लिखवा लेना चाहिये।

(३) बीमा-पत्र निम्नलिखित की रक्षा नहीं करता : (अ) ट्रस्ट के माल की या कमीशन पर रक्खे हुये माल की, (आ) चीनी के बर्तन, जवाहिरात, पाण्डुलिपि, चित्र आदि, (इ) पैटर्न, माडिल और डिजाइनें, (ई) तमस्सुक, बाँड, हुन्डी, रुपया आदि, (उ) विस्फोटक पदार्थ या विस्फोट के द्वारा होने वाली क्षति, (ऊ) गर्मी द्वारा होने वाली क्षति, (ए) भूचाल, देश-शत्रु, या दङ्गों के द्वारा होने वाली क्षति।

(४) यदि बीमे की सम्पत्ति का किसी दूसरे व्यक्ति को हस्तांतरण हो जाय, तो बीमा पत्र पर कम्पनी का बेचान-लेख न कराने पर बीमा-पत्र समाप्त हो जाता है।

(५) क्षति होने पर उसकी लिखित सूचना शीघ्र ही कम्पनी को दे देनी चाहिये और १५ दिन के अन्दर क्षति का विवरण भी भेज देना चाहिये।

(६) यदि दावा कपटपूर्ण (fraudulent) हो, तो बीमे के समस्त लाभ लुप्त हो जाते हैं।

(७) कम्पनी विनष्ट सम्पत्ति को या तो दोबारा बनवा सकती है या नकद रुपया दे सकती है।

(८) जिस इमारत में क्षति हुई हो, कम्पनी को उसमें प्रवेश करने का अधिकार होगा और वह बीमे की सम्पत्ति को हटा सकती है और चाहे तो उसे अपने अधिकार में कर सकती है।

(९) यदि सम्पत्ति पर दोहरा बीमा कराया गया हो, तो कम्पनी क्षति के केवल आनुपातिक भाग की देनदार होगी।

(१०) यदि उसी सम्पत्ति पर कोई और बीमा कराया गया हो और उसमें

औसत वाक्य (average clause) लागू हो, तो वह इस बीमे पर भी लागू हो जायगा।

(११) यदि दावे के सम्बंध में कोई मतभेद हो, तो उसका पंचायत द्वारा निपटारा होगा।

(१२) यदि बीमा-पत्र विवर्जित हो जाय, तो अदा की गई प्रीमियम जब्त हो जायगी।

(१३) केवल कम्पनी की छपी रसीद ही मान्य होगी।

(१४) यदि कम्पनी किसी तीसरे पक्ष पर दावा करे, तो बीमा पात्र को कम्पनी की सहायता करनी होगी।

(१५) यदि किसी साधारण शर्त (warranty) को तोड़ा जाय, तो बीमा के अन्तर्गत कोई दावा नहीं किया जा सकता।

बीमा-पत्र की किस्में

अग्नि बीमा पत्र कई प्रकार के होते हैं। इनमें से चार किस्में प्रमुख हैं: विशिष्ट (Specific) बीमा पत्र, निर्धारित मूल्य का (Valued) बीमा-पत्र, विस्तृत (Floating) बीमा पत्र और औसत (Average) बीमा-पत्र। इनके अतिरिक्त कुछ और प्रकार के भी अग्नि-बीमा-पत्र होते हैं।

विशिष्ट बीमा पत्र (Specific Policy)—विशिष्ट बीमा-पत्र एक निश्चित रकम के लिए निर्गमित होता है और उस रकम तक क्षतिपूर्ति करने की बीमा कम्पनी प्रतिज्ञा करती है, बीमे की सम्पत्ति का मूल्य कुछ भी हो। उदाहरण के लिए, यदि कोई व्यक्ति अपने मकान का, जिसका मूल्य १०,०००) है, २,०००) के लिए बीमा कराये और अग्नि द्वारा उसे २,०००) की क्षति हो जाय, तो बीमा-पात्र बीमा कम्पनी से २,०००) माँग सकता है। यदि क्षति १,५००) ही हो, तो वह १,५००) रुपये वसूल कर सकता है। किन्तु यदि २,०००) से अधिक की हो, तो इस रकम से अधिक कुछ भी नहीं वसूल किया जा सकता। साधारणतया विशिष्ट बीमा-पत्र कम्पनी के मूल्य के बराबर ही लिया जाता है; और ऐसी दशा में प्रीमियम निर्धारित करते समय यह कल्पना कर ली जाती है कि वास्तव में ऐसा ही किया गया है।

निर्धारित मूल्य वाला (Valued) बीमा पत्र—जिस बीमा पत्र में बीमा कर्ता और बीमा-पात्र बीमे की सम्पत्ति के मूल्य पर पहले से ही सहमत हो जाते हैं, उसे निर्धारित मूल्य वाला बीमा पत्र कहते हैं, और सपत्ति का पूर्ण विनाश हो जाने पर बीमे की पूरी रकम अदा कर दी जाती है। ऐसी दशा में बीमे की रकम, आग लगने के समय सम्पत्ति का जो बाजार मूल्य हो उससे कम या अधिक हो सकती है अत यह बीमा पत्र क्षतिपूर्ति क सिद्धात के प्रति कूल पड़ता है। निर्धारित मूल्य वाला बीमा पत्र बहुधा ऐसी सम्पत्ति पर ही लिया जाता है जिसके बाजार मूल्य का आग लगने के समय पता लगाना कठिन हो, जैसे घर में प्रतिदिन काम में आने वाला सामान। ऐसा बीमा पत्र बीमा करने और कराने वाले दोना ही के लिये हानिकारक है। यदि आग लगने के समय सम्पत्ति का बाजार मूल्य बीमे की रकम से अधिक हो, तो बीमा पात्र को हानि उठानी पड़ती है किन्तु यदि यह कम हो, तो बीमा कम्पनी को अनावश्यक रकम अदा करनी पड़ती है।

विस्तृत बीमा पत्र (Floating Policy)—जो बीमा पत्र विभिन्न स्थानों पर रक्खे हुए माल की रक्षा करता है, वह विस्तृत बीमा पत्र कहलाता है। यह बहुधा डॉक या गोदाम म रक्खे हुए माल पर लिया जाता है जो कि कुछ ही समय बाद वहाँ से हटा दिया जाता है।

औसत बीमा-पत्र (Average Policy)—जिस बीमा पत्र म औसत वाक्य सम्मिलित होता है उसे औसत बीमा पत्र कहा जाता है। औसत वाक्य (Average Clause) के अनुसार बीमा कराने वाले को क्षति का वही अनुपात देना होता है जो बीमे की रकम और लगने के समय सम्पत्ति के बाजार मूल्य में होता है। मान लीजिये किसी घर का ५,०००) क लिये अग्नि बीमा कराया गया है और उसम आग लगने से २,०००) की क्षति हुई। यह भी मान लीजिये कि क्षति के समय उस मकान का बाजार मूल्य १०,०००) था। अत बीमा कराने वाले को केवल $\frac{५०००}{१००००}$ × रु० २०००=रु० १००० मिल सकेगा। यदि मकान का दोहरा बीमा कराया हो और किसी भी बीमा पत्र में औसत वाक्य हो, तो वह सब बीमा पत्रों में लागू हो जायगा।

अन्य प्रकार के बीमा-पत्र—इनके अतिरिक्त और भी बीमा-पत्र होते हैं जो अग्नि द्वारा होने वाली क्षति से तो नहीं, किन्तु अग्नि के परिणामों से बीमा-पात्र की रक्षा करते हैं। उदाहरण के लिये **किराया बीमा-पत्र** आग लग जाने के कुछ समय का किराया न मिलने से जो हानि होती है, उसको पूरा करता है। **लाभ-क्षति बीमा पत्र** आग लग जाने के कारण व्यापार रुक जाने से जो लाभ का ह्रास होता है, उसको पूरा करता है। **यातायात बीमा-पत्र** माल के एक स्थान से दूसरे स्थान को आते समय उनकी रक्षा करता है।

बीमा-पत्र का हस्तांकन (Assignment)

अग्नि-बीमे का प्रसंविदा बीमा करने और कराने वाले के बीच में एक व्यक्तिगत प्रसंविदा है। अतएव अग्नि-बीमा बीमा-पात्र की इच्छानुसार किसी दूसरे व्यक्ति को हस्तांकित नहीं किया जा सकता; और न सम्पत्ति के बेचने या दूसरे व्यक्ति को देने के साथ-साथ उससे सम्बंधित अग्नि-बीमा-पत्र ही दूसरे व्यक्ति को चला जाता है। अग्नि बीमा-पत्र केवल बीमा कम्पनी की अनुमति से ही हस्तांकित किया जा सकता है।

सम्पत्ति हस्तांतरण विधान (Transfer of Property Act) की धारा ४६, अग्नि बीमा की हुई सम्पत्ति के हस्तांतरित (transferee) के अधिकार की इस प्रकार व्याख्या करती है: "यदि स्थिर सम्पत्ति किसी प्रतिफल के बदले में हस्तांतरित की जाय और उस सम्पत्ति या उसके किसी भाग का हस्तांतरण के समय अग्नि द्वारा विनाश या हानि से रक्षा करने के लिए बीमा कराया हुआ हो, तो हस्तांतकिती (transferee) विनाश या हानि होने पर, किसी प्रतिकूल प्रसंविदे की अनुपस्थिति में, हस्तांतरक को बीमा-पत्र के अन्तर्गत मिलने वाला कुल रुपया माँग सकता है, या उसका वह भाग माँग सकता है जो सम्पत्ति के फिर से खड़ा करने के लिए आवश्यक हो।" उसी विधान की धारा १३५ हस्तांतकिती (assignee) के अधिकार की इस प्रकार व्याख्या करती है: "बेचान-लेख या अन्य किसी लेख द्वारा सामुद्रिक बीमे या अग्नि-बीमे को पाने वाले हस्तांतकिती को, जिसको कि हस्तांकन के समय सम्पत्ति के सब

अधिकार दे दिये जाते हैं, अभियोग चलाने के सब अधिकार भी हस्तांतरित या प्राप्त हो जाते हैं मानों कि बीमा पत्र में लिखा हुआ प्रसविदा उसी के साथ हुआ हो।"

अग्नि-बीमा-पत्र का पुनर्जीवन (Renewal)

अग्नि-बीमा पत्र बहुधा एक ही वर्ष के लिए निर्गमित किये जाते हैं। किन्तु बीमा-पत्र दोबारा प्रीमियम अदा करने से पुनर्जीवित किया जा सकता है। बीमा कम्पनियाँ पुनर्जीवन प्रीमियम अदा करने के लिए कुछ अनुग्रह दिवस (Days of Grace) देती हैं। यदि अनुग्रह दिवस में सम्पत्ति को आग लग जाय और उसके परिणाम स्वरूप उसकी विनाश या हानि हो, तो बीमा कम्पनी को क्षतिपूर्ति करनी पड़ेगी यद्यपि पुनर्जीवन प्रीमियम अदा नहीं की गई, किन्तु यदि इस बात का निश्चित प्रमाण हो कि बीमा पात्र का बीमा-पत्र पुनर्जीवित कराने का विचार ही नहीं था, तो बात दूसरी है।

कुछ अग्नि बीमा-पत्र एक साल से कम के होते हैं और उन्हें अल्पकालीन बीमा-पत्र कहते हैं। कुछ अग्नि-बीमा-पत्र एक साल से लम्बी अवधि के होते हैं और उन्हें दीर्घकालीन बीमा पत्र कहते हैं। पुनर्जीवन का सिद्धान्त दोनों पर समान रूप से लागू होता है।

§ ३. दावा और उसका भुगतान

दावा

यदि बीमे की सम्पत्ति में आग लग जाय और उसका विनाश या हानि हो जाय, तब बीमा कम्पनी पर दावा किया जा सकता है। यह बात स्पष्ट रूप से समझलेनी चाहिये कि दावा तभी किया जा सकता है, जब कि अग्नि प्रज्वलित (ignition) हो। यदि ज्वाला नहीं उठती तो यह माना जायगा कि आग नहीं लगी और फिर दावे का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। दावा करते समय जिस रीति का प्रयोग करना चाहिये, वह बीमा पत्र में लिखी होती है; और सफल दावा करने के लिये बीमा पात्र को उसका पूर्णतया पालन करना चाहिये।

दावे का भुगतान

हम नीचे दावा करने और उसके भुगतान की वास्तविक विधि बताते हैं :

(१) आग की सूचना—जैसे ही आग लगे बीमा पात्र को तुरन्त ही उसकी सूचना बीमा कम्पनी को देनी चाहिये। यह बहुत आवश्यक है। यदि बीमा पात्र ऐसा करने में भूल करे, तो उसका दावा करने का अधिकार लुप्त हो जाता है। साथ में, उसे अग्नि बुझाने के लिये उचित उपाय भी काम में लाना चाहिये।

(२) दावे का फार्म—आग की सूचना पाते ही बीमा कम्पनी बीमा-पात्र को एक दावे का फार्म (Claim Form) भेज देगी। इसे बहुत सावधानी से भरना चाहिये और सम्बन्धित सम्पत्ति का पूर्ण विवरण एवं क्षति का अनुमान ठीक-ठीक देना चाहिये। दावे का फार्म भर कर बीमा कम्पनी को भेज देना चाहिये।

(३) दावे का प्रमाण—दावा करते समय ऐसे प्रमाण, कागजात, रसीदें और लेख अवश्य देने चाहिये जो बीमा कम्पनी को सतुष्ट कर सकें।

(४) बीमा कम्पनी द्वारा निरीक्षण—सूचना मिलने पर कम्पनी सम्पत्ति का निरीक्षण करायेगी। वह इस बात का पता लगाने की चेष्टा करेगी कि आग का कारण क्या था, इमारत की दशा क्या थी, सम्पत्ति की क्या क्षति हुई, क्षति का अनुमान क्या है और ऐसी ही अन्य बातें जो उसके उत्तरदायित्व पर प्रभाव डालती हैं। बीमा कम्पनी को यह अधिकार है कि वह सम्पत्ति का निरीक्षण करे, जहाँ आग लगी है वहाँ प्रवेश कर सके और क्षति प्राप्त सम्पत्ति को अपने अधिकार में ले।

(५) वास्तविक क्षति का निश्चय—इसके पश्चात् क्षति की मात्रा का निश्चय किया जाता है। यह बीमा कम्पनी का काम है। यदि क्षति थोड़ी-सी हो तो बीमा कम्पनी वाले स्वयं ही उसका मूल्य आँक लेंगे और दावे का भुगतान कर देंगे। किन्तु यदि दावा बड़ी रकम का हो, तो निरीक्षकों (Surveyors) या निर्धारकों (Assessors) को इस काम के लिए रक्खा जाता है। निरीक्षक

या निर्धारक क्षति प्राप्ति सम्पत्ति का मूल्य आँकते हैं, अवशेष (Salvage) को अच्छे से अच्छे मूल्य पर बेचते हैं और बीमा करने और कराने वालों का आपस में निपटारा कराते हैं।

औसत वाक्य (Average Clause)

यदि बीमा-पत्र में औसत वाक्य हो, तो बीमा कम्पनी दावे का भुगतान करते समय उससे लाभ उठाने की चेष्टा करेगी। इस वाक्य के अनुसार, यदि क्षति के समय बीमे की रकम सम्पत्ति के वास्तविक मूल्य से कम हो, तो बीमा-पात्र शेष रकम का स्वय बीमा कर्ता समझ लिया जायगा। बीमा कम्पनी से वास्तविक क्षति का केवल वही अनुपात लिया जा सकता है जो बीमे की रकम और सम्पत्ति के मूल्य में उपस्थित है। उदाहरण के लिए, यदि किसी सम्पत्ति पर ६०००) का बीमा कराया गया हो, किन्तु क्षति के समय उसका बाजार मूल्य १०,०००) हो, तो ६०००) की क्षति होने पर बीमा कम्पनी केवल $\frac{६०००}{१००००} \times$ ६००० = रु० ३६०० देगी। यदि औसत वाक्य न हो तो, बीमा कम्पनी को ६०००) देना पड़ता।

एक से अधिक आग

यदि एक बीमा पत्र के जीवन-काल में बीमे की सम्पत्ति में एक से अधिक बार आग लगे तो क्या अवस्था होगी? क्या बीमा कम्पनी को दोनों बार पूरी-पूरी क्षति अदा करनी पड़ेगी? यह बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न है। ऐसी अवस्था में बीमा कम्पनी कुल मिला कर बीमे की रकम तक रुपया देगी, उससे अधिक नहीं। उदाहरण के लिये, मान लीजिए किसी इमारत का ५०००) के लिये बीमा कराया गया। इसे आग के द्वारा ३०००) का नुकसान हो जाता है; और उसके बाद फिर आग लगने पर उतनी ही क्षति और होती है। ऐसी दशा में बीमा कम्पनी कुल मिलाकर ५०००) अदा करेगी—३०००) पहले और २०००) बाद को। किंतु एक बार आग लगने पर बीमा पात्र और प्रीमियम देकर फिर पूरी रकम का बीमा करा सकता है।

दोहरा बीमा (Double Insurance)

कभी-कभी किसी सम्पत्ति पर एक से अधिक बीमा करा लिया जाता है।

इसे दोहरा बीमा कहते हैं। ऐसी दशा में प्रत्येक कम्पनी क्षति का आनुपातिक भाग (Rateable Proportion) ही अदा करेगी। मान लीजिए किसी इमारत का 'क' ने ५०००) के लिए, 'ख' ने ४०००) के लिए, 'ग' ने १०००) के लिये बीमा किया; तब क्षति का 'क' $\frac{५०००}{१००००}$ भाग, 'ख' $\frac{४०००}{१००००}$ भाग और 'ग' $\frac{१०००}{१००००}$ भाग अदा करेगा। बीमा-पात्र जिस क्रम और मात्रा में चाहे रुपया वसूल कर ले। किन्तु बीमा कम्पनियाँ आपस मे ले-देकर उपरोक्त अनुपात में क्षतिपूर्ति करेंगी। यह भी स्मरण रखना चाहिये कि यदि किसी भी बीमा-पत्र में औसत वाक्य हुआ, तो वह और भी बीमा-पत्रों पर लागू हो जायगा।

पुनर्स्थापन (Re-instatement)

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि बीमा करने और कराने वालों का क्षति-सम्बन्धी अनुमान भिन्न-भिन्न होता है। बीमा कम्पनी समझती है कि दावा अतिशयोक्तिपूर्ण (exaggerated) है। ऐसी अवस्था में वह नकद रुपया देने के स्थान पर सम्पत्ति को पुनर्स्थापित करा देती है। यह स्मरण रखना चाहिये कि पुनर्स्थापन का विकल्प (option) केवल बीमा-कर्ता को प्राप्त होता है; बीमा-पात्र कम्पनी को पुनर्स्थापन के लिये बाध्य नहीं कर सकता।

पंचायत (Arbitration)

कभी-कभी बीमा करने और कराने वाले में दावे के सम्बंध में मतभेद हो जाता है। ऐसी अवस्था में यदि मामला न्यायालय तक जाय तो भय यह होता है कि कम्पनी की बदनामी होगी और यह भी सम्भव है कि कम्पनियों पर जनता का विश्वास ही कम होने लगे। अतः प्रायः सभी बीमा-पत्रों में यह दिया होता है कि मतभेद होने पर मामला पंचायत के सुपुर्द कर दिया जायगा जिसका एक पंच कम्पनी नियुक्त करती है और दूसरा बीमा-पात्र। पंचों का निर्णय दोनों पक्षों को मानना पड़ता है। यदि दोनों पंच एकमत न हो सकें तो एक सरपंच चुन लेते हैं जिसका निर्णय अन्तिम होता है।

स्थान ग्रहण का सिद्धान्त (Subrogation)

बीमा-पात्र की क्षतिपूर्ति कर देने के पश्चात् बीमा कम्पनी को वे सब

अधिकार प्राप्त हो जाते हैं जो बीमा पात्र को तीसरे पक्ष के विरुद्ध प्राप्त हों। इसे स्थान ग्रहण का सिद्धान्त कहते हैं। इसका वर्णन हम पिछले अध्याय में कर चुके हैं।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१. एक गेहूँ के गोदाम का अग्नि बीमा कराने की क्या विधि होगी? अग्नि बीमा कराने का अधिकारी कौन कौन होता है? क्या अग्नि बीमा-पत्र हस्तांकित (assign) किया जा सकता है, (१९५५)

२. किन्हीं तीन प्रकार की अग्नि बीमा के विषय में वर्णन दो। (१९५४)

३. अग्नि बीमा प्रसंविदे में बीमा पात्र के क्या क्या उत्तरदायित्व होते हैं? स्पष्ट रूप से समझाइये। (उत्तर प्रदेश, १९५३)

४ मूल्यांकित तथा अमूल्यांकित अग्नि बीमा-पत्र में अन्तर बताइये। (उत्तर प्रदेश, १९५३)

५. अग्नि बीमा पत्रों में किस सम्पत्ति के मूल्य से अधिक या कम का बीमा कराने से क्या प्रभाव पड़ता है? उदाहरण सहित स्पष्ट रूप से वर्णन कीजिये। (उत्तर प्रदेश, १९५२)

६ अग्नि-बीमा पत्र क्या होता है? निर्धारित मूल्य और अनिर्धारित मूल्य वाले अग्नि बीमा पत्र में क्या अन्तर होता है? (यू० पी०, १९५१)

७ अग्नि-बीमे और जीवन बीमे की भिन्नताओं को स्पष्ट कीजिये। अग्नि-बीमा किस प्रकार कराया जाता है? (यू० पी०, १९४९, १९४६)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

८. अग्नि बीमा पत्र का स्वभाव पूर्णतया स्पष्ट कीजिये। ऐसे बीमा पत्र के परे किस प्रकार की क्षतियाँ रक्खी जाती हैं, और कौन-सी क्षतियाँ इसमें कभी भी शामिल नहीं हो सकतीं? पुनर्स्थापन वाक्य का क्या उद्देश्य होता है, (राजपूताना, १९५३)

६ अग्नि बीमा के प्रसविदे में प्रस्ताव के समय से दावे के भुगतान तक जिस विधि का पालन किया जाता है उस पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखिये। (राजपूताना, १९५२)

१०. "अग्नि बीमा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा है और इसमें अधिकतम सद्-विश्वास होना आवश्यक है।" इस कथन को समझाइये और इसके उदाहरण दीजिये। यह जीवन बीमे में कहाँ तक लागू होता है? (राजपूताना, १९५१)

११. अग्नि बीमा-पत्र का स्वभाव अच्छी तरह बताइये। कौन सी क्षतियाँ अग्नि-बीमा पत्र से सामान्यतया बहिष्कृत की जाती हैं और किस प्रकार की क्षति इसके अन्तर्गत नहीं आती? पुनर्स्थापन का क्या आशय है? (राजपूताना, १९४८)

१२. जो व्यक्ति आग से अपनी सम्पत्ति का बीमा कराता है, उसे किन जिम्मेदारियों का पूरा कराना आवश्यक है, जिससे उसका दावा मान लिया जाय? (राजपूताना, १९३९)

पटना, इन्टर कामर्स

१३ अग्नि बीमा कम्पनियाँ जो बीमा-पत्र बहुधा निर्गमित किया करती हैं उनकी व्याख्या कीजिये। (पटना, १९४९ पूरक)

१४ अनाज के किसी गोदाम का अग्नि-बीमा किस प्रकार कराया जा सकता है? इसका बीमा कौन करा सकता है? क्या अग्नि बीमा पत्र हस्तांकित किया जा सकता है? (पटना, १९४८ पूरक)

बिहार, इन्टर कामर्स

१५ अग्नि बीमा पत्र का अर्थ समझाइये। किस प्रकार की क्षति ऐसे बीमा-पत्र से सामान्यता और किस प्रकार की क्षति इससे सर्वदा परे रखनी पड़ती है? पुनर्स्थापन वाक्य (Re instatement clause) का क्या अर्थ है? (बिहार, १९५४)

बनारस, इन्टर कामर्स

१६ अग्नि बीमा क्या होता है? निर्धारित मूल्य वाले और अनिर्धारित मूल्य वाले अग्नि बीमा पत्र का भेद स्पष्ट कीजिये। (बनारस, १९५२)

सागर, इन्टर कामर्स

१७. अग्नि-बीमा-पत्र प्रमंडल विभिन्न प्रकार बीमापत्रों को निर्गमित करते हैं। उनकी व्याख्या कीजिये। क्षतिपूर्ति के लिये बीमा कराने वाले को क्या करना चाहिये? अग्नि-बीमा पत्र में औसत वाक्य (Average Clause) का क्या महत्त्व है? (सागर, १९५४)

अध्याय ४८

सामुद्रिक बीमा

§ १. प्रारम्भिक बातें

जल-मार्ग या थल-मार्ग से जाने वाले माल को बहुत से संकटों का सामना करना पड़ता है जिनसे रक्षा प्राप्त करने के लिए बीमा-पत्र खरीदा जा सकता है। थल-मार्ग से जाने वाले माल की रक्षा के लिए ही रेल और डाकखाने की बीमा-योजनाएँ स्थापित की गयी हैं। किन्तु थल-मार्ग में अधिक संकट नहीं होते; अतः इन योजनाओं का बहुत मूल्यवान् या कोमल वस्तुओं के सम्बन्ध में ही प्रयोग होता है। इसके विपरीत, समुद्र से जाने वाले माल को इतने अधिक और कठिन सकटों का सामना करना पड़ता है कि प्रायः सदैव उनका सामुद्रिक बीमा कराया जाता है।

समुद्र से जाने वाले माल के सामने बहुत से संकट आते हैं। जहाज का स्वामी इनमें से कुछ जोखिमों के लिए, उत्तरदायी अवश्य होता है किन्तु वह बहुत-सी जोखिमों के लिए, जिनका नाम जहाजी बिल्टी या चार्टर पार्टी के "अपवादित जोखिम वाक्य" (Excepted Perils Clause) में दिया होता है, उत्तरदायी नहीं होता। जहाजी कम्पनियों में स्पर्धा इतनी तीव्र होती जा रही है कि इस वाक्य में दी हुई जोखिमों की सख्या बराबर बढ़ती जा रही है। इन अपवादित जोखिमों के लिये, जिनके लिए जहाजी कम्पनी को उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता, सामुद्रिक बीमा पत्र खरीदा जाता है। जिन जोखिमों से सामुद्रिक बीमा-पत्र रक्षा करता है, उनमें से कुछ निम्नलिखित हैं: प्रकृतिजन्य संकट, देश-शत्रु द्वारा जहाज का पकड़ा जाना, अग्नि, कप्तान या मल्लाहों का जहाज अदृश्य कर देना, भयानक वायु आदि। पाठक को जहाजी बिल्टी में शामिल और सामुद्रिक बीमा-पत्र में शामिल होने वाली जोखिमों का अन्तर

समझ लेना चाहिये। जहाजी बिल्टी में केवल वही जोखिम शामिल की जाती हैं जो कि जहाजी बिल्टी के परे होती हैं। जहाँ जहाजी कम्पनी का उत्तरदायित्व समाप्त होता है, वहीं से बीमा कम्पनी के उत्तरदायित्व का प्रारम्भ होता है; और दोनों में एक ही जोखिम|सम्मिलित नहीं होती।

सामुद्रिक बीमा केवल माल पर ही नहीं लिया जाता किन्तु जहाज और जहाजी किराये की भी रक्षा कराया है।

सामुद्रिक बीमे का प्रसंविदा

सामुद्रिक बीमे के प्रसंविदे के अनुसार, बीमा-पात्र सामुद्रिक यातायात के सम्बन्ध में होने वाली क्षति की, निश्चित रीति से और निश्चित सीमा तक, पूर्ति करने का बीमा पात्र को आश्वासन देता है। यद्यपि कि सामुद्रिक बीमे का प्रसंविदा प्राथमिक रूप से सामुद्रिक सकटों से रक्षा करता है, पर कभी-कभी इसका क्षेत्र विस्तृत हो जाता है और यह सामुद्रिक यात्रा से सम्बन्धित भीतरी जल-यातायात और थल यातायात के सकटों से भी रक्षा प्रदान करता है।

जैसा पहले कहा जा चुका है, सामुद्रिक बीमे का प्रसंविदा क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा होता है; और इस दृष्टि से वह अग्नि-बीमे के समान होता है। अग्नि-बीमे में क्षतिपूर्ति वास्तविक क्षति की मात्रा तक सीमित होती है; क्षति से अधिक रुपया बीमा कम्पनी से वसूल करना गैरकानूनी है।।किन्तु सामुद्रिक बीमा मे बीमा-पत्र लेते समय ही माल का मूल्य दोनों पक्षों द्वारा निश्चित कर लिया जाता है और क्षतिपूर्ति इसी मूल्य के आधार पर की जाती है; अतः क्षति-पूर्ति वास्तविक क्षति से कम या अधिक हो सकती है।

थोड़ी-सी प्रीमियम के बदले में बीमा कर्ता बीमा पात्र को किसी हानि विनाश के रूप में निश्चित सकटों द्वारा, जिन्हें कभी-कभी "सामुद्रिक सकट" (Perils of the Sea) कहते हैं, होने वाली क्षति की पूर्ति की प्रतिज्ञा करता है। किन्तु जिन सकटों से रक्षा प्राप्त करने के लिए बीमा किया जाता है वे सब सामुद्रिक सकट नहीं होते जैसे सामुद्रिक यातायात सम्बन्धी थल-यात्रा के सकट, इसलिए इन सकटों को "बीमा कराये हुए सकट" (Perils insured against) कहना अधिक उपयुक्त जान पड़ता है।

सामुद्रिक बीमा का विषय

सामुद्रिक बीमा पत्र कथित सकटों से रक्षा करने के लिए (१) माल, (२) जहाज और (३) किराये पर लिया जाता है।

माल का बीमा (Cargo Insurance)—समुद्र मार्ग द्वारा जाने वाले माल को जिन सकटों का सामना करना पड़ता है और जिनकी रक्षा प्राप्त करने के लिये सामुद्रिक बीमा लिया जाता है, उनका वर्णन हम ऊपर ही कर चुके हैं।

जहाज का बीमा (Hull Insurance)—जिन सकटों का भय माल को होता है, उनका भय जहाज को भी होता है। जहाज बहुत मूल्यवान् होता है, इसलिये जहाजी कम्पनी प्रत्येक जहाज का सामुद्रिक बीमा करा लेती है।

किराये का बीमा (Freight Insurance)—किराये की रक्षा करने के लिए भी बीमा-पत्र खरीदा जाता है। किराया या तो पेशगी चुका दिया जाता है या जहाज के उद्दिष्ट बन्दरगाह तक पहुँच जाने पर चुकाया जाता है। यदि किराया पेशगी चुका दिया गया हो, तो माल की क्षति होने पर माल का स्वामी उस क्षति का भागी होगा, इसलिये वह माल के बीमे के साथ साथ किराये का भी बीमा करा लेता है—वह माल के मूल्य में किराये की रकम को जोड़ कर कुल योग पर बीमा करा लेता है। यदि किराया उद्दिष्ट बन्दरगाह पर देय हो, तो सामुद्रिक विधान के अनुसार यह माल के सुरक्षित रूप में उद्दिष्ट बन्दरगाह को पहुँचने पर ही माँगा जा सकता है। यदि माल मार्ग ही में नष्ट हो जाय और उद्दिष्ट बन्दरगाह तक न पहुँच सके तो जहाजी कम्पनी को किराया नहीं मिलता और उसे उतनी क्षति होती है। इस प्रकार की किराये की क्षति से अपनी रक्षा करने के लिये जहाजी कम्पनी सामुद्रिक बीमा खरीद लेती है। इसे किराये का बीमा कहते हैं।

§ २. सामुद्रिक बीमे के प्रसंविदे के आवश्यक तत्त्व

सामुद्रिक बीमे के प्रसंविदे के आवश्यक तत्त्व निम्नलिखित हैं : (१) बीमा-

योग्य हित; (२) मूल तथ्यों का स्पष्टीकरण; (३) जहाज की सामुद्रिक-योग्यता (Seaworthiness); (४) उपक्रम (Venture) का वैधानिक होना; और (५) पथ-भ्रष्ट न होना (Non deviation)। इनमें से अन्तिम तीन मानी हुई साधारण शर्तें (Implied Warranties) हैं।

बीमा-योग्य हित

बीमे की सम्पत्ति में बीमा-पात्र का बीमा योग्य हित अवश्य होना चाहिये; अन्यथा बीमे का प्रसंविदा जुए की भाँति हो जायगा जो विधान में विवर्जित है। किसी सम्पत्ति में किसी व्यक्ति का बीमा योग्य हित कब होता है जब कि माल के सुरक्षित अवस्था में पहुँच जाने पर उसका हित-वर्धन हो और माल के विनष्ट होने या उसमें हानि हो जाने पर उसको आर्थिक क्षति हो। बीमे के विषय में बीमा-योग्य हित क्षति के समय होना आवश्यक है, बीमा कराते समय उसका अस्तित्व होना या न होना महत्वहीन है। निम्नलिखित व्यक्तियों का बीमा-योग्य हित होता है :

१. जहाज के स्वामी का जहाज में।

२. माल के स्वामी का माल में।

३. किराया पाने के अधिकारी व्यक्ति का उतने किराये में जो कि माल के उद्दिष्ट बन्दरगाह पर पहुँच जाने पर देय हो।

४. सामुद्रिक बीमा-पात्र को बीमे के विषय में बीमा-योग्य हित प्राप्त हो जाता है और वह उसका पूर्णतः अथवा अशतः पुनर्बीमा करा सकता है।

५. यदि कोई व्यक्ति जहाजी बन्धक (Bottomry Bond) या माल बन्धक (Respondentia Bond) के आधार पर ऋण देता है, तो इसे अपने ऋण की रकम तक बीमा-योग्य हित प्राप्त हो जाता है।

६. किसी जहाज के कप्तान या मल्लाहों को अपनी मजदूरी की सीमा तक बीमायोग्य हित प्राप्त हो जाता है।

७. यदि बीमे का विषय गिरवी या बन्धक रख दिया जाय, तो बन्धकग्राही (Mortgagee) को जितना रुपया लेना होता है, उतनी रकम के लिये उसे बीमायोग्य हित प्राप्त हो जाता है।

८ ट्रस्टी को ट्रस्ट की हुई सम्पत्ति में बीमायोग्य हित होता है।

सद्विश्वास (Good Faith)

प्रत्येक बीमे के प्रसविदे की भाँति, सामुद्रिक बीमे के प्रसविदे का भी यह एक आवश्यक तत्व होता है कि सद्विश्वास से काम लिया जाय और सब मूल तथ्यों का स्पष्टीकरण कर दिया जाय। यदि पूर्ण सद्विश्वास से किसी पक्ष ने काम न किया, तो दूसरा पक्ष यदि चाहे तो प्रसविदे को विवर्जित कर सकता है। कपटपूर्ण व्यवहार करने वाले पक्ष के समस्त अधिकार जो उसे बीमा पत्र के अन्तर्गत प्राप्त होते हैं, विलुप्त हो जाते हैं। प्रत्येक पक्ष को चाहिये कि वह दूसरे पक्ष को सब मूल तथ्य बतला दे, अर्थात् वे सब बातें जो दूसरे पक्ष के निर्णय को प्रभावित कर सकती हैं। यदि कोई बात गुप्त रक्खी गयी हो तो दूसरा पक्ष अपनी इच्छानुसार प्रसविदे को विवर्जित कर सकता है। क्योंकि बीमा पत्र को बीमे की सम्पत्ति सम्बन्धी सभी बातों की जानकारी होती है, अत उसे स्पष्टीकरण का विशेष ध्यान रखना चाहिये।

मानी हुई साधारण शर्तें (Implied Warranties)

कुछ साधारण शर्तें सामुद्रिक बीमे के प्रसविदे में उपस्थित मान ली जाती है। इन्हें *मानी हुई साधारण शर्तें* कहते हैं। *साधारण शर्त* बीमा पात्र द्वारा की गई प्रतिज्ञा है कि कोई विशेष बात की जायगी अथवा नहीं की जायगी, या कोई आवश्यक शर्त (Condition) पूरी की जायगी, या जिसके द्वारा वह किन्हीं विशेष तथ्यों की उपस्थिति या अनुपस्थिति का कथन करता है। साधारण शर्तों (Warranties) का पूरा पूरा पालन करना नितान्त आवश्यक है। यदि बीमा पात्र किसी साधारण शर्त को भग करे, तो भग होने की तिथि से प्रसविदा विवर्जित हो जाता है। साधारण प्रसविदे में साधारण शर्त के भग होने से दोषी व्यक्ति दूसरे पक्ष की क्षतिपूर्ति का उत्तरदायी हो जाता है, किन्तु सामुद्रिक बीमे के प्रसविदे में ऐसी दशा में निर्दोषी पक्ष अपने उत्तरदायित्व से पूर्णत. मुक्त हो जाता है। कुछ साधारण शर्तें प्रसविदे में स्पष्ट रूप से लिख दी जाती हैं। इन्हें स्पष्ट साधारण शर्तें (Express Warranties)

कहते हैं। कुछ साधारण शर्तें ऐसी होती हैं जो कि प्रसंविदे में लिखी नहीं जातीं किन्तु जिनका अस्तित्व मान लिया जाता है; इन्हें मानी हुई साधारण शर्तें कहते हैं। स्पष्ट साधारण शर्तों का वर्णन हम आगे चलकर करेंगे। यहाँ हम केवल तीन मानी हुई साधारण शर्तों—जहाज की समुद्र-योग्यता, उपक्रम की वैधानिकता और जहाज की पथानुकूलता—पर प्रकाश डालेंगे।

जहाज की समुद्र-योग्यता

यह मान लिया जाता है कि बीमा-पात्र जहाज की समुद्र-योग्यता का आश्वासन देता है। जहाज समुद्र-योग्य तब कहलाता है जब कि वह हर प्रकार से बीमे की सम्बधित यात्रा में सामने आने वाले साधारण सामुद्रिक संकटों का सामना करने के लिए न्यायतः (reasonably) समर्थ हो। जहाज को रवाना होते समय समुद्रयोग्य होना चाहिये; और यदि यात्रा कई भागों में बँटी हो, और प्रत्येक विभाग में अलग-अलग तैयारी आवश्यक हो, तो प्रत्येक विभाग के आरम्भ में उसे समुद्र-योग्य होना चाहिये।

उपक्रम की वैधानिकता (Legality)

यह भी एक मानी हुई साधारण शर्त होती है कि बीमे से सम्बन्धित उपक्रम वैधानिक है और जहाँ तक बीमा-पात्र का अधिकार है, उपक्रम वैधानिक रीति से ही होगा। यदि उपक्रम अवैधानिक हो जाय, तो बीमे का प्रसंविदा विवर्जित हो जाता है।

पथानुकूलता (Non-deviation)

तीसरी मानी हुई साधारण शर्त के अनुसार बीमा-पात्र यह आश्वासन देता है कि जहाज पथ-भ्रष्ट नहीं होगा, अर्थात् बीमा पत्र में जिस मार्ग की कल्पना की गई है उस मार्ग से वह अलग नहीं होगा। हम पथानुकूलता के प्रश्न पर आगे चल कर और प्रकाश डालेंगे।

§ ३. सामुद्रिक बीमा कराने की रीति

अब हम सामुद्रिक बीमा कराने की वास्तविक रीति का वर्णन करेंगे। कम्पनी से और लायड समिति (Lloyds Association) से बीमा खरीदने की

रीतियाँ अलग अलग होती हैं। बीमा कम्पनी एक साधारण संयुक्त पूँजी की कम्पनी होती है जो सामुद्रिक बीमा बेचने का काम करती है। हमारे देश में प्रायः समस्त सामुद्रिक बीमे का व्यवसाय कम्पनियों के ही हाथ में है। किन्तु लन्दन में कम्पनियाँ और लायड समितियाँ, दोनों ही सामुद्रिक बीमे के क्षेत्र में महत्व-पूर्ण स्थान ग्रहण किये हुये हैं। लायड समिति बीमा कर्ताओं की समिति होती है जो अपनी व्यक्तिगत हैसियत में बीमा बेचते हैं। संसार में जहाँ भी ऐसी समितियाँ पाई जाती हैं, व लन्दन की लायड समिति के आधार पर बनाई गई हैं।

बीमा कम्पनी

बीमा कम्पनी से बीमा खरीदने की रीति इस प्रकार होती है :

१. सबसे पहले बीमा खरीदने के इच्छुक व्यक्ति को चाहिये कि वह कुछ कम्पनियों से जोखिम के बीमे के लिए क्वोटेशन माँगे। इनमें से वह सबसे कम क्वोटेशन वाली कम्पनी को चुनेगा और उससे बीमा करायेगा।

२. वह एक प्रस्ताव-पत्र भरेगा। इसमें वह जोखिम सम्बन्धी समस्त विवरण लिख देगा। उसे अपना नाम, जहाज का नाम, यात्रा, माल का स्वभाव और उसकी मात्रा, बीमे की रकम आदि बातें लिखनी पड़ती हैं। यह फार्म भर कर बीमा कम्पनी को सीधा या एजेंट के द्वारा भेज दिया जाता है। माल के मूल्य में १०% लाभ के लिए जोड़ कर कुछ रकम के लिए बीमा कराया जाता है।

३. प्रस्ताव पत्र और प्रीमियम मिलने पर बीमा कम्पनी जोखिम स्वीकार करती है। यह ठीक रूप में बीमा पत्र बना कर बीमा-पात्र को भेज देती है।

लायड समिति

लायड समिति व्यक्तिगत बीमा-कर्ताओं की एक संस्था होती है। कुछ काल बीते एक लायड नाम के महाशय ने लन्दन में एक कहवाघर खोला वहाँ जहाजों से सम्बन्धित व्यक्ति कहवा पीने के लिए एकत्रित हुआ करते थे। अपने ग्राहकों की सुविधा के लिये लायड महाशय ने जहाज सम्बन्धी समाचार

मँगाना भी आरम्भ कर दिया। धीरे-धीरे इसी कहवाघर ने वर्तमान रूप धारण कर लिया; और आज यह सङ्गठन सामुद्रिक बीमे के लिए संसार में एक शक्तिशाली सङ्गठन बन गया है। प्रत्येक जोखिम का कई बीमा-कर्ता बीमा करते हैं। प्रत्येक बीमा-कर्ता जोखिम के एक अंश का ही बीमा करता है। यह बीमा कम्पनी के विपरीत बात है क्योंकि एक कम्पनी पूर्ण जोखिम का बीमा अकेले ही करती है। लायड कम्पनी में बीमा कराने की रीति इस प्रकार है :—

१. जो व्यक्ति बीमा कराना चाहता है उसे पहले एक दलाल को नियुक्त करना पड़ता है जिसे वह जोखिम सम्बंधी सम्पूर्ण विवरण दे देता है और बीमे की रकम उसे बता देता है। कम्पनी से बीमा लेते समय दलालों को बीच में डालना आवश्यक नहीं है, किन्तु लायड में बिना इसके काम ही नहीं चल सकता।

२. आदेश मिलने पर दलाल जोखिम का पूर्ण विवरण एक पर्ची (Slip) में लिख लेता है। उसमें बीमे के माल, उसके मूल्य, जहाज का नाम, माल लदाने और उतारने वाले बन्दरगाहों का नाम आदि बातें लिखी जाती हैं। वह इस पर्ची को एक बीमा-कर्ता को दिखाता है जो उस पर प्रीमियम की दर लिख देता है। यदि यह दर स्वीकार कर ली जाती है, तो बीमा-कर्ता पर्ची पर अपना हस्ताक्षर कर देता है और जितनी रकम के लिए वह बीमा करना चाहता है वह रकम भी लिख देता है। दलाल बीमा-कर्ताओं के पास पर्ची घुमाता रहता है जब तक कि पूरी रकम का बीमा न हो जाय। प्रत्येक बीमा कर्ता उतनी ही रकम के लिये उत्तरदायी होता है, जो वह लिखता है।

३. तीसरा काम पर्ची से बीमा-पत्र बनाने का होता है। इस पर सब बीमा-कर्ता हस्ताक्षर करते हैं। दलाल प्रीमियम वसूल करके बीमा-पत्र बीमा-पात्र को सौंप देता है। दलाल को प्रीमियम का १०% भाग अपने कमीशन के रूप में बीमा-कर्ताओं से मिलता है।

§ ४. बीमा-पत्र और उसकी किस्में

सामुद्रिक बीमा-पत्र

जिस कागज में सामुद्रिक बीमे के प्रसंविदे की समस्त शर्तें लिखी होती हैं,

वह सामुद्रिक बीमा पत्र कहलाता है। यह बीमे के विषय के यातायात में सामने आने वाले कथिन सकटो से रक्षा करने के लिये क्षतिपूर्ति का प्रसंविदा होता है। सामुद्रिक बीमा पत्र का स्वरूप बहुत पुराना है और पूर्वजों ने इसका निर्माण किया था। अतः यह वर्तमान अवस्थाओं के पूर्ण रूप से अनुकूल नहीं; किन्तु एक बड़ा लाभ यह है कि दीर्घकाल से इसका प्रयोग करते-करते इसके प्राय: प्रत्येक शब्द का अर्थ स्थिर हो गया है। यही कारण है कि यह स्वरूप|पुराना होने पर भी अभी नहीं त्यागा गया और कदाचित् भविष्य में न त्यागा जाय।

सामुद्रिक बीमा-पत्र का हस्तांकन (Assignment)

यदि बीमा पत्र हस्ताकन का निषेध न करे, तो सामुद्रिक बीमा पत्र बीमा-पात्र किसी भी व्यक्ति को हस्ताकित कर सकता है। हस्तातकिनी (Assignee) के अपने नाम में बीमा पत्र के अन्तर्गत अभियोग चलाने का अधिकार प्राप्त हो जाता है। हस्ताकन बेचान-लेख (endorsement) द्वारा या अन्य किसी प्रचलित रीति द्वारा किया जा सकता है। साधारणतया माल भेजने वाला अपने नाम में बीमा पत्र खरीद लेता है और बाद को माल खरीदने वाले या उसके एजेन्ट के नाम हस्ताकित कर देता है।

सामुद्रिक बीमा पत्र कई प्रकार का होता है। उसकी मुख्य किस्मों का वर्णन नीचे किया जाता है।

यात्रा बीमा पत्र (Voyage Policy)

यात्रा बीमा पत्र वह होता है जो बीमे के विषय का किसी निश्चित यात्रा के लिये बीमा करता है, जैसे कलकत्ते से टोकियो तक या लन्दन से बम्बई तक। ऐसा बीमा पत्र बहुधा माल पर लिया जाता है, जहाज पर नहीं।

समय बीमा पत्र (Time Policy)

जो बीमा पत्र एक निश्चित समय के लिये लिया जाता है, उसे समय बीमा-पत्र कहते हैं, जैसे जनवरी १ से दिसम्बर ३१ तक। समय बीमा पत्र की

अधिकतम अवधि बारह महीने हो सकती है, इससे लम्बी अवधि का बीमा पत्र अमान्य (invalid) होता है। ऐसा बीमा पत्र साधारणतया जहाज का कराया जाता है क्योंकि प्रत्येक यात्रा के लिये बार बार बीमा कराने के स्थान पर एक समय के लिये बीमा कराने में जहाजी कम्पनी को सुविधा होती है।

मिश्रित बीमा पत्र

मिश्रित बीमा-पत्र में समय और यात्रा बीमा पत्रों, दोनों ही के लक्षण विद्यमान होते हैं। यह बीमे के विषय की निश्चित बन्दरगाहों के मध्य में निश्चित अवधि तक रक्षा करता है। यह अधिकतर निश्चित बन्दरगाहों के बीच में आने-जाने वाले जहाजों पर ही लिया जाता है।

निर्धारित मूल्य वाला बीमा पत्र

जिस बीमा-पत्र में सपत्ति का मूल्य स्पष्टतया घोषित कर दिया जाता है, उसे निर्धारित मूल्यवाला बीमा-पत्र (Valued policy) कहते हैं। बीमे की रकम, माल की लागत में निम्नलिखित रकमें, जोड़कर मालूम की जाती हैं (१) किराया और जहाजी व्यय आदि, (२) लाभ के लिये १०% या १५%। बीमा पत्र का घोषित मूल्य क्षति का माप होता है। यदि माल का सम्पूर्ण विनाश हो जाय तो बीमा कम्पनी इसी घोषित मूल्य की देनदार हो जाती है, और यदि माल की अंशत हानि हो जाय, तो इसी मूल्य के आधार पर कम्पनी का उत्तरदायित्व स्थिर किया जाता है। निर्धारित मूल्य वाले बीमा पत्र बहुत प्रचलित हैं।

अनिर्धारित मूल्य वाला बीमा पत्र (Unvalued Policy)

जिस बीमा पत्र में सम्पत्ति का मूल्य नहीं लिखा जाता, प्रत्युत वह बाद को पता लगाने और प्रमाणित करने के लिए छोड़ दिया जाता है, उसे अनिर्धारित मूल्य वाला बीमा पत्र कहते हैं। ऐसी दशा में माल का बीमा योग्य मूल्य (Insurable Value) क्षति का माप माना जाता है। माल की लागत में

किराया और जहाजी खर्चे जोड़कर बीमायोग्य मूल्य मालूम किया जाता है, इसमें लाभ के लिए कुछ भी नहीं जोड़ा जाता। यदि पूर्ण क्षति हो जाय, तो बीमा कम्पनी से बीमा योग्य मूल्य वसूल किया जा सकता है; और यदि आंशिक क्षति हो, तो बीमा-योग्य मूल्य के आधार पर क्षति की मात्रा नापी जाती है। ऐसे बीमा-पत्रों का चलन बहुत ही कम है।

विस्तृत (Floating) बीमा-पत्र

विस्तृत बीमा-पत्र कई जहाजी लदानों (shipments) की रक्षा करने के लिए एक खास रकम के लिए लिया जाता है—जहाज का नाम और लदान सम्बन्धी अन्य विवरण बाद को घोषित किये जाते हैं। ऐसा बीमा-पत्र बहुधा ऐसे व्यापारी ही लेते हैं जो किसी खास बन्दरगाह को माल बहुधा भेजते रहते हैं। इसके दो लाभ होते हैं: (१) बार-बार बीमा खरीदने की असुविधा दूर हो जाती है; और (२) प्रीमियम की दर भी सस्ती हो जाती है। ऐसे बीमा पत्र को खुला बीमा-पत्र (Open Policy) या घोषित बीमा-पत्र (Declaration Policy) भी कहते हैं।

जुए वाला (Wager बीमा-पत्र

जुए वाला बीमा-पत्र वह होता है जिसके अन्तर्गत बीमा-पात्र का बीमे के विषय में कोई बीमायोग्य हित नहीं होता या जिसके अन्तर्गत बीमा-कर्ता बीमा-योग्य हित प्रमाणित नहीं कराता। ऐसे बीमा-पत्रों को **बीमायोग्य हित रहित पत्र** (Policy Proof of Interest या P. P. I. या Interest or No Interest) कहते हैं। ऐसा प्रसविदा जुए के समान होता है; अतः इसे जुए वाला बीमा-पत्र कहते हैं। इसके अन्तर्गत किसी न्यायालय में अभियोग नहीं चलाया जा सकता; और यदि बीमा-कर्ता अपना उत्तरदायित्व न चुकाये, तो उस पर कोई कानूनी कार्रवाई नहीं की जा सकती। किन्तु अधिकतर बीमा-कर्ता अपनी प्रतिष्ठा-बनाये रखने के लिए अपने उत्तरदायित्व के अनुसार काम करते हैं। इसलिए इन्हें प्रतिष्ठा बीमा-पत्र (Honour Policy) भी कहा जाता है।

COPY OF LLOYD'S FORM OF POLICY

Be it known that

S G

£

as well in own Name, as for and in the Name and Names of all and every other *person or persons to whom the same doth,* may, or shall appertain in part or in all, doth make assurance and cause and them and every of them to be insured, lost or not lost, at and from upon any kind of Goods and Merchandises, and also upon the Body, Tackle, Apparel, Ordnance, Munition, Artillery, Boat and other Furniture, of and in the good Ship or Vessel called the whereof is Master, under God, for this present voyage,

or whosoever else shall go for Master in the said Ship, or whatsoever other Name or Names the same Ship, or the Master thereof, is or shall be named or called beginning the adventure upon the said Goods and Merchandises from the loading thereof abroad the said Ship

upon the said ship, etc,

and shall so continue and endure during her Abode there, upon the said Ship etc and further, until the said ship, with her Ordnance Tackle, Apparel, etc, and Goods, and Merchandises whatsoever shall be arrived at

Upon the said Ship, etc, until she hath moored at Anchor Twenty four Hours in good Safety, and upon the Goods and Merchandises until the same be there discharged and safely landed and it shall be lawful for the said Ship, etc., in this Voyage to proceed and sail to and stay at any ports or Places whatsoever

without Prejudice to this Insurance The said ship, etc, Goods and Merchandises, etc, for so much as concerns the Assured by Agreement between the Assured and Assurers in this Policy are and shall be valued at

TOUCHING the Adventures and Perils which we the Assurers are contented to bear and do take upon us in this Voyage,

they are, of the Seas Men of-war, Fire, Enemies, Pirates, Rovers Thieves, Jettisons, Letters of Mart and Countermart, Surprisals, Takings at Sea, Arrests, Restraints, and Detainment of all Kings, Princes and People, of what Nation, Condition, or Quality soever, Barratry of the Master and Mariners, and of all other Perils Losses, and Misfortunes that have or shall come to the Hurt, Detriment or Damage of the said Goods and Merchandises and Ship, etc, or any part thereof, and in case of any Loss or Misfortune, it shall be lawful to the Assured, their Factors, Servants and Assigns to sue, labour, and travel for, in, and about the Defence, Safeguard and Recovery of the said Goods and Merchandises and Ship, etc, or any part thereof without Prejudice to this Insurance, to the Charges whereof we, the Assurers, will contribute, each one according to the Rate and Quantity of his sum herein assured And it is especially declared and agreed that no acts of the Insurer or Insured in recovering, saving, or preserving the property insured, shall be considered as a waiver or acceptance of abandonment And it is agreed by us, the Insurers, that this Writing or Policy of Assurance shall be of as much Force and Effect as the surest Writing or Policy of Assurance heretofore made in Lombard Street, or in the Royal Exchange, or elsewhere in London

Warranted nevertheless free of capture, seizure and attention, and the consequences thereof or of any attempt, threat, piracy excepted and also from all consequences of hostilities or warlike operations, whether before or after declaration of war

And so we the Assurers are contented, and do hereby promise and bind ourselves, each one for his own parts our Heirs, Executors, and Goods, to the Assured, their Executors, Administrators, and Assigns, for the true Performance of the Promises, confessing ourselves paid the Consideration due unto us for this Assurance by the Assured

at and after the Rate of

IN WITNESS whereof, we the Assurers have subscribed our Names and Sums assured in

N B —Corn Fish, Salt, Fruit, Flour, and Steel are warranted free from Average, unless general, or the Ship be stranded,

Sugar, Tobacco, Hemp, Flax, Hides, and Skines are warranted free from Average under Five Pounds per cent; and all other Goods, also the Ship and Freight, are warranted free from Average under Three Pounds per cent unless general, or the Ship be stranded.

§ ५. सामुद्रिक बीमा-पत्र के वाक्य

हमने ऊपर के लायट के सामुद्रिक बीमा-पत्र की एक प्रति दी है। पाठकों को चाहिये कि वे उसको अच्छी तरह मनन करें। हम इस बीमा-पत्र के विभिन्न वाक्यों का नीचे विवेचन करते हैं।

१. बीमा-पत्र का नाम

सामुद्रिक बीमे पत्र के प्रारम्भिक वाक्य होते हैं।

"विदित हो कि (Be it known that)........."

रिक्त स्थान बीमा-पत्र या उसके एजेंट का नाम भरने के लिए होता है। इस वाक्य में बीमा-पत्र के हस्ताकन का भी आयोजन किया जाता है जिससे कि यदि कोई व्यक्ति बीमा के विषय में बाद को बीमा-योग्य हित प्राप्त कर ले, तो वह इस बीमा-पत्र से लाभ उठा सके।

२. क्षति हुई हो या न हुई हो (Lost or Not Lost)

कभी-कभी व्यापारी या तो माल रवाना हो जाने के बाद इस बात की सूचना प्राप्त करने के कारण या बीमा कराने का समय न मिलने के कारण, माल रवाना हो चुकने के पश्चात् बीमा कराता है। ऐसी अवस्था में बीमा करने और कराने वाले दोनों ही बीमा के विषय की सुरक्षा या हानि से उस समय अनभिज्ञ होते हैं; अतः बीमा पत्र में हानि हुई हो या न हुई हो, यह वाक्य सम्मिलित कर लिया जाता है, जिसके अनुसार बीमा-कर्ता इस बात की प्रतिज्ञा करता है कि यदि विषय को बीमा कराने के पूर्व ही क्षति पहुँच चुकी हो, तब भी वह उसकी पूर्ति करेगा। इस प्रकार इस वाक्य का प्रभाव भूतकालीन (retrospective) होता है। किन्तु यह आवश्यक है कि बीमा करने और कराने वाले दोनों ही माल के सुरक्षित या क्षति-प्राप्त होने से पूर्णतया अनभिज्ञ हों। यदि बीमा-पात्र यह जानते हुये कि माल को क्षति पहुँच चुकी है,

बीमा कराता है, तो वह गोपन (concealment) का दोषी है और सद्-विश्वास का खडन करता है जिसके परिणामस्वरूप बीमा विवर्जित हो जाता है। इसके विपरीत, यदि बीमा-कर्ता यह जानते हुये कि माल सुरक्षित अवस्था में उद्दिष्ट स्थान को पहुँच गया है, बीमा करे, तो यह दूसरे पक्ष को किसी भी प्रकार की रक्षा प्रदान नहीं करता और उसे प्रीमियम लौटानी पड़ेगी। इस वाक्य का प्रभाव तभी हो सकता है जब कि दोनो पक्ष पूर्ण सद्विश्वास से काम लें।

३. यात्रा का वर्णन

दूसरा वाक्य "पर और से" (At and From) वाक्य कहलाता है और यह यात्रा का वर्णन करता है। यात्रा का वर्णन या तो "अमुक बन्दरगाह पर और से" कह कर किया जाता है या "अमुक बन्दरगाह से" कह कर किया जाता है। पहली अवस्था में बीमे के विषय की रक्षा उसके बन्दरगाह में रक्खे रहने के समय एव वहाँ से रवाना होने के समय से होती है। किन्तु "बन्दर-गाह से" वाले बीमे का क्षेत्र सकुचित होता है और वह विषय की रक्षा माल के बदरगाह से रवाना होने के समय से करता है। मान लीजिये रामदास अपने जहाज का बीमा "बम्बई पर और से लन्दन तक" कराता है, तो बीमा-पत्र जहाज की रक्षा बम्बई बन्दरगाह म रहने के समय मे और उस बन्दरगाह से रवाना होने के समय से रक्षा प्रदान करेगा। यदि जहाज बम्बई बन्दरगाह में पड़े पड़े किसी कारण से नष्ट हो जाय, तो बीमा कम्पनी को क्षति पूर्ति करनी पड़ेगी। किन्तु यदि बीमा-पत्र में "बम्बई से लन्दन तक", यह लिखा हो, तो जहाज के बम्बई से रवाना होने के समय से ही बीमा आरम्भ होगा, और यदि जहाज रवाना होने के पूर्व ही नष्ट हो जाय, तो बीमा कम्पनी उसकी देनदार नहीं होगी।

जब जहाज उद्दिष्ट बन्दरगाह को पहुँच जाता है, उसके २४ या ३० घटे बाद तक बीमा काल जारी रहता है। अतः जब दूसरा बीमा-पत्र, पहले बीमा पत्र की अवधि समाप्त होने के पश्चात् लिया जाता है, तब उसमें इस प्रकार का आयोजन सम्मिलित कर लिया जाता है : "रक्षा पूर्व बीमा पत्र की अवधि

समाप्त हो जाने के पहले आरम्भ नहीं होगी।" इससे यह लाभ होता है कि एक ही समय में बीमा के विषय पर दो बीमा पत्र नहीं चालू होते।

ये शब्द केवल यात्रा बीमा पत्र में ही काम आते हैं, अर्थात् उन्हीं बीमा पत्रों में जो कि किसी निश्चित यात्रा के लिये जाते हैं। समय बीमा पत्रों में, जो किसी निश्चित समय के लिये जाते हैं, रक्षा आरम्भ तथा अन्त होने की तिथि और घटा दिये रहते हैं।

४. जहाज और कप्तान का नाम

उपरोक्त वाक्य के पश्चात् जहाज और कप्तान का नाम लिखने के लिए स्थान रिक्त छूटा रहता है। बीमा पत्र में जहाज का नाम बहुत महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि माल के बीमे में बीमा कर्ता की अनुमति के जहाज नहीं बदला जा सकता, चाहे दूसरा जहाज पहले से कितना ही अच्छा क्यों न हो। किंतु यदि पहले वाले जहाज को कुछ हानि हो जाय और माल किसी दूसरे जहाज पर रखना पड़े, तो उससे बीमा पत्र दूषित नहीं होता। जहाज के नाम के पश्चात् कप्तान का नाम लिखने के लिये स्थान होता है। किंतु यह स्थान बहुधा खाली छोड़ दिया जाता है।

५. जोखिम का आदि और अन्त

यह वाक्य जोखिम का आदि और अन्त बताता है। इसकी जहाज और माल के सम्बध में हम अलग-अलग विवेचना करते हैं।

जहाँ तक जहाज का सम्बध है, जोखिम का आरम्भ "से और तक" वाक्य द्वारा निर्धारित होता है। बीमा पत्र जहाज के उद्दिष्ट बंदरगाह में पहुँच जाने और उसके पश्चात् चौबीस घंटे तक सुरक्षित अवस्था में वहाँ लंगर डाले रहने तक जहाज की रक्षा करता रहता है। बीमा पत्र जहाज के लंगर डालने के समय से चौबीस घंटे बीत जाने पर ही समाप्त होता है।

माल (और किराये) के सम्बध में, जोखिम का आरम्भ—जब तक विपरीत समझौता न हो—माल के जहाज पर लादने के समय से होता है। जब तक माल सुरक्षापूर्वक उतर नहीं जाता, तब तक जोखिम जारी रहती है। जब माल

सुरक्षापूर्वक-उचित समय में और सामान्य तरीके से जहाज से उतर आता है, तब बीमा-पत्र समाप्त होता है।

६ स्पर्श और ठहराव (Touch and Stay : पथ-भ्रष्टता (Deviation)

इसके पश्चात् वाला वाक्य जहाज को आवश्यकतानुसार विभिन्न बंदरगाहों पर कोयला लेने, माल उतारने या अन्य किसी काम के लिए, रुकने का अधिकार देता है। यह वाक्य इस प्रकार होता है—

"और कथित जहाज को, इस यात्रा में किसी भी बंदरगाह या स्थान को स्पर्श करना और वहाँ ठहरना, बिना बीमे को दूषित किये हुए, वैधानिक होगा।"

इस वाक्य से यह प्रतीत होता है कि यह जहाज को किसी भी बंदरगाह पर रुकने का असीमित अधिकार दे देता है, किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है। इस अधिकार की तीन महत्वपूर्ण सीमाएँ हैं : (१) जिन बन्दरगाहों पर जहाज रुके, वे यात्रा के साधारण मार्ग में होने चाहिये। (२) उन पर भौगोलिक क्रम के अनुसार ही रुकना चाहिये। उदाहरण के लिए, बम्बई से लन्दन जाते समय पहले अदन पर और फिर स्वेज बंदरगाह पर रुकना चाहिये। (३) रुकने का कारण यात्रा सम्बंधित और उचित होना चाहिये। इस वाक्य और उसकी सीमाओं का उद्देश्य जहाज को रिवाज के अनुसार ही यात्रा से सम्बंधित उचित कारणों के लिए मार्ग के बंदरगाहों पर रुकने का अधिकार देना है।

पथ भ्रष्टता (Deviation)—प्रसामान्य मार्ग से भ्रष्ट होने को ही पथ भ्रष्टता कहते हैं। बीमा पत्र पथ भ्रष्टता का निषेध करता है, और यह बीमा पत्र को विवर्जित कर देता है। पथानुकूलता एक मानी हुई साधारण शर्त (Implied Warranty) है और उसका खंडन बीमा के प्रसंविदे के लिए घातक होता है और बीमा कर्ता पथ भ्रष्टता के समय से अपने उत्तरदायित्व से मुक्त हो जाता है। यदि जहाज पथ-भ्रष्ट हो जाय, किन्तु शीघ्र ही उचित मार्ग पर फिर आ जाय और पथ भ्रष्टता के काल में कोई क्षति न हो, तो भी प्रसंविदा विवर्जित हो जाता है।

कल्पित यात्रा से जहाज का पथ-भ्रष्ट हो जाना निम्नलिखित दशाओं में माना जाता है :—

(अ) जब बीमा-पत्र मे यात्रा के मार्ग का वर्णन दिया गया हो और जहाज उस मार्ग से भ्रष्ट हो जाय; या

(आ) जब कि बीमा पत्र में यात्रा के मार्ग का वर्णन न दिया गया हो और जहाज प्रसामान्य मार्ग से भ्रष्ट हो जाय।

किन्तु पथ-भ्रष्टता निम्नलिखित सात अवस्थाओं में क्षम्य (excused) होती है :

(१) जब यह बीमे की किसी शर्त द्वारा अधिकृत (authorised) हो।

(२) जब कि इसका कारण कप्तान या जहाज के मालिक के अधिकार के बाहर हो।

(३) जब कि किसी स्पष्ट या मानी हुई साधारण शर्त को पूरा करने के लिए पथ भ्रष्टता आवश्यक हो।

(४) जब जहाज या माल की सुरक्षा के लिए पथ-भ्रष्टता आवश्यक हो।

(५) जब मानवीय जीवन बचाने के लिए या ऐसे जहाज की रक्षा करने के लिए जिसमें मानवीय जीवन सकट में है, पथ-भ्रष्टता की जाय।

(६) जब जहाज पर सवार किसी व्यक्ति के लिए डाक्टरी सहायता आवश्यक हो और उसे प्राप्त करने के लिए पथ भ्रष्टता की जाय।

(७) कप्तान या मल्लाह द्वारा जहाज के अदृश्य कर देने (Barratry) से रक्षा प्राप्त करने के लिये की गई पथ-भ्रष्टता।

जब पथ भ्रष्टता क्षम्य हो, तब जहाज को चाहिए कि जितना शीघ्र हो उके प्रसामान्य (normal) मार्ग पर चला आवे, नहीं तो यह माना जायगा के वह फिर पथ-भ्रष्ट हो गया और बीमे का प्रसंविदा विवर्जित हो जायगा।

७. मूल्य निर्धारण (Valuation)

अगला वाक्य मूल्य निर्धारण का होता है और उसमें विषय का मूल्य लिखा जाता है।। यह वाक्य इस प्रकार का होता है :

"कथित जहाज आदि, मार्ग आदि......का मूल्य .... है और रहेगा।"

यह वाक्य केवल निर्धारित मूल्य वाले बीमा-पत्रों में ही होता है क्योंकि इसमें विषय का मूल्य बीमा करने और कराने वाले पहले से ही निर्धारित कर लेते हैं और वह इस वाक्य में लिख दिया जाता है। यदि बीमा-पत्र अनिर्धारित मूल्य वाला हुआ, तो इस वाक्य को खाली छोड़ दिया जाता है; और क्षति होने पर विषय का मूल्य मालूम किया जाता है।

८. संकट (Perils)

अगले वाक्य में वे सब संकट लिखे जाते है जिनसे रक्षा प्रदान की जाती है। ये निम्नलिखित होते हैं : (१) सामुद्रिक संकट—इनका कारण समुद्र होता है; (२) अग्नि; (३) देश-शत्रु और योद्धा; (४) समुद्री डाकू और चोर; (५) माल फेंकना (Jettison); (६) समुद्र में जहाज का पकड़ा जाना; और (७) कप्तान या मल्लाहों का जहाज को अदृश्य कर देना।

९. चेष्टा वाक्य (Sue and Labour Clause)

यह वाक्य बीमा-पात्र को यह अधिकार देता है कि वह बीमे के विषय को होने वाली क्षति रोकने के लिए अथवा उसे कम करने के लिये आवश्यक उपाय करे। बीमा-पात्र को बुद्धिमानी और विवेक से इस प्रकार काम करना चाहिये मानो कि उसने बीमा कराया ही न हो। क्षति रोकने या घटाने में उसका जो उचित व्यय होता है, उसे इस वाक्य के अन्तर्गत बीमा कम्पनी को देना पड़ता है।

१०. स्वत्व त्याग (Waiver) वाक्य

यह वाक्य चेष्टा वाक्य का सहायक है और अनुसार प्रसविदे का कोई भी पक्ष—बीमा करने या कराने वाला—क्षति की आशंका होने पर ऐसा व्यय कर सकता है जिसकी कल्पना चेष्टा-वाक्य में की जाती है; और इससे उसका अधिकार दूषित नहीं होता।

११-प्रतिफल या प्रीमियम

अगला वाक्य प्रतिफल वाक्य कहलाता है और बहुत लम्बा होता है। इसमें बीमा-कर्ता प्रीमियम की प्राप्ति स्वीकृत करता है जिसके बदले में रक्षा प्रदान करता है। साधारणतया प्रीमियम बीमा पत्र खरीदते समय नहीं चुकाई जाती प्रत्युत अगले महीने की ८ तारीख को चुकाई जाती है। किन्तु प्राप्ति स्वीकृति बीमा-पत्र में इसलिये कर दी जाती है कि बाद को बीमा कर्ता क्षतिपूर्ति करने से इसलिये मना न कर दे कि उसे प्रीमियम नहीं मिली।

स्मारक (Memorandum)

लायड बीमा पत्र के अन्त मे एक नोट दिया जाता है जिसे स्मारक कहते हैं। इसका उद्देश्य बीमा-कर्ता को ऐसे छोटे छोटे दावों से बचाना होता है जिसका कारण माल की नाशमानता (Perishability) होता है। स्मारक में निम्नलिखित आयोजन कर दिया जाता है :

(१) बीमा-कर्ता आटा, मछली, नमक, फल, अनाज और बीज की आंशिक क्षति के लिये उत्तरदायी नहीं होगा क्योंकि ये वस्तुएँ अत्यन्त नाशमान होती हैं।

(२) चीनी, तम्बाकू, हेम्प, फ्लेक्स और खाल की ५ प्रतिशत से कम क्षति के लिये वह उत्तरदायी नहीं होगा। ये वस्तुएँ ऊपर के वाक्य की वस्तुओं से कम नाशमान होती हैं।

(३) अन्य सब वस्तुओं की, जिनमें जहाज और किराया भी सम्मिलित है, ३% व नीचे की आंशिक क्षति के लिए वह उत्तरदायी नहीं होगा।

वह निम्नलिखित दशाओं में कथित सीमाओं से कम आंशिक क्षति के लिए भी उत्तरदायी होता है : (१) यदि आंशिक क्षति सामान्य औसत (General Average) हो अर्थात् वह सब सम्बन्धित हितों की रक्षा के लिये उठाई गई हो, और (२) यदि जहाज भूमि में फँस जाय या जल जाय या डूब जाय।

अन्य विशेष वाक्य

कभी-कभी बीमा पत्रों में कुछ और विशेष वाक्य भी सम्मिलित कर लिये जाते हैं। इनमें से कुछ नीचे दिये जाते हैं।

विशेष औसत मुक्त (Free of Particular Average या F. P. A.)—यह वाक्य बीमा-कर्ता को विशेष औसत (Particular Average) से बरी कर देता है। यदि आंशिक क्षति विशेष औसत न हो तो बीमाकर्ता को क्षतिपूर्ति करनी पड़ेगी।

विशेष औसत सहित (With Particular Average या W. P. A.)—इस वाक्य के अनुसार बीमा-कर्ता विशेष औसत के लिए उत्तरदायी होता है

विदेशी सामान्य औसत (Foreign General Average या F. G. A.)—सामान्य औसत होने पर, एक सामान्य औसत का लेखा बनाना पड़ता है, जिसमें प्रत्येक हित के हिस्से में आने वाला क्षति का अनुपात और उसकी रकम दी होती है। यह लेखा उद्दिष्ट बंदरगाह के विधान के अनुसार बनाया जाता है; और यदि यात्रा किसी बीच के बंदरगाह पर खंडित हो जाय, तो उस बीच वाले बंदरगाह के विधान के अनुसार बनाया जाता है। इस वाक्य के अनुसार विदेशी बंदरगाह के अनुसार बनाया गया सामान्य औसत लेखा बीमा करने और कराने वाले के बीच में भुगतान का आधार होगा।

समस्त संकटों से रक्षा (Against All Risks या A. A. R.)—इसके अनुसार समस्त सामुद्रिक संकटों से रक्षा प्रदान की जाती है।

समस्त औसत मुक्त (Free of All Averages या F. A. A.)—इसके अनुसार बीमा-कर्ता समस्त आंशिक क्षति से—चाहे वह विशेष औसत हो या सामान्य औसत—मुक्त होता है। वह केवल सम्पूर्ण क्षति के लिए ही उत्तरदायी होता है।

बन्दी होने के संकट से मुक्त (Free of Capture and Seizure या F. C. S.)—युद्ध के समय में जहाज और माल के पकड़े जाने का भय बढ़ जाता है और इस वाक्य के द्वारा यह बीमा-पत्र के परे कर दिया जाता है। यदि कुछ अधिक प्रीमियम दी जाय तो, यह वाक्य शामिल नहीं किया जायगा और इस संकट से भी रक्षा प्रदान की जायगी।

टकरा जाने का वाक्य (Running Down या R. D. Clause)—यह वाक्य केवल जहाज पर लिए जाने वाले बीमा-पत्रों में शामिल किया जाता है। इसके अनुसार यदि जहाज किसी दूसरे जहाज से टकरा जाय और इस जहाज के स्वामी को दोषी होने के कारण दूसरे जहाज वाले को हर्जाना देना पड़े, तो बीमा-कर्ता उसका एक भाग—साधारणतया ७५%—बीमा पात्र को देता है। लायड बीमा-पात्र टकराने का भय शामिल नहीं करता; अतः यदि इससे रक्षा प्राप्त करनी हो तो इसका अलग कथन होना आवश्यक है।

जारी रहने का वाक्य (Continuation Clause)—कभी-कभी उद्दिष्ट बन्दरगाह को पहुँचाने के लिए ही बीमा-पत्र की अवधि समाप्त हो जाती है। ऐसी अवस्था में, इस वाक्य के अनुसार, यदि इसकी सूचना पहले से ही बीमा-कर्ता को दे दी जाय, तो शेष यात्री के लिए आनुपातिक प्रीमियम अदा करके बीमा जारी रह सकता है।

पुनर्बीमा वाक्य—कभी-कभी बीमा-कर्ता को यह प्रतीत होता है कि उसने एक विषय का जितनी रकम का बीमा लिखा है, वह उसकी सामर्थ्य के बाहर है। ऐसी अवस्था में यह बीमे की रकम के एक भाग के लिए किसी दूसरी कम्पनी से पुनर्बीमा करा देता है। बीमा-पत्र में पुनर्बीमा वाक्य के अनुसार प्रसंविदे का स्वभाव स्पष्ट कर दिया जाता है और पुनर्बीमा पत्र में वे ही शर्तें शामिल की जाती हैं जो कि मौलिक बीमा पत्र में थीं।

साधारण शर्तें (Warranties)

बीमा पत्र में कुछ साधारण शर्तें भी होती हैं। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, साधारण शर्तें बीमा-पात्र द्वारा की गई प्रतिज्ञा है कि कोई खास बात की जायगी या नहीं की जायगी। यह स्पष्ट (express) या मानी हुई (Implied) होती है। मानी हुई साधारण शर्तों के अस्तित्व की कल्पना कर ली जाती है और उन्हें बीमा पत्र में लिखना नहीं पड़ता। मानी हुई साधारण शर्तें जहाज की समुद्र योग्यता, यथानुकूलता और उपक्रम की वैधानिकता है जिनकी विवेचना हम ऊपर कर चुके हैं। इसके विपरीत, स्पष्ट साधारण शर्तें बीमा पत्र में स्पष्ट रूप से लिखी जाती हैं और इसलिए उन्हें स्पष्ट साधारण शर्तें कहते

हैं। इनके कुछ उदाहरण ये हैं : एक निश्चित तिथि के पूर्व जहाज के रवाना हो जाने की साधारण शर्तें, निश्चित सीमाओं में न जाने की साधारण शर्तें, नदी भय से मुक्त होने की साधारण शर्तें, आदि। स्पष्ट साधारण शर्त के खंडन करने से—जैसा कि मानी हुई साधारण शर्त के खंडन करने से भी होता है—प्रसंविदा विवर्जित हो जाता है। स्मरण रहे कि साधारण प्रसंविदे में ऐसी अवस्था में दोषी पक्ष को केवल दूसरे पक्ष की क्षतिपूर्ति करनी पड़ती है।

§ ६. जहाज के कप्तान का ऋण लेना

जहाज का कप्तान जहाज के स्वामी का एजेन्ट होता है और यदि वह अपने प्रधान से सम्बन्ध स्थापित करने में असफल हो जाय तो उसका कर्त्तव्य है कि जहाज और माल की सुरक्षा के निमित्त और शेष यात्रा पूरी करने के लिए आवश्यक और उपयुक्त उपायों को काम में लावे। आजकल के यातायात और सन्देशवाहन के शीघ्र साधनों के युग में ऐसा शायद ही कभी होता हो, किन्तु कुछ समय पूर्व यह घटना बहुधा हो जाया करती थी। कभी कभी कप्तान को उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए ऋण भी लेना पड़ता था। यदि जहाज के स्वामी की प्रतिष्ठा ऊँची होती थी, तो ऋण बिना किसी जमानत के मिल जाता था। किन्तु बहुधा कप्तान को जहाज, या माल, या दोनों की जमानत देनी पड़ती थीं। ऐसे ऐसे प्रसंविदे जहाजी बन्धक (Bottomry Bond) या माल बंधक (Respondentia Bond) के आधार पर किये जाते थे।

जहाजी बन्धक (Bottomry Bond)

जब कि कप्तान जहाज की जमानत पर ऋण लेता है तब उसे जहाजी बन्धक लिखना पड़ता है। कभी कभी जहाज के साथ माल और किराये को भी जमानत के तौर पर देना पड़ता है। कप्तान को अपनी व्यक्तिगत जमानत भी देनी पड़ती है और ऋण की अदायगी के लिए वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी हो जाता है। इस बन्धक की विशेषता यह है कि इसमें बीमा और ऋण दोनों का ही समन्वय होता है : उधार लिया हुआ रुपया, यदि जहाज उद्दिष्ट बंदरगाह

पर पहुँच जाय, तभी देय होता है, अन्यथा नहीं। चाहे जहाज उद्दिष्ट बन्दरगाह पर सुरक्षित अवस्था में पहुँचे या क्षति प्राप्त अवस्था में, यदि वह उद्दिष्ट बन्दरगाह पर पहुँच भर जाय तो ऋण अदा करना पड़ता है। अन्य शब्दों में, अंशतः हानि के ऋण की अदायगी पर कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता, सम्पूर्ण क्षति होने पर ही ऋणी उत्तरदायित्व से मुक्त होता है। इस प्रकार के ऋण का दूसरा महत्वपूर्ण लक्षण यह होता है कि यदि कप्तान कई बन्दरगाहों पर इस उपाय से ऋण ले, तो अन्तिम ऋणदाता का दावा पहले सन्तुष्ट किया जाता है और प्रथम-ऋणदाता का अन्त में। उदाहरण के लिए, यदि कलकत्ते से टोकियो जाने वाला जहाज जहाजी बन्धक पर रुपया रंगून, सिंगापुर और फिर हांगकांग में उधार ले, तो हांगकांग वाले ऋणदाता का दावा पहले सन्तुष्ट होगा और रंगून वाले का अन्तिम। यह नियम इस कारण बनाया गया है कि यदि अन्तिम ऋणदाता ऋण न देता, तो जहाज अपनी यात्रा पूरी न कर सकता और प्रथम ऋणदाता को रुपया वापस नहीं मिलता, इसलिए अन्तिम ऋणदाता का दावा सबसे पहले पूरा करना चाहिये। जहाजी बन्धक के तीन महत्वपूर्ण लक्षण हैं - (१) यात्रा बिना रुपया उधार लिए पूरी नहीं हो सकती थी, (२) रुपया और किसी तरह उधार नहीं लिया जा सकता था (३) उधार लिया जाने वाला रुपया यात्रा पूरी करने के लिए न्यूनतम था।

माल बन्धक (Respondentia)

जब कप्तान माल की जमानत पर ऋण लेता है, तो उसे माल बन्धक लिखना पड़ता है। इसके मान्य होने के लिए तीन बातें आवश्यक हैं (१) रुपया केवल माल की रक्षा के लिये व्यय किया जाना चाहिये, (२) माल बेचने के अतिरिक्त और कोई उपाय रुपया प्राप्त करने का प्राप्य नहीं होना चाहिये, (३) यदि सम्भव हो तो कप्तान को माल के स्वामियों की अनुमति ले लेनी चाहिये। इस बन्धक में भी ऋण की अदायगी तभी करनी होती है जबकि जहाज उद्दिष्ट बन्दरगाह पर पहुँच जाय। यदि ऐसा न हो सके तो ऋण नहीं अदा करना पड़ता।

जहाजी और माल बन्धक पुरातन काल में व्यवहार में लाये जाते थे जब कि

कप्तान अपने प्रधान को सन्देश नहीं भेज सकता था या उससे रुपया नहीं मँगा सकता था। किन्तु अब सन्देश-वाहन और द्रव्य-वाहन के साधन इतने श्रेष्ठ हो गये हैं कि अब रुपया आने में बहुत कम समय लगता है। अतः यह बन्धक अब भूतकाल की वस्तु रह गई है।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१. सामुद्रिक बीमा पालिसी की किन्हीं पाँच मुख्य धाराओं का उल्लेख करते हुए उनकी विवेचना कीजिए। (१६५५)

२. माल का समुद्री बीमा किस प्रकार कराया जाता है? (उ० प्र०, १६५४)

३. माल का सामुद्रिक बीमा किस प्रकार कराया जाता है? (१६५४)

४. जहाजी बिल्टी और जहाजी पट्टा में अन्तर बताइये। (उत्तर प्रदेश, १६५३)

५. सामुद्रिक बीमा पत्र में बीमा-योग्य हित का महत्व क्या होता है? उन व्यक्तियों के नाम बताइये जिनका सामुद्रिक बीमा-पत्र में बीमा-योग्य हित हो सकता है। (यू० पी०, १६५१)

६. अग्नि और सामुद्रिक बीमे के सम्बन्ध में बीमा-योग्य हित का क्या अर्थ है? क्या यह आवश्यक है कि यह हित बीमा कराते समय तथा क्षति के समय उपस्थित हो? (यू० पी०, १६४५)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

७. Subrogation के सिद्धान्त से आप क्या समझते हैं? एक बीमा-पत्र में माल का बीमा "क्षति हुई हो या न हुई हो" वाक्य के अन्तर्गत कराया गया है। इस वाक्य का सामजस्य आप इस सिद्धात से कैसे बैठावेंगे कि आश्वासित (assured) का क्षति होने के पूर्व माल में बीमा-हित होना चाहिये? (राजपूताना, १६५३)

८. स्थान-ग्रहण के सिद्धात का क्या आशय है? किसी सामुद्रिक बीमा-पत्र में "क्षति हुई हो या न हुई हो" वाक्य सम्मिलित है। यह वाक्य इस नियम

से कैसे मेल खाता है कि बीमा-पत्र का बीमा-योग्य हित क्षति के पूर्व होना चाहिये ? (राजपूताना, १९४०)

पटना, इन्टर कामर्स

९. अग्नि तथा सामुद्रिक बीमे के सम्बध में बीमा-योग्य हित का क्या आशय है ? क्या इसका क्षति के समय उपस्थित होना आवश्यक है ? अग्नि-बीमा-पत्र में औसत वाक्य का क्या प्रभाव होता है ? (पटना, १९५१)

१०. सामुद्रिक बीमा-पत्र किन-किन कामों के लिए किया जा सकता है ? (पटना, १९४६)

११. सामुद्रिक बीमे के प्रसंविदे में मानी हुई साधारण शर्तें क्या होती हैं ? पथ-भ्रष्टता किन अवस्थाओं में मान्य होती है ? (पटना, १९४८)

बनारस, इन्टर कामर्स

१२. विशिष्ट (Specific) एव विस्तृत सामुद्रिक बीमा-पत्रों में क्या अन्तर होता है ? इन दोनों में से कौन-सा श्रेष्ठ है और क्यों ? (बनारस, १९५२)

सागर, इन्टर कामर्स

१३. सामुद्रिक बीमा-पत्र में किन-किन जोखिमों का आवरण रहता है ? (सागर, १९५५)

मध्य भारत, इन्टर कामर्स

१४. सामुद्रिक भय (Perils of the Sea) क्या होते हैं ? माल भेजने वाले जिन बीमा-पत्रों के अन्तर्गत सामुद्रिक भय के प्रति बीमा करा सकते हैं, उनमें से दो प्रकार के बीमा-पत्रों का ब्यौरा दीजिये। (१९५३)

दिल्ली, हायर सेकिंडरी

१५. इनका अर्थ स्पष्ट कीजिए : (i) समर्पण मूल्य; (ii) सामान्य औसत, (iii) स्थानग्रहण; (iv) पी० पी० आई० बीमा-पत्र; (दिल्ली, हा० सें०, १९५३)

(१६) निम्नलिखित का अर्थ स्पष्ट कीजिये : बीमा-योग्य हित, औसत वाक्य, पुनर्बीमा, निकट कारण। (दिल्ली, हा० सें०, १९५२)

अध्याय ४९

सामुद्रिक क्षति

यदि जहाज या माल या किराये को किसी सामुद्रिक क्षति के द्वारा कुछ क्षति पहुँचे, तो उसे सामुद्रिक क्षति कहते हैं। माल को होने वाली क्षति या तो किराये के प्रसंविदे के अनुसार जहाजी कम्पनी को उठानी पड़ती है, या सामुद्रिक बीमा-पत्र के अनुसार बीमा कम्पनी को, या स्वयं माल के स्वामी को। यदि क्षति जहाजी बिल्टी या जहाजी चिट्ठे (चार्टर पार्टी) में शामिल होने वाले किसी संकट द्वारा हो तो माल का स्वामी जहाजी कम्पनी से क्षति पूर्ति करावेगा। यदि वह संकट बीमा-पत्र में शामिल हो, तो वह बीमा कम्पनी से क्षति-पूर्ति करायेगा। किन्तु यदि वह न किराये के प्रसंविदे में शामिल हो और न बीमा-पत्र में, तो वह क्षति माल के स्वामी को स्वयं उठानी पड़ती है।

निकट कारण का सिद्धान्त (Causa Proxima)

यदि क्षति का कारण कोई अकेला संकट हो, तो यह स्थिर करना सरल है कि कौन-सा पक्ष उसकी पूर्ति करने का उत्तरदायी है। किन्तु कभी-कभी क्षति एक के बाद दूसरे, कई संकटों का परिणाम होती है जिनमें से कुछ का बीमा किया होता है और कुछ का नहीं। ऐसी अवस्था में उत्तरदायी पक्ष का निर्णय करना कठिन हो जाता है। विधान के अनुसार, ऐसी दशा में सबसे निकट कारण को स्थिर कर लेना चाहिये, और यदि इसका बीमा कराया गया हो, तो बीमा कम्पनी क्षति-पूर्ति की उत्तरदायी होगी। इसे निकट कारण का सिद्धांत कहा जाता है। सामुद्रिक बीमे में इस सिद्धांत का उपयोग किया जाता है। साधारणतया यदि क्षति कप्तान या मल्लाहों के जान-बूझ कर किये जाने वाले दुराचार या असावधानी का परिणाम हो, तो बीमा कम्पनी उसके लिये उत्तरदायी नहीं होती। किन्तु यदि क्षति के निकट कारण का बीमा करा लिया

गया है तो कप्तान या मल्लाहों के दुराचारी या असावधान होने पर भी बीमा कम्पनी ही क्षतिपूर्ति की उत्तरदायी होती है। मान लीजिये आपने बम्बई से कुछ चीनी लन्दन भेजी। जिब्राल्टर के समीप कुछ सामुद्रिक कीड़े जहाज के तले में छेद कर देते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पानी जहाज में प्रवेश कर जाता है और सारी चीनी पानी में घुलकर बह जाती है। यहाँ चीनी की क्षति के दो कारण क्रियाशील हैं—सामुद्रिक कीड़े और जल। इन दोनों में सबसे निकट कारण जल है, और सामुद्रिक जल का बीमा कराया हुआ होता है। अतः यह क्षति बीमा कम्पनी को ही उठानी पड़ेगी।

सम्पूर्ण और आंशिक क्षति

बीमे के विषय की या तो सम्पूर्ण क्षति (Total Loss) हो सकती है या केवल आंशिक क्षति (Partial Loss)। स्मरण रहे कि आंशिक क्षति सम्पूर्ण क्षति का एक भाग नहीं मानी जाती। यदि किसी व्यक्ति को दोनों से रक्षा प्राप्त करनी है, तो उसे दोनों का बीमा कराना चाहिये। यदि उसने केवल सम्पूर्ण क्षति का बीमा किया हो, तो आंशिक क्षति होने पर वह क्षतिपूर्ति का दावा नहीं कर सकता। इसी प्रकार आंशिक क्षति बीमा-पत्र धारक को वह अधिकार नहीं देती कि वह सम्पूर्ण क्षति का दावा कर सके।

§ १. सम्पूर्ण क्षति (Total Loss)

सम्पूर्ण क्षति वास्तविक (Actual) हो सकती है अथवा रचनात्मक (Constructive)।

वास्तविक सम्पूर्ण क्षति (Actual Total Loss)

अँग्रेजी विधान के अनुसार, जब कि बीमे का विषय नष्ट हो जाय, या उसकी इतनी हानि हो जाय कि वह बीमा कराई हुई वस्तु के प्रकार की न रहे, या बीमा-पात्र उसे सदा के लिये खो दे, तो क्षति वास्तविक सम्पूर्ण क्षति कहलाती है। सम्पूर्ण क्षति निम्नलिखित तीन दशाओं में वास्तविक कही जाती है:

१. माल का भौतिक विनाश जैसे अग्नि या जहाज डूबने से समस्त माल का नष्ट हो जाना।

२. क़िस्म का परिवर्तन जैसे जहाज का भयानक लहरों से टकराकर टुकड़ों में परिवर्तित हो जाना।

३. मदा के लिये खो जाना जैसे सामुद्रिक डाकुओं का जहाज को गायब कर देना।

ऊपर की तीन अवस्थाओं में सम्पूर्ण क्षति वास्तविक कहलाती है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि जहाज का बहुत समय तक कुछ पता ही नहीं चलता। कुछ समय लापता रहने पर यह मान लिया जाता है कि जहाज नष्ट हो गया। लायड समिति निवेदन करने पर अपने स्टेशनों और एजेंटों से लापता जहाज का पता लगाने की चेष्टा करती है; और असफल होने पर जहाज का विनाश घोषित कर दिया जाता है। ऐसी अवस्था में यह मान लिया जाता है कि सम्पूर्ण क्षति हो गई, और यह वास्तविक सम्पूर्ण क्षति समझी जाती है।

रचनात्मक सम्पूर्ण क्षति (Constructive Total Loss)

रचनात्मक सम्पूर्ण क्षति तब होती है जब कि बीमे का विषय निम्नलिखित कारणों से त्याग दिया जाता है :

१ जब कि उसकी वास्तविक सम्पूर्ण क्षति अपरिहार्य (unavoidable) हो, या

२. जब कि उसको वास्तविक सपूर्ण क्षति से बचाने के लिये जो व्यय करना पड़ेगा वह बचाये गये माल के मूल्य से अधिक होगा।

रचनात्मक सम्पूर्ण क्षति के कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं : (१) जब कि बीमा पात्र माल को खो दे और उसको माल का दोबारा मिल जाना असम्भव हो, तब रचनात्मक सम्पूर्ण क्षति होती है। (२) यदि कोई जहाज कीचड़ में फँस जाय और उसे ठीक करने तथा बन्दरगाह में खींच लाने का व्यय ३०,०००) हो, किंतु ठीक करने के पश्चात् जहाज का मूल्य केवल २०,०००) ही हो, तब रचनात्मक सम्पूर्ण क्षति का होना मान लिया जायगा। (३) यदि माल को कुछ

हानि पहुँची हो, और माल ठीक करने और उसे उद्दिष्ट स्थान तक भेजने का व्यय माल के मूल्य से अधिक हो, तो रचनात्मक सम्पूर्ण क्षति हुई मान ली जाती है।

क्षति की मात्रा

यदि माल की सम्पूर्ण क्षति हो जाय, तो बीमा कम्पनी से जो रकम क्षति-पूर्ति के रूप में वसूल की जा सकती है उसकी मात्रा इस प्रकार निर्धारित होती है :

(१) यदि बीमा-पत्र निर्धारित मूल्य वाला हो, तो बीमा-पत्र की पूरी रकम वसूल की जा सकती है। ऐसे बीमा-पत्र में साधारणतया माल का क्रय-मूल्य, जहाज का व्यय तथा लाभ के लिए १० प्रतिशत (या १५ प्रतिशत), इनके योग की रकम के लिए बीमा कराया जाता है।

(२) यदि बीमा-पत्र बिना निर्धारित मूल्य वाला हुआ, तो बीमा कम्पनी से माल के क्रय-मूल्य और जहाज के व्यय के योग के बराबर रकम वसूल की जा सकती है, बशर्ते कि यह योग बीमा-पत्र की रकम से अधिक न हो। इस प्रकार के बीमा-पत्र के अन्तर्गत लाभ के लिए कुछ भी नहीं लिया जा सकता।

सम्पूर्ण क्षति का दावा

जब सम्पूर्ण क्षति हो, चाहे वह वास्तविक हो या रचनात्मक, तब बीमा-पात्र को क्षतिपूर्ति का दावा करना पड़ता है। यह दावा उचित रीतिपूर्वक करना चाहिये, जिसका हम नीचे वर्णन करते हैं :

(१) त्याग-सूचना (Notice of Abandonment)—रचनात्मक सम्पूर्ण क्षति होने पर, बीमा-पात्र को त्याग-सूचना देना आवश्यक है। वास्तविक सम्पूर्ण क्षति में यह सूचना अनावश्यक है। इस सूचना-पत्र में सम्पूर्ण क्षति का दावा किया जाता है और बीमा-पात्र बीमे के विषय के अवशेष में अपना समस्त स्वामित्व अधिकार बीमा कम्पनी को सौंप देता है। त्याग-सूचना मान्य होने के लिए यह आवश्यक है कि (१) यह स्पष्ट और बिना किसी शर्त के हो, और (२) यह उचित समय के अन्दर ही दी जाय। बीमा-कर्ता दावे को स्वीकार करेगा अथवा अस्वीकार। पिछली दशा में, यदि बीमा-पात्र अपना दावा आगे

रखना चाहता है, तो उसे चाहिये कि शीघ्र ही न्यायालय में अभियोग चलावे।

(२) प्रमाण पत्र (Protest) – बीमा पात्र को चाहिये कि बीमा-कर्ता के निरीक्षण के लिए एक प्रमाण पत्र उपस्थित करे। प्रमाण पत्र में दुर्घटना का विस्तृत विवरण दिया होता है और उस पर जहाज के कप्तान और एक या अधिक अफसरों के हस्ताक्षर होते हैं; तथा वह नोटरी पब्लिक या विपत्रालोकी (Notary Public) के सामने लिखा और उसके द्वारा प्रमाणित किया जाता है। क्षति का होना प्रमाणित करने के लिए प्रमाण-पत्र देना आवश्यक है।

(३) बीजक—साथ में माल के बीजक की एक प्रति भी भेजनी चाहिये। इससे माल के वास्तविक मूल्य का पता चल जाता है और बीमा कम्पनी को यह आश्वासन हो जाता है कि दावे में किसी प्रकार का कपट नहीं किया गया।

(४) जहाजी बिल्टी—इसे भी बीमा कम्पनी में भेजना आवश्यक है। यह इस बात को प्रमाणित करता है कि माल वास्तव में जहाज पर लादा गया था।

(५) बीमा-पत्र—उपरोक्त सब कागजातों के साथ बीमा-पत्र भी कम्पनी को भेज देना चाहिये।

(६) स्थान ग्रहण का पत्र (Letter of Subrogation)—अन्त में, बीमा कम्पनी को स्थान-ग्रहण का पत्र भी भेजना चाहिये। जब बीमा कर्ता सम्पूर्ण क्षति की पूर्ति कर देता है, तब वह स्वतः ही बीमा पात्र का स्थान ग्रहण कर लेता है और उसे यह अधिकार प्राप्त हो जाता है कि पूर्ति की जाने वाली क्षति के सम्बध में वह जो भी वैधानिक कार्यवाई करे, वह बीमा-पात्र के नाम में करे। फिर भी यह सामान्य रिवाज है कि बीमा-पात्र ऐसा करने के लिए अपनी सम्मति स्थान ग्रहण के पत्र के रूप में दे देता है।

§ २. आंशिक क्षति या औसत

आंशिक क्षति को **औसत (Average)** के नाम से पुकारा जाता है।

पाठक को इस औसत और अंकगणित के औसत को अलग-अलग रखना चाहिये। औसत विशेष हो सकती है अथवा सामान्य।

विशेष औसत

विशेष औसत (Particular Average या P/A) किसी विशेष हित (जैसे केवल जहाज या केवल माल) की ऐसी आंशिक क्षति को कहते हैं जो कि अचानक और बीमा कराये हुए किसी निकट संकट के कारण घटे। पाठक को इस परिभाषा का ध्यानपूर्वक मनन करना चाहिये। इसके आवश्यक लक्षण निम्नलिखित हैं :—

(१) क्षति आंशिक होनी चाहिये।

(२) क्षति किसी विशेष हित की होनी चाहिये; और यात्रा से सम्बंधित समस्त हितों की रक्षा के लिये नहीं होनी चाहिये। पिछली दशा में आंशिक क्षति सामान्य औसत कहलाती है)

(३) क्षति आकस्मिक होनी चाहिये, जान-बूझ कर को जाने वाली नहीं।

(४) क्षति का निकट कारण ऐसा होना चाहिये कि उसका बीमा कराया गया हो।

विशेष औसत के कुछ उदाहरण हम नीचे देते हैं। जहाज यदि चट्टान से टकरा जाय और उसके मस्तूल या मशीन या किसी भाग को हानि पहुँचे तो वह विशेष औसत कहलावेगी। जहाज में पानी ऊँची लहरों के आने पर प्रवेश कर सकता है और वह माल की हानि कर सकता है। इसी प्रकार यदि पानी जहाज में चला आवे और चीनी के बोरों का कुछ भाग पानी में घुल जाय, तो अगर किराया उद्दिष्ट बन्दरगाह पर देय हो तो नष्ट हो जाने वाली चीनी का सम्बन्धित किराया वसूल नहीं हो सकेगा। विशेष औसत जहाज या माल या किराये की हो सकती है।

स्मारक और विशेष औसत से मुक्ति (Memorandum and F. P. A.)—पाठक अब जो कुछ स्मारक और विशेष औसत से मुक्ति के विषय में पढ़ चुके हैं, उसे स्मरण करें। स्मारक बीमा-कर्ता को कुछ माल की आंशिक क्षति से पूर्णतया मुक्त तथा कुछ अन्य माल पर निश्चित प्रतिशतों से

कम आंशिक क्षति से मुक्त कर देता है। यदि बीमा-पत्र में "विशेष औसत से मुक्ति" का वाक्य शामिल हो, तो वह विशेष औसत सम्बन्धी समस्त उत्तरदायित्व से छूट जाता है।

माल पर विशेष औसत -- माल के उद्दिष्ट बन्दरगाह पर पहुँच जाने पर, उन्हें विशिष्ट निरीक्षक (surveyor) द्वारा दिखा लेना चाहिए। वह माल की क्षति प्राप्त अवस्था को प्रमाणित करता है और क्षति का कारण भी निर्धारित करता है। निरीक्षण के पश्चात् विशेष औसत का लेखा (Statement of Particular Average) बनाना पड़ता है। यह काम निम्नलिखित विभागों में बाँटा जा सकता है :

(१) सबसे पहला काम वास्तविक क्षति का अनुमान लगाना है। माल के अच्छी अवस्था में आने पर उनका जो विक्रय-मूल होता, उसमें से उनके क्षतिपूर्ण अवस्था में विक्रय मूल घटा देने से वास्तविक क्षति निकल आती है। मान लीजिए अच्छी अवस्था में माल २०,०००) का बिक जाता, किन्तु हानि होने के कारण वह केवल १५,०००) का ही बिकता है, तो क्षति ५,०००) की हुई।

(२) यदि बीमा पत्र बिना निर्धारित मूल्य वाला हुआ, तो बीमा पात्र यह रकम बीमा कर्ता से वसूल कर सकता है बशर्ते कि वह बीमा-पत्र की रकम (insured value) से अधिक न हो।

(३) निर्धारित मूल्य वाले बीमे पत्र में, बीमे की रकम के आधार पर क्षति की मात्रा का हिसाब लगाया जाता है। ऊपर के उदाहरण में, मान लीजिए बीमा-पत्र २५,०००) का था तब क्षति का अनुमान इस प्रकार लगाया जायगा :

∵ २०,००० रु० पर क्षति है... ..५,००० रु०

∴ २५,००० रु०,, ,, ,,......$\frac{५,००० \times २५,०००}{२०,०००}$

= ६,२५० रु०

निर्धारित मूल्य का बीमा कराने पर ६,२५० रु० बीमा कम्पनी से वसूल किया जा सकता है।

(४) इस रकम के अतिरिक्त बीमा-पात्र ने यदि माल की रक्षा के लिये या निरीक्षण अथवा बिक्री के लिए कुछ व्यय माल के उद्दिष्ट स्थान पर पहुँच जाने के पश्चात् किया हो, तो वह भी बीमा कम्पनी से वसूल किया जा सकता है।

उदाहरण १—५,००० बोरों की एक लदान का ५०,०००) का बीमा कराया गया है। उनमें से १०००बोरों को नुकसान पहुँचाने के कारण बेचना पड़ा। और वे २) प्रति बोरे के हिसाब से बिके। बीमा-पात्र ने निम्नलिखित व्यय और किये: १% बिक्री का कमीशन; निरीक्षण व्यय, ५); बिक्री-व्यय १०)। आपको निम्नलिखित काम करना है:

१. यह मान कर कि बीमा-पत्र निर्धारित मूल्य वाला (valued) है और माल ठीक रहने पर ११) प्रति बोरे की दर से बिक्री हो जाती है, विशेष औसत का लेखा बनाइये।

२. यह मान कर कि बीमा पत्र निर्धारित मूल्यवाला (valued) है और माल के ठीक रहने पर ८) प्रति बोरे की दर से बिक्री हो जाती, विशेष औसत का लेखा बनाइये।

३. उपरोक्त घटनाओं में यदि बीमा पत्र बिना निर्धारित मूल्य वाला (unvalued) होता, तो बताइये कि बीमा पात्र का दवा कितनी कितनी रकम का होता ?

हल १

(१) सबसे पहले हमें क्षति की मात्रा की गणना करनी चाहिए। माल के ठीक दशा में होने पर उनकी बिक्री ११) प्रति बोरे की दर से हो जाती, अर्थात् कुल रकम ११ × १,००० = ११,००० रु० प्राप्त होते। किन्तु क्षतिप्राप्त होने के कारण वे केवल २) प्रति बोरे की दर से बिकते हैं अर्थात् बिक्री की कुल रकम २ × १,००० = २,००० रुपया प्राप्त होती है। अतः क्षति की मात्रा हुई रु० ११,००० − २,००० = रु० ९,०००।

अब हमको बीमा की रकम के आधार पर उपरोक्त क्षति की मात्रा का समा-

मेलन (adjustment) करना चाहिये । ११,००० बोरों का १०) प्रति बोरे के हिसाब के बीमित मूल्य (insured value) १०,००० रु० हुआ । अतः

∵ ११,००० रु० पर क्षति है = ६,००० रु०

∴ १०,००० रु० बीमित मूल्य पर क्षति होगी = $\frac{६,००० \times १०,०००}{११,०००}$

= रु० ८,१८१—१३—१

अब इस रकम में वे सब व्यय जोड़ दीजिये जो बीमा पात्र ने किये हैं :—

	रु०	आ०	पा०
क्षति की समामेलित रकम	८,१८१	१३	१
विक्रय कमीशन (रु० २,००० पर १%)	२०	०	०
निरीक्षण-व्यय	५	०	०
विक्री व्यय	१०	०	०
	८,२१६	१३	१

विशेष औसत का लेखा इस प्रकार बनाया जायगा :

विशेष औसत का लेखा

विवरण	दर	रु० आ० पा०	रु० आ० पा०
५,००० बोरों का बीमित मूल्य	१०)	५०,०००—०—०	
यदि १,००० बोरे ठीक दशा में होते, तो उनकी बिक्री से प्राप्त होता ...	११)	११,०००—०—०	
किन्तु क्षति-प्राप्त होने के कारण उनकी बिक्री से प्राप्त होता है	२)	२,०००—०—०	
क्षति ...		९,०००—०—०	
∵ ११,००० रु० पर क्षति है रु० ९,०००			
∴ १०,००० रु० पर क्षति ..			८,१८१ १३ १
व्यय			
बिक्री पर कमीशन	१%	२०—०—०	
निरीक्षण व्यय		५—०—०	
बिक्री का व्यय		१०—०—०	३५ ०-०
दावे की रकम .			८,२१६ १३ १

(२) प्रश्न के भाग २ के अनुसार विशेष औसत का लेखा इस प्रकार बनेगा।

विशेष औसत का लेखा

विवरण	दर	रु० आ० पा०	रु० आ० पा०
५,००० बोरों का बीमित मूल्य	१०)	५,०००-०-०	
यदि १,००० बोरे ठीक दशा में होते, तो उनकी बिक्री से प्राप्त होते ...	८)	८,०००--०--०	
किन्तु क्षति प्राप्त होने के कारण उनको बिक्री से प्राप्त होते हैं ...	२)	२,०००--०--०	
क्षति ...		६,०००--०--०	
∵ ८,००० रु० पर क्षति है ६,००० रु०		—	
∴ १०,००० रु० पर क्षति होगी			७,५००--०--०
व्यय			
विक्रय कमीशन	१%	२०-०--०	
निरीक्षण व्यय		५-०--०	
विक्रय व्यय		१०--०--०	
			३५--०--०
दावे की रकम...			७,५३५-०--०

(३) यदि बीमा-पत्र बिना निर्धारित मूल्य वाला हो, तो बीमित मूल्य के आधार पर समामेलन (adjustment) नहीं किया जायगा। अतः पहली अवस्था में दावे की रकम इस प्रकार होगी :

वास्तविक क्षति	रु० ९,०००
व्यय	रु० ३५
	रु० ९,०३५

दूसरी अवस्था में, दावे की रक्म इस प्रकार होगी :

वास्तविक क्षति	रु० ९,०००
व्यय	रु० ३५
	रु० ९,०३५

उदाहरण २—६०० कपास की गाँठों का, जिनका मूल्य १० पौन्ड प्रति गाँठ है, बीमा ६००० पौन्ड के लिये कराया गया है। उद्दिष्ट बन्दरगाह पर आने पर ३१६ गाँठें क्षति-प्राप्त निकलीं। इनमें से ७८ गाँठें पौंड ६१४—६—० को और २३८ गाँठें पौंड २५६१—१६—५ को बिकीं। यदि ये गाँठें ठीक दशा में होतीं तो वे पौंड ३८२१—१३—० को बिकतीं। अन्य व्यय इस प्रकार हुये निरीक्षण व्यय।२ पौंड; चौकीदारी का व्यय १० —१४—६ विशेष औसत का लेखा तैयार

विशेष औसत और लेखा

विवरण	दर	पौं० शि० पें०	पौं० शि० पें०
६०० गाँठों का बीमित मूल्य	१० पौं०	६,०००—०—०	
यदि ३१६ गाँठें ठीक दशामें होंगी, तो उनकी बिक्री से प्राप्त होता है		३,८२१ — १३—०	
किन्तु क्षति प्राप्त होने के कारण उनकी बिक्री से प्राप्त होता है :			
७८ गाँठों से पौं० ६१४ ६-०			
२३८ गाँठों से पौं० २,५६१ १६-६		३१७६—२—६	
क्षति		६४५—१०—६	
∵ ३,८२१—१३—० पर क्षति है पौं० ६४५—१० — ६			
∴ ३,१६० (बीमित मूल्य) पर			५३३–१५—२
व्यय			
निरीक्षण-व्यय		२— ०—०	
चौकीदारी का व्यय		०–१०—०	
ढुलाई का व्यय		३–१४—६	६—४—६
दावा...			५४०—०—०

जहाज पर विशेष क्षति—यदि जहाज की आंशिक क्षति हो गई हो, तो बीमा-पात्र उसकी मरम्मत कराने का वास्तविक खर्चा वसूल कर सकता है। इस प्रकार क्षति का जो अनुमान लगाया जाता है उसमें कुछ कमी कर दी जाती है क्योंकि पुराने भागों के स्थान पर अब नये भाग लगा दिये जाते हैं। जैसा कि माल के सम्बन्ध में होता है, जहाज के बीमे की रकम के आधार पर हानि का

हिसाब लगा लिया जाता है। बीमे की रकम तो केवल एक अधिकतम सीमा है जिससे अधिक रकम बीमा-पात्र नहीं माँग सकता।

किराये पर विशेष औसत—विशेष औसत किराये पर भी हो सकती है। यदि माल भेजने वाले ने किराया पेशगी अदा कर दिया है, तो वह माल के साथ साथ किराये का भी बीमा करा लेगा और दोनों की क्षति-पूर्ति भी एक ही साथ की जायगी। किन्तु यदि किराया पेशगी अदा नहीं किया गया है तो बीमा कम्पनी माल सुरक्षित अवस्था में पहुँचने पर ही किराया माँगने की अधिकारी होगी। यदि कुछ माल रास्ते में टूट फूट जाए, अर्थात् यदि विशेष औसत हो जाए, तो जहाजी कम्पनी को किराये का एक आनुपातिक भाग खोना पड़ेगा। यदि उसने किराये का बीमा करा लिया है तो वह जितना किराया इस प्रकार खोयेगी, ठीक-ठीक उतनी ही रकम वह बीमा कम्पनी से वसूल कर सकती है।

सामान्य औसत

यदि किसी असाधारण बलिदान या व्यय के कारण, जो संकट के समय यात्रा से सम्बंधित समस्त हितों की रक्षा के लिए ऐच्छिक और विवेकपूर्ण ढंग में किया जाता है, उसे सामान्य औसत (General Average) कहते हैं। सामान्य औसत के निम्नलिखित आवश्यक लक्षण होते हैं :—

१. क्षति, बलिदान या व्यय का प्रत्यक्ष परिणाम होनी चाहिए।
२. बलिदान या व्यय असाधारण होना चाहिये और ऐसा नहीं जिसका यात्रा के संबंध में होना अवश्यम्भावी है।
३. बलिदान या व्यय स्वेच्छापूर्वक होना चाहिये, अर्थात् वह जानबूझ कर किया जाना चाहिये और आकस्मिक नहीं होना चाहिये।
४. बलिदान या व्यय विवेकपूर्वक एवं बुद्धिमानी से किया जाना चाहिए।
५. बलिदान या व्यय संकट के समय ही किया जाना चाहिये और वह संकट वास्तविक और असामान्य होना चाहिए। समुद्र के साधारण संकटों से यह अधिक होना चाहिये।

६. बलिदान या व्यय का उद्देश्य यात्रा से सम्बधित समस्त हितों की रक्षा होना चाहिये, किसी विशेष हित की अकेली रक्षा नहीं।

७. बलिदान या व्यय का परिणाम जहाज या माल के किसी भाग की रक्षा अवश्य होना चाहिये।

८. सामान्य भय किसी ऐसे व्यक्ति का परिणाम नहीं होना चाहिये जिसके हित का बलिदान किया गया हो या जो सामान्य औसत का शुल्क (Contribution) माँग रहा हो।

सामान्य औसत की किस्में—जो क्षति सामान्य औसत के अन्तर्गत आती हैं, उनको दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है : (अ) **सम्पत्ति का बलिदान**। सम्पत्ति के बलिदान के उदाहरण आसानी से दिये जा सकते हैं, जैसे जहाज को हलका करने के लिये किसी माल अथवा जहाज के किसी भाग को समुद्र में फेंक देना, आग बुझाने के लिये पानी डालने से किसी माल को कुछ हानि पहुँचना, इंजन में आग जलाने के लिये किसी माल को जलाना आदि। (आ) व्यय, जैसे जहाज को हलका करने के लिये थोड़े से माल को नावों पर लादना या क्षति पहुँचे हुये जहाज को बन्दरगाह तक खेने का व्यय।

सामान्य औसत का शुल्क (G/A Contribution)—सामान्य औसत होने पर जिस पक्ष पर आंशिक क्षति पड़ती है उसको यह अधिकार है कि वह, सामुद्रिक विधान के अनुसार, यात्रा से सम्बन्धित अन्य।हितों से आनुपातिक शुल्क वसूल करे। ऐसे शुल्क को "सामान्य औसत का शुल्क" कहते हैं।

सामान्य हित के लिये की जाने वाली आंशिक क्षति तीन पक्षों के लाभ के लिए की जाती है—जहाजी कम्पनी, माल के स्वामी और किराये का अधिकारी। स्वाभाविक रूप से सामान्य औसत को पूरा करने के लिये, इन्हीं तीनों हितों को शुल्क देना चाहिये। अतः उन्हें "शुल्क देने वाले हित" (Contributing Interests) कहते हैं।

किन्तु ये हित किन अनुपातो में शुल्क दें ? यह प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है। इस विषय पर वैधानिक नियम इस प्रकार है : (१) जहाजी कम्पनी को, जहाज के उद्दिष्ट बन्दरगाह पर पहुँचने पर, और यात्रा भग हुई हो तो मार्ग के बन्दरगाह पर पहुँचने पर, जहाज का जो मूल्य होता है, उसके आधार पर शुल्क देना पड़ता है। (२) माल के मालिक को माल के उद्दिष्ट बन्दरगाह पर पहुँचने पर, और यदि यात्रा भग हुई हो तो मार्ग के बन्दरगाह पर पहुँचने पर, माल का जो असली विक्रय-मूल्य (Net Selling Price) होता है—अर्थात् बिक्री का व्यय काट कर जो विक्रय-मूल्य बच रहता है—उसके आधार पर शुल्क देना पड़ता है। (३) किराया पाने के अधिकारी को, बलिदान या व्यय के फलस्वरुप जो किराया अवशेष रहता है, उसके आधार पर शुल्क देना पड़ता है।

उपरोक्त नियमो के अनुकूल जो मूल्य शुल्कों के आधार होते हैं, उन्हें 'शुल्क वाले मूल्य'' (Contributing Values) कहा जाता है। स्मरण रहे कि शुल्क वाले मूल्य बीमे के मूल्य से भिन्न होते हैं। मान लीजिये किसी जहाज पर, जिसे सामान्य औसत उठानी पडी है, लदे हुए किसी माल का १०,०००) बीमा कराया हुआ है, किन्तु इससे उद्दिष्ट स्थान, को पहुँच जाने पर उसका असली बाजार मूल्य १५,०००) है। ऐसी अवस्था में माल को १५,०००) के आधार पर शुल्क देना पड़ेगा, न कि १०,०००) के आधार पर। यदि माल का असली बाजार मूल्य केवल ६,०००) ही होता, तो ६,०००) के ही आधार पर शुल्क देना पड़ता।

सामान्य औसत का हिसाब (G/A Adjustment)—सामान्य औसत हो जाने पर जहाज जैसे ही उद्दिष्ट बन्दरगाह को आता है, या यात्रा भंग होने पर किसी मार्ग के बन्दरगाह को पहुँचता है, वैसे ही जहाज के कप्तान को किसी नोटरी पब्लिक की उपस्थिति में एक घोषणा करनी पड़ती है जिसे प्रमाण पत्र (Protest) कहा जाता है। इसमें कप्तान को होने वाली घटना को बताना पड़ता है और उसमें जो कार्रवाई की गई है उसकी सफाई देनी पड़ती है। उसे औसत-गणकों (Average Adjusters) को भी नियुक्त

करना पड़ता है जो सामान्य औसत को पूरा करने के लिये सम्बन्धित हितों के क्रमशः शुल्कों का हिसाब लगाते हैं। इस गणना में बहुत से वैधानिक तथा रिवाज-सम्बन्धी बातों का ध्यान रक्खा जाता है।

सामान्य औसत में हिसाब का उदाहरण १—एक जहाज, जिसका अपना मूल्य १५,०००) है, ६,०००) का माल लाद कर ले जा रहा है, और १,०००) का किराया उद्दिष्ट बन्दरगाह पर दिया जाने को है। जहाज की तली में चूहे छेद कर देते हैं जिसमें से होकर पानी जहाज में आ पाता है। अतः कप्तान एक-तिहाई माल जहाज से फेंकवा देता (jettison) है, और शेष माल किसी दूसरे जहाज पर २००) देकर लदवा देता है। यह मान कर कि जहाज, माल और किराये का शुल्क वाले मूल्य वही हैं जो ऊपर दिये गये हैं, सामान्य औसत का हिसाब तैयार कीजिये।

हल १ – ३,०००) रु० (फेंके जाने वाले माल का मूल्य, में २००) रु० (माल की लदाई) जोड़ने से ३,२००) आता है जो सामान्य औसत की मात्रा है। इसे जहाज, माल और किराये पर फैलाना है, जिनके शुल्कवाले मूल्य क्रमशः १५,००० रु० ६,००० रु० तथा १,००० रु० है। अतः सामान्य औसत का हिसाब इस प्रकार का होगा :

सामान्य औसत का हिसाब

शुल्क वाले हित	शुल्क वाले मूल्य (रु०)	शुल्क के अनुपात	शुल्क (रु०)
जहाज	१५,०००	१५,०००/२५,०००	१,६२०
माल	६,०००	६,०००/२५,०००	१,१५२
किराया	१,०००	१,०००/२५,०००	१२८
	२५,०००		३,२००

उदाहरण २—मान लीजिये किसी जहाज को दूसरे जहाज से बाँध कर बन्दरगाह पर ले जाया जाता है और इसका व्यय १,००० पौन्ड होता है।

जहाज का मूल्य ६,००० पौन्ड है, किराया १,००० पौन्ड के बराबर है और माल का मूल्य १०,००० पौन्ड है। यह क्षति शुल्क वाले हित किस प्रकार देंगे ?

हल २—यह नीचे बताया जाता है :—

(१) जहाजी कम्पनी को देना पड़ेगा	९/२० × १,००० = ४५० पौन्ड
(२) माल के स्वामियों को देना पड़ेगा	१०/२० × १,००० = ५०० ,,
(३) किराया पाने वाले को देना पड़ेगा	१/२० × १,००० = ५० ,,
	१,००० पौ०

सामान्य औसत और बीमा—जिस पक्ष पर सामन्य औसत की क्षति पड़ती है—अर्थात् जिसकी सम्पत्ति का बलिदान किया जाता है—उसे यह अधिकार होता है कि वह सीधा अपनी बीमा कम्पनी से पूरी क्षतिपूर्ति कराले। बीमाकर्ता उसे आवश्यक रकम अदा कर देगा, और फिर उतनी ही रकम का, बीमापात्र का स्वयं अपना शुल्क काट कर, सामान्य औसत के शुल्कों से भुगतान पा लेगा। यदि बीमा पात्र को अपनी जेब से सामान्य औसत का शुल्क देना पड़े, तो वह उतनी रकम बीमा कम्पनी से वसूल कर सकता है।

§ ३ नाश-रक्षण और विशेष व्यय

नाशरक्षक व्यय (Salvage)

यदि समुद्र में यात्रा करते समय सम्पत्ति और जीवन को कुछ सकट हो, तो उनको बचाने के लिये दूसरे जहाज या व्यक्ति की सहायता ली जा सकती है। ऐसे व्यक्ति को रक्षक (Salvor) कहते हैं। उसे जो पुरस्कार दिया जाता है उसे रक्षण पुरस्कार (Salvage) कहा जाता है। रक्षक को रक्षित सपत्ति पर ग्रहणाधिकार (Lien) मिल जाता है, और जब तक उसे पुरस्कार न मिल जाय तब तक वह सम्पत्ति को जमानत के रूप में रख सकता है। किन्तु यदि सम्पत्ति बचाने के उसके समस्त प्रयास निष्फल हो जायँ, तो वह

पुरस्कार का भागी नहीं होता। सामुद्रिक बीमा-पत्र के अन्तर्गत नाश-रक्षण व्यय बीमा कम्पनी से वसूल किया जा सकता है।

विशेष व्यय (Particular Charges)

सामान्य औसत में बलिदान और व्यय, दोनों ही सम्मिलित होते हैं। इसके विपरीत विशेष औसत में केवल किसी विशेष सम्पत्ति की क्षति ही शामिल की जाती है। इसमें किसी विशेष हित की रक्षा के लिये किया गया व्यय शामिल नहीं होता। इस प्रकार के व्यय को विशेष व्यय (Particular Charges) कहते हैं और यह सामुद्रिक बीमा-पत्र के अन्तर्गत बीमा कम्पनी से वसूल किया जा सकता है। विधान में विशेष व्यय की परिभाषा इस प्रकार की गई है: जो व्यय बीमा कराने वाले के लिये बीमे के विषय की रक्षा के निमित्त किया जाता है और जो सामान्य औसत तथा नाश-रक्षण व्यय के अतिरिक्त होता है, उसे विशेष व्यय कहते हैं।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१. सामुद्रिक बीमे में आंशिक हानि से क्या आशय है? इसके कौन-कौन से रूप हैं? उनके नाम बताइये और उन्हें समझाइये। (उत्तर प्रदेश, १९५३)

२ सामुद्रिक बीमा-पत्रों के सम्बन्ध में "विशेष औसत" तथा "साधारण औसत" हानियों में क्या अन्तर होता है? स्पष्ट रूप से वर्णन कीजिये। (उत्तर प्रदेश, १९५२)

३. वास्तविक सम्पूर्ण क्षति तथा रचनात्मक सम्पूर्ण क्षति का अर्थ बताइये। (यू॰ पी॰, १९४७)

४. निम्नलिखित में किस प्रकार की क्षति हुई है? (अ) जहाज द्वारा भेजा गया तम्बाकू समुद्र के पानी से इतना क्षति-प्राप्त हो गया है कि वह तम्बाकू की भाँति नहीं रह गया। (आ) समुद्र के पानी से क्षति-प्राप्त तम्बाकू को ठीक

करके तम्बाकू की भाँति बेचा जा सकता है, किन्तु ठीक करने में जो व्यय होगा वह तम्बाकू के विक्रय-मूल्य से अधिक होगा। (यू० पी० १६४४)

५. (अ) सामान्य औसत की क्षति के आवश्यक लक्षण क्या हैं ? यह विशेष औसत की क्षति से किस प्रकार भिन्न होती है ?

(आ) निम्नलिखित अवस्था में क्षति-प्राप्त माल के स्वामी को क्या शुल्क मिलेगा ? जहाज का मूल्य ८,००० पौन्ड है, किराया २,००० पौंड है, और माल का कुछ मूल्य १०,००० पौंड है जिसके दस व्यक्ति समान मूल्य के स्वामी हैं। सामान्य औसत सम्बन्धी बलिदान में माल के एक स्वामी का माल फेंक दिया गया है। (यू० पी०, १६४२)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

६. माल फेंकना (Jettison) क्या होता है ? सामान्य औसत के सिद्धातों को अपने शब्दों में लिखिये। सामान्य औसत के समामेलन (Adjustment) का एक उदाहरण दीजिये। (१६५३)

७. सम्पूर्ण क्षति के प्रति सामुद्रिक बीमा से आप क्या समझते हैं ? क्षति किन वर्गों में बाँटी जाती है ? इस प्रकार की क्षति को दृढ़ (Substantiate) करने के लिये किन कागजातों का होना आवश्यक है ? (१६५३)

८. (अ) साधारण औसत को हानि के क्या आवश्यक लक्षण हैं ? यह विशेष औसत की हानि से किस प्रकार भिन्न होती है ? (आ) निम्नलिखित अवस्था मे क्षति-प्राप्त माल के स्वामी को अन्य हितों से क्या चन्दा मिलेगा ? जहाज का मूल्य ८,००० है, किराया २,००० है और माल १०,००० का है जो दस स्वामियो के समान मूल्य का है। माल के एक स्वामी का माल साधारण औसत के बलिदान मे फेक दिया जाता है। (राजपूताना, १६५१, बनारस, १६५०)

६. सामुद्रिक बीमा पत्र में "सम्पूर्ण हानि के प्रति बीमा" से आप क्या समझते हैं ? सम्पूर्ण हानि किन वर्गों में विभाजित की जा सकती है ? इस हानि के दावे को पक्का करने के लिये किन रुक्कों की आवश्यकता होती है ? (राजपूताना, १६५०)

१०. सामान्य औसत, विशेष औसत, वास्तविक सम्पूर्ण क्षति तथा रचनात्मक सम्पूर्ण क्षति का अर्थ स्पष्ट कीजिये। (राजपूताना बोर्ड, १९४७)

११. विशेष औसत क्या होती है ? विशेष औसत का दावा करने के लिये किन रुक्कों का होना आवश्यक है ?

निम्नलिखित ब्यौरे के आधार पर विशेष औसत का लेखा तैयार कीजिए। ६०० कपास की गाँठों का, जिनमें से प्रत्येक का मूल्य १० पौण्ड है, बीमा १०,००० पौण्ड के लिये कराया था। उद्दिष्ट बन्दरगाह में आने पर ३१६ गाँठे क्षति-प्राप्त निकलीं। इनमें से ७८ गाठें ६१४ पौण्ड ६ शि० को बिकीं और २३८ गाठें २,५६१ पौण्ड १६ शि० ६ पे० को बिकीं। यदि इन गाँठों में अवस्था ठीक होती तो वे ३,८२१ पौं० १३ शि० में बिकतीं। निम्नलिखित रीति व्यय हुए : परीक्षा-पुरस्कार २ पौण्ड; बन्दरगाह पर चौकीदारी का खर्च १ पौंड ६ पें०; ढुलाई ८ पौं० ४ शि० (राजपूताना का बोर्ड, १९४५)

पटना, इंटर कामर्स

१२. सामुद्रिक बीमे से सम्बन्धित "साधारण औसत की हानि" क्या होती है ? यह विशेष औसत की हानि से किस प्रकार भिन्न होती है ? (पटना, १९५२ वार्षिक)

१३. वास्तविक सम्पूर्ण क्षति तथा रचनात्मक सम्पूर्ण क्षति का अन्तर्भेद स्पष्ट कीजिए। (पटना, १९५१ पूरक)

बिहार, इन्टर कामर्स

१४. सामुद्रिक क्षति का क्या अर्थ है ? इसके विविध प्रकार क्या-क्या हैं ? (बिहार, १९५५)

बनारस, इन्टर कामर्स

१५. सामान्य औसत तथा विशेष औसत का अन्तर्भेद बताइये और उन परिस्थितियों का भी वर्णन कीजिये जिनमें कि प्रत्येक लागू होती हैं। (बनारस, १९४८)

१६. निम्नलिखित का अर्थ स्पष्ट कीजिये : रक्षण-पुरस्कार (Salvage),

रचनात्मक सम्पूर्ण क्षति; निकट कारण का सिद्धांत; समुद्रयोग्यता; विशेष औसत-मुक्त ; विदेशी सामान्य औसत; सम्पूर्ण मूल्य । (बनारस, १९४५)

सागर, इंटर कामर्स

१७. सामान्य औसत क्षति के कौन-कौन आवश्यक अंग हैं ? इस क्षति और विशिष्ट औसत क्षति में क्या अन्तर है ? (सागर, १९५५)

दिल्ली, हायर सेकिंडरी

१८. विशेष औसत और साधारण औसत का भेद बताइये । (दिल्ली, १९५१)

१९. निम्नलिखित का अर्थ बताइये : स्थान-ग्रहण का सिद्धान्त; जहाजी बन्धन; सामान्य औसत, बीमायोग्य हित रहित पत्र; निकट कारण । (दिल्ली, हायर सेकिंडरी, १९४८)

२०. सामान्य औसत और विशेष औसत का भेद स्पष्ट कीजिये और बताइये कि किन अवस्थाओं में प्रत्येक लागू होती हैं ? (देहली, १९४१)

मध्य भारत, इन्टर कामर्स

२१. एक जहाज जो माल से लदा है कलकत्ते से टोकियो के लिए रवाना होता है । मार्ग में कुछ माल गर्म होकर बेकार हो गया और कप्तान ने उसे फेंकवा दिया । यदि इसे जहाज पर रक्खा रहने दिया जाता, तो पूरे जहाज और माल की सुरक्षा का भय होता । क्या नष्ट माल के स्वामी का जहाज तथा अन्य माल के स्वामियों के प्रति कुछ दावा है ? क्या जहाज का स्वामी किराये की हानि के लिए माल के स्वामियों पर दावा कर सकता है ? (मध्य भारत, १९५४)

फुटकर

अध्याय ५०

व्यापार आरम्भ करना

एक समय था जब कि प्रायः प्रत्येक व्यक्ति, जो अपनी जीविका कमाने के लिये दूकान खोलने की बात सोचता, यही आशा करता था कि उसे व्यापार में सफलता मिलेगी। किन्तु अब समय बहुत बदल गया है। आजकल तीक्ष्ण और भयकर स्पर्द्धा, विशिष्टीकरण, सघ-स्थापना और ट्रस्टों का जमाना है और इस कारण व्यापार में जोखिम (risk) बहुत बढ़ गई है। व्यापारियों को अब पग-पग पर विशेष सावधानी से काम लेना पड़ता है। व्यापारिक क्षेत्र में प्रवेश करने वाले के सामने बहुत सी विषम और महत्वपूर्ण समस्यायें उपस्थित होती हैं, और यदि उनका सावधानी से विश्लेषण, अध्ययन और हल न किया जाय, तो व्यापार में सफलता प्राप्त होना सशयपूर्ण होता है। ये समस्यायें दो भागों में बाँटी जा सकती हैं : (१) व्यापार प्रारम्भ करने के पूर्व *किन-किन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है?* (२) *व्यापारिक सफलता के* कौन-कौन मूल साधन हैं? इस अध्याय में हम इन्हीं समस्याओं पर प्रकाश डालेंगे।

§ १. व्यापार प्रारम्भ करने के पूर्व ध्यान देने योग्य बातें

व्यापार प्रारम्भ करने के पूर्व यह आवश्यक है कि बहुत सी प्रारम्भिक बातों का, जिन पर व्यापार की सफलता निर्भर होती है, योजनात्मक अध्ययन किया जाय। यदि कोई व्यक्ति व्यापार केवल इसलिये चलाता है कि उसके मस्तिष्क में उस व्यापार के चलाने की बातें वैसे ही आ गई हैं और उसने वैज्ञानिक

अध्ययन द्वारा उसकी सफलता का आश्वासन प्राप्त नहीं किया, तो यह जुआ खेलने के समान है। बहुत से व्यापार इसी कारण असफल होते हैं और होते रहेंगे। व्यापार प्रारम्भ करने के पूर्व जिन बातों पर विचार करना आवश्यक है, उनका वर्णन नीचे किया जाता है :

१. व्यापार की किस्म—व्यापार में प्रवेश के इच्छुक व्यक्ति को सबसे पहले इस बात का निर्णय करना चाहिये कि वह कौन-सा व्यापार स्थापित करना चाहता है। व्यापार के इतने भेद और उपभेद हैं कि उनमें से सर्व-श्रेष्ठ और अधिकतम लाभ वाले व्यापार को चुनने के लिए काफी ज्ञान, अनुभव और दूरदर्शिता की आवश्यकता होती है। एक नवयुवक में जिसे व्यापार का ज्ञान नहीं, ये सब गुण नहीं हो सकते। उसे अनुभवी व्यापारी, व्यापारिक विषयों के अध्यापक एवं अर्थशास्त्रियों की सहायता लेनी पड़ेगी क्योंकि ये व्यक्ति उसे ठीक ठीक सम्मति दे सक्ते हैं।

व्यापार की उपयुक्तता अथवा अनुपयुक्तता कई बातों को सोचकर निर्धारित की जाती है। पहली बात तो लाभ देने की सामर्थ्य है। जिस व्यापार में लाभ की दर बहुत ऊँची होती है, उसमें अधिक व्यापारी नहीं होते और उसके विस्तार की आवश्यकता भी होती है, अत-यदि अन्य बातें समान हों तो ऐसे व्यापार में असफलता का भय कम होता है। किन्तु लाभ की मात्रा ही अन्तिम निर्णायक नहीं होनी चाहिये; क्योंकि जोखिम की मात्रा तथा आवश्यक कुशलता एवं ज्ञान की मात्रा अन्य महत्वपूर्ण बातें है। हो सकता है कि एक व्यापार में लाभ इतना अधिक इसलिए है कि उसकी जोखिम को थोड़े से ही व्यक्ति झेलने के लिये तैयार होते हैं, या उसमें इतने ऊँचे प्रकार के टैक्निकल या सामान्य ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है कि वह मुट्ठी भर व्यक्तियों के ही पास होता है। यदि ऐसा हुआ, तो लाभ की अधिक मात्रा भी बहुत से व्यापारियों को आकर्षित नहीं कर सकेगी। अतः दूसरी बात जिस पर ध्यान देना आवश्यक है, जोखिम और आवश्यक कुशलता की मात्रा है।

इसके अतिरिक्त व्यापार में कितनी पूँजी की आवश्यकता पड़ेगी, यह भी एक महत्वपूर्ण विषय है। जिस व्यक्ति के पास अपनी निजी पूँजी बहुत सीमित है और जो औरों से पूँजी एकत्रित नहीं कर सकता, वह कोई बहुत बड़ा कारखाना या बैंक एकबारगी स्थापित नहीं कर सकता। उसे कोई छोटे पैमाने का ही व्यापार चुनना पड़ेगा जिसे वह बाद को पूँजी के बढ़ने के साथ साथ बढ़ा सके। अन्त में, व्यापार आरम्भ करने वाले के व्यक्तिगत झुकाव को भी देखना चाहिये। यदि उसे मिस्त्री कला में दिलचस्पी है, तो उसे फोरमैन का काम नहीं करना चाहिये, यदि उसे चित्रकारी में आनन्द आता है, तो उसे फुटकर दूकान नहीं खोलनी चाहिये। यह बात सदैव स्मरण रखनी चाहिये कि मनुष्य की जिसमें स्वाभाविक रुचि होगी, उसमें उसे सहज में ही सफलता मिल जायगी। इन सब बातों को सोचकर ऐसा व्यापार चुना जा सकता है जिसमें लाभ की सबसे अधिक आशा है।

आजकल विशिष्टीकरण इतना बढ़ गया है कि प्रत्येक व्यापार कई शाखाओं में विभाजित और उपविभाजित हो गया है। प्रारम्भ में केवल एक ही शाखा में काम करना चाहिये। उदाहरण के लिए जो व्यक्ति क्रय विक्रय का काम करना चाहता है, वह आयात-निर्यात कर सकता है, या थोक माल बेच सकता है, या फुटकर माल बेच सकता है। इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति किताबों का काम करना चाहता है तो वह या तो पुरानी और नई दोनों प्रकार की किताबें बेच सकता है या पुस्तकें प्रकाशित भी कर सकता है या स्वयं अपना मुद्रणालय भी खोल सकता है। प्रारम्भ करने के पहले इस बात का निश्चित निर्णय कर लेना चाहिए कि व्यापार की किस शाखा में काम करना है।

७ व्यापारिक सगठन का स्वरूप—कौन सा व्यापार करना है इसका निश्चय हो जाने के पश्चात् इस बात का निर्णय करना पड़ता है कि व्यापारिक सङ्गठन का क्या स्वरूप हो। अन्य शब्दों में, इस बात का निश्चय करना पड़ता है कि व्यापारिक भवन एकाकी व्यापारिक इकाई हो या साझेदारी फर्म हो या सयुक्त पूँजी की कम्पनी। व्यापारिक सगठन के प्रत्येक स्वरूप के अपने अलग अलग लाभ व हानियाँ हैं जिनका वर्णन किया जा चुका है। कुछ

व्यापार ऐसे होते हैं कि जो संयुक्त पूँजी की कम्पनी के आधार की अपेक्षा साझेदारी के फर्म के आधार पर अधिक सफलतापूर्वक किये जा सकते हैं; कुछ दूसरे व्यापार इसके विपरीत भी होते हैं। उदाहरण के लिये एक छोटी फुटकर दूकान एकाकी व्यापार या साझेदारी फर्म के रूप में बहुत अच्छी तरह चलाई जा सकती है; इसके लिए संयुक्त पूँजी की कम्पनी खड़ी करना हास्यास्पद और बेकार होगा। इसी प्रकार यदि हम एक बड़ा कारखाना खोलना है जिसके लिए हमें करोड़ों रुपये और प्रचुर मात्रा में उत्पादन सामग्री की आवश्यकता पड़ेगी, तो इसके लिए एकाकी व्यापारिक भवन स्थापित करना निरर्थक ही होगा। सब बातों को सोच-समझकर व्यापार को वह स्वरूप देना चाहिये जो सबसे अधिक उपयुक्त हो।

३. पूँजी—तीसरी महत्वपूर्ण बात पूँजी एकत्रित करना है। यदि व्यापारी स्वयं ही धनी व्यक्ति है, तो वह व्यापार में केवल अपनी ही पूँजी लगा सकता है। किन्तु यदि उसको निजी पूँजी से भी अधिक पूँजी आवश्यक हो तो वह उधार लेकर अपनी जोखिम पर व्यापार में लगा सकता है और या वह पूँजी अपने मित्रों या सम्बन्धियों को व्यापार में साझेदार बना सकता है। यदि व्यापारिक इकाई बहुत बड़ी है और व्यापारिक संगठन ने संयुक्त पूँजी की कम्पनी का स्वरूप ले लिया है, तो उसे प्रास्पेक्टस या विवरण प्रकाशित करके जनता से पूँजी एकत्रित करनी पड़ेगी।

ऊपर के विवरण से स्पष्ट है कि पूँजी का स्रोत क्या होगा, यह व्यापारिक संगठन से वैधानिक या कानूनी स्वरूप पर निर्भर होता है, साथ ही साथ यह भी सच है कि व्यापारिक संगठन का स्वरूप आवश्यक पूँजी पर निर्भर होता है।

व्यापार में जितनी पूँजी की आवश्यकता पड़े, उसकी मात्रा का ठीक-ठीक अनुमान लगाना चाहिये। पूँजी की निम्नलिखित बातों के लिए आवश्यकता पड़ती है :

(१) मशीन, इमारत, फर्नीचर तथा अन्य स्थिर सम्पत्ति में लगाने के लिए पूँजी। इसे स्थिर पूँजी (fixed capital) कहते हैं।

(२) स्टाक आदि में लगाने के लिए पूँजी। इसे कार्यशील पूँजी (working capital) कहा जाता है।

(३) पूँजी जिसका ग्राहकों को माल उधार देने के लिए प्रयोग किया जाता है।

इन तीनों राशियों के योग में से जितनी राशि तक का ऋण व्यापारी को मिल सकता है वह घटा देना चाहिए। शेष रकम पूँजी के रूप में एकत्रित करना आवश्यक है। यदि पूँजी इस रकम से कम हुई तो कदाचित् व्यापारिक भवन में अपर्याप्त स्थिर सम्पत्ति हो और व्यापार में बाधा आए, या स्टाक की मात्रा काफी न हो सके, या ऋण दाता भुगतान माँगे तब अदा करने के लिए रुपये की कमी हो जाय। इन सब दशाओं में व्यापारी की प्रतिष्ठा तथा सफलता को हानि पहुँचेगी। इसके विपरीत यदि पूँजी वास्तविक आवश्यकता से अधिक हुई, तो परिकल्पी (Speculative) मार्गों में प्रवेश करने या व्यापार को प्रबन्धयोग्य (Manageable) सीमा से अधिक बढ़ाने का लोभ होगा; साथ ही साथ लाभ की दर, जो पूँजी की राशि के आधार पर आँकी जाती है, गिर जायगी। पूँजी के वास्तविक आवश्यकता के बराबर होने के अतिरिक्त, उसका विभिन्न प्रयोगों के लिए—स्थिर सम्पत्ति, कार्यशील सम्पति तथा ऋण प्रदान के लिए उपयुक्त विभाजन भी होना चाहिए।

४. व्यापार का स्थान—एक अन्य बात जिसका निर्णय करना आवश्यक है यह है कि व्यापारिक भवन कहाँ स्थित हो। यह बात बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि हर स्थान के कुछ ऐसे लाभ होते हैं जो व्यापार में सहायक होते हैं और साथ ही साथ कुछ ऐसे दोष भी होते हैं जो व्यापार को हानि पहुँचाते हैं। व्यापारिक भवन ऐसी जगह होना चाहिये जहाँ कि लाभ सबसे अधिक और हानियाँ सबसे कम हों।

यदि किसी कारखाने की स्थापना करनी हो तो उसकी स्थित के निर्णय

करने में सस्ती चालक शक्ति की प्राप्ति, सस्ती और कुशल श्रम की प्राप्ति, कच्चे माल तथा बाजार की निकटता, यातायात और सन्देशवाहन के साधनों की विद्यमानता आदि बातों पर ध्यान देना आवश्यक है। यदि एक थोक दुकान चलानी है तो उसकी स्थिति ऐसी जगह होनी चाहिए कि वहाँ फुटकर व्यापारी सुगमतापूर्वक आ सकें और उस दूकान से उनकी दूकानों तक माल के पहुँचने में अधिक समय न लगे। फुटकर दूकान की स्थिति के निर्णय करने में बहुत सावधानी की आवश्यकता होती है। साधारणतया फुटकर दूकान शहर के बीच में होनी चाहिए जिससे कि सब व्यक्ति वहाँ आसानी से पहुँच सकें। देखा यह जाता है कि एक ही व्यापार करने वाली दूकानें बाजार के एक निश्चित भाग में स्थापित होती हैं। इस प्रकार की स्थिति में दूकान स्थापित करने में लाभ यह होता है कि जब व्यापारी वह माल खरीदने के लिए बाजार के उस निश्चित भाग में आता है, तब उसका ध्यान नई दूकान की ओर भी स्वाभाविक रूप से आकर्षित होता है। किन्तु यदि ऐसे स्थान में बहुत सी दूकानें केन्द्रित हैं और दूसरे स्थानों में उसकी श्रेणी की दूकानें बहुत कम हैं, तो हो सकता है कि दूकान को किसी दूसरे स्थान पर ही स्थापित करना वाञ्छनीय हो। उपरोक्त बातों तथा अन्य इसी प्रकार की बातों को ध्यान में रख कर इस बात का निर्णय कर लेना चाहिये कि व्यापारिक भवन किस स्थान पर स्थापित किया जाय।

५. सेवक-वर्ग (Staff)—व्यापार में क्लर्कों, विक्रेताओं आदि की भी आवश्यकता होती है। सेवकों को रखने में विशेष सावधानी की आवश्यकता होती है। सस्तेपन के विचार से कार्यक्षमता का बलिदान नहीं करना चाहिये। देखा गया है कि यद्यपि एक कुशल और योग्य व्यक्ति वेतन अधिक लेता है, फिर भी दीर्घकालीन में वही सस्ता प्रमाणित होता है, किन्तु इसका यह आशय नहीं कि अधिक वेतन माँगने वाला व्यक्ति कम वेतन माँगने वाले व्यक्ति की अपेक्षा सदैव ही अधिक कार्यकुशल होगा। करना यह चाहिये कि प्रत्येक प्रार्थी की सामर्थ्य और योग्यता का सच्चा अनुमान लगा लिया जाय और उसी के अनुसार उसे वेतन दिया जाय। जहाँ तक हो सके निष्कपट, परिश्रमी,

ईमानदार और कुशल व्यक्तियों को नौकरी देनी चाहिये। किन्तु आरम्भ में बहुत से नौकर नहीं रखने चाहिये, क्योंकि शुरू शुरू में लाभ सीमित होता है और उस अवस्था में अधिकतम मितव्ययिता करनी चाहिए।

६. कार्यालय की सामग्री (Equipment)— प्रत्येक व्यापारिक भवन को दफ्तर अवश्य रखना पड़ता है। सन्देशवाहन के शीघ्र साधनों के वर्तमान युग में, पत्र व्यवहार पर बहुत निर्भर रहना पड़ता है; और व्यापार के साइज और आवश्यकता के अनुसार कार्यालय में कागज, टाइपराइटर और डुप्लीकेटर तथा अन्य वस्तुएँ होना आवश्यक हैं। ठीक ठीक हिसाब-किताब रखने के लिए उपयुक्त बहियाँ या रजिस्टर भी होने चाहिये। दफ्तर की सामग्री साधारणतया आधुनिक और सुविधाजनक होनी चाहिये, पुरानी और असुविधापूर्ण नहीं।

व्यापार प्रारम्भ करने के पूर्व ऊपर बताये गये महत्वपूर्ण विषयों पर ध्यान देना नितान्त आवश्यक है। इस चिन्तन में काफी समय, धन तथा परिश्रम लगाना पड़ता है, किन्तु इससे व्यापार में सफलता मिलने का आश्वासन हो जाता है।

§ २. व्यापारिक सफलता के मूल तत्व

अब हम उन मूल तत्वों का विवेचन करेंगे जिन पर व्यापारिक सफलता निर्भर होती है।

१. मनुष्य (Man) — व्यापारिक सफलता उसी व्यक्ति को प्राप्त हो सकती है जो श्रेष्ठ और सज्जन हो। आदर्श व्यापारी का शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक विकास ऊँचे दर्जे का होना चाहिये। शारीरिक स्वास्थ्य व्यापारिक सफलता की कुञ्जी है, अपने स्वास्थ्य को ठीक रखना व्यापारी का पहला कर्त्तव्य है। मानसिक कुशलता उसका दूसरा गुण है। व्यापारिक जगत में किस व्यक्ति की कितनी उन्नति हो सकती है, यह बहुत कुछ इस बात पर निर्भर होता है कि उसका मस्तिष्क कैसा है और वह उसका कैसा उपयोग करता है। सफल व्यापारी का तीसरा गुण उसका ऊँचा नैतिक चरित्र है। यद्यपि मस्तिष्क और चरित्र दोनों ही महत्वपूर्ण होते हैं किन्तु दोनों में से चरित्र का महत्व

बड़ा है। शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक दृष्टि से ऊँचे व्यक्ति को व्यापारिक जगत् में निश्चय सफलता मिलेगी और वह एक दिन औद्योगिक नेता और व्यापार-शिरोमणि अवश्य बन जायगा।

२. सम्पत्ति या पूँजी (Money)—व्यापारिक सफलता का दूसरा मूल-तत्व पूँजी है। कोई भी व्यापार बिना पूँजी लगाए नहीं किया जा सकता और बिना पूँजी के पर्याप्त हुए किसी भी व्यापार को सफलता भी नहीं मिल सकती। हम ऊपर पूँजी तथा सम्बन्धित विषयों पर प्रकाश डाल ही चुके हैं और उनका दोहराना व्यर्थ होगा।

३. उत्साह और लगन (Push)—उत्साह और लगन व्यापारिक सफलता के तीसरे मूल-तत्व हैं। व्यापारी में अदम्य उत्साह और तीक्ष्ण अभिरुचि होनी चाहिये। लाभ की केवल इच्छा करने से काम नहीं चलता, उस इच्छा को क्रियात्मक रूप देने की योग्यता का होना भी आवश्यक है। व्यापार में सच्ची लगन और अदम्य उत्साह की जरूरत पड़ती है। व्यापार वह परीक्षा, स्थल है जिसमें अनिश्चित मानसिक अवस्था वाले या अशक्त एवं मन्द गति वाले व्यक्ति शीघ्र ही असफल हो जाते हैं। व्यापार में चढ़ाव-उतार, हानि-लाभ होते हैं; किन्तु जो इनकी समस्याओं एवं कठिनाइयों का सामना कर सकता है, जो मस्तिष्क और दूरदर्शिता से काम करता है और जो कठिनाइयों और हानि के होते हुए भी लगन से काम करता है, उसे ऊँचा पुरस्कार भी मिलता है। व्यापार में हर प्रकार की निरुत्साह बात के होने हुए भी प्रयोग और प्रयास करते रहने की आदत सबसे अधिक सहायक होती है।

४. विवेक (Tact) और शिक्षा—विवेक का अर्थ यहाँ विस्तृत अर्थ में लगाना चाहिये और इसमें मस्तिष्क सम्बन्धी समस्त गुणों का समावेश है। व्यापारी में साधारण बुद्धि (Common Sense) अवश्य होनी चाहिये। इसके साथ उसमें आत्म-विश्वास, सावधानी को पहचानने की शक्ति, ठंडे मस्तिष्क से सोचने की आदत, बुरी अवस्था में भी चित्त को स्थिर रखने का गुण, त्रुटिपूर्ण प्रमाणित होने पर अपनी सम्मति के त्याग करने का साहस और आलोचना को सहन करने की शक्ति भी होनी चाहिये। ये सब गुण

व्यापारिक सफलता के लिए आवश्यक हैं। ये गुण अंशतः पैतृक होते हैं, अंशतः शिक्षा द्वारा प्राप्त किये जा सकते हैं और अंशतः अनुभव द्वारा सीखे जाते हैं। कुछ मनुष्यों की राय है कि व्यापारिक शिक्षा केवल व्यर्थ ही नहीं प्रत्युत शिक्षार्थी को व्यापार के अयोग्य बना देती है। किन्तु यह कटु आलोचना ठीक नहीं। आजकल व्यापार में इतनी स्पर्द्धा होती है कि सफलता प्राप्त करने के लिये एक व्यापारी को अन्य व्यापारियों से अधिक कुशल होना आवश्यक है, और श्रेष्ठतर कुशलता शिक्षा द्वारा प्राप्त की जा सकती है। आजकल के विशिष्टीकरण के युग में व्यापारी को प्रतिदिन सम्मुख आने वाली विभिन्न प्रकार की विषम समस्याओं को समझने और उन्हें हल करने के लिए व्यापारिक शिक्षा लेना नितान्त आवश्यक है।

व्यापारी को यदि उन्नति करनी है तो उसे किसी कुशल व्यापारिक संगठन के विभिन्न विभागों के अन्तर्सम्बन्ध का ज्ञान प्राप्त कर लेना अत्यन्त आवश्यक है। उसे किसी विशेष प्रणाली के प्रचलन का ऊपरी ज्ञान प्राप्त कर लेना ही पर्याप्त न होगा, प्रत्युत उसे उन आधारभूत सिद्धान्तों का मनन करना पड़ेगा जिन पर वह प्रणाली खड़ी होती है। यदि कोई व्यक्ति व्यापार के प्रत्येक विभाग में स्वयं काम करके ज्ञान प्राप्त करना चाहे तो उसे शिक्षा पूरी करने में वर्षों लगाने पड़ेंगे और फिर भी व्यापारिक सफलता के मूल तत्वों का ज्ञान उसे कदाचित् न हो पावे। किन्तु यदि व्यापारिक नेताओं के अनुभवों को वह पढ़े और उनका मनन करे, तो उसे यही ज्ञान शीघ्र ही प्राप्त हो जायगा।

यह सच है कि यद्यपि हमारे अनेक औद्योगिक और व्यापारिक नेताओं ने कभी किसी महाविद्यालय या विश्वविद्यालय में नाम लिखा कर व्यापारिक शिक्षा नहीं ली, फिर भी उन्होंने व्यापार में बहुत सफलता प्राप्त की है। किन्तु यदि महान् शिक्षा विशेषज्ञों और क्रियात्मक व्यापारियों द्वारा निर्धारित की हुई शिक्षा को ये नेतागण प्राप्त कर सकते, तो कदाचित् वे और भी अधिक सफलता प्राप्त करते।

५. सिद्धान्त या सदाचार—सदाचार व्यापारिक सफलता का पाँचवाँ

मूल-तत्व है। जो व्यापारी बेईमानी का व्यवहार करते हैं, वे सम्भव है कुछ समय तक फलें फूलें, किन्तु धीरे धीरे उनका दुराचार प्रकाशित हो जायगा और ग्राहकगण उन्हें छोड़ना आरम्भ कर देंगे। इसके विपरीत, ईमानदार व्यापारी पर ग्राहकों का इतना विश्वास हो जाता है कि वे उसे अपना परम मित्र समझते हैं और दूसरे व्यापारी के पास झाँकते तक नहीं। कहा जाता है कि ईमानदारी सर्वश्रेष्ठ नीति है, यह बात सबसे अधिक व्यापार में घटती है। आप बहुधा देखेंगे कि ईमानदार व्यापारी खूब सफल होते हैं और पीढ़ियों तक उनका काम चलता है, और बेईमान व्यापारी को बुलबुले की भाँति थोड़े ही समय में व्यापार से अलग होना पड़ता है।

६ ग्राहकों की प्रतिष्ठा करना—एक विशेष बात जिसको सदैव ध्यान में रखना आवश्यक है यह है कि सारे व्यापार के केन्द्र ग्राहक हैं। व्यापारिक भवन ग्राहक के लिए होता है, ग्राहक व्यापारिक भवन के लिए नहीं। व्यापार का उद्देश्य ही ग्राहकों को आकर्षित करना, उन्हें सतुष्ट करना और उन्हें बनाये रखना है। अत ग्राहकों की सतुष्टि बहुत महत्वपूर्ण बात है। इस बात को व्यापारी को कभी भी नहीं भुलाना चाहिये। इसीलिए कहा जाता है कि 'ग्राहक सदैव ठीक है।' यदि कोई ग्राहक नाराज हो जाय, तो उसे विवेकपूर्वक शात और प्रसन्न कर देना चाहिये। ग्राहक को सतुष्ट करने या उसकी शिकायत दूर करने में कुछ व्यय तो अवश्य होता है किन्तु ग्राहक के लाभ बने रहने के मूल्य के सामने यह कुछ भी नहीं है। सफल व्यापारी को मानवीय स्वभाव का अच्छा अध्ययन भी अत्यन्त आवश्यक है। ग्राहकों में विश्वास उत्पन्न करने के लिए व्यापारी को हर माल का अच्छा ज्ञान प्राप्त कर लेना आवश्यक है। जो व्यापारी ग्राहकों का महत्व नहीं समझता, उसे सफलता के मार्ग में बड़ी बड़ी कठिनाइयों का सामना करना होगा।

§ ३. नये व्यापार का संगठन

यदि किसी व्यक्ति को स्थापित व्यापार के प्रबन्ध करने का भार सौंपा जाय, तो उसका काम विशेषतया कठिन नहीं होगा, क्योंकि व्यापार के विभिन्न क्षेत्रों

से सम्बन्धित नीति पहले से ही स्थिर होगी और उसे केवल उनके अनुकूल कार्य करना पड़ेगा। हाँ, वह आवश्यकतानुसार उनमें थोड़ा-बहुत परिवर्तन या हेर-फेर अवश्य करेगा। किन्तु यदि उसे कोई व्यापार नये सिरे से संगठित करना पड़े, तो उसका काम अवश्य कठिन होगा।

ऐसे व्यक्ति को सबसे पहले व्यापारिक संगठन के वैधानिक स्वरूप, आवश्यक पूँजी, व्यापार की स्थिति, कर्मचारियों की संख्या और गुण, कार्यालय के सामान आदि विषय के संबन्ध में स्पष्ट और निश्चित नीति निर्धारित कर लेनी चाहिये। इसके बाद उसे यह चेष्टा करनी चाहिये कि सारा काम निर्धारित नीति के ही अनुकूल हो।

विशेषतया उसे सतर्क रहना चाहिये कि जिस पैमाने को निश्चित कर लिया गया है उसे बढ़ाया न जाय क्योंकि इससे पूँजी के कम हो जाने का भय होता है और इसके परिणाम खराब हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त आरम्भ में यह अनुमान कर लिया जाता है कि लागत और मूल्य क्या होंगे और कितना लाभ होगा। व्यापार की सफलता इस बात पर निर्भर होती है कि वास्तविक लागत, यथासम्भव अनुमानित लागत, अनुमानित मूल्य और वास्तविक मूल्य से कम ही रहे।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१. परीक्षा में उत्तीर्ण होने के पश्चात् आप एक साधारण व्यवसाय स्थापित करना चाहते हैं। व्यवसाय चुनने और स्थापित करने में जिस प्रणाली का आप अनुसरण करेंगे उसका संक्षेप में वर्णन कीजिये। (उ० प्र०, १९५४)

२. आपके मत में व्यापार में सफलता प्राप्त करने के लिए जो आवश्यक तत्व हैं, उनकी विवेचना कीजिये। (यू० पी०, १९५१)

३. नया व्यापार स्थापित करने में किन बातों पर ध्यान देना चाहिये और क्यों? (यू० पी०, १९३९)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

४. व्यापार में सफलता प्राप्त करने के प्रधान मूल तत्व क्या होते हैं ! (१६५१)

५. उत्तरी भारत में फर्नीचर का व्यापार करने का निश्चय किया गया है और आपको २५०) मासिक के वेतन पर इसका जनरल मैनेजर नियुक्त किया गया है। लिखिये कि आप व्यापार का सगठन किस प्रकार करेंगे ? (राजपूताना, १६४६)

६. आपको एक लाख रुपया दिया जाता है। आप कौन सा व्यापार इस पूँजी से करेंगे ? आप अपना प्रधान कार्यालय कहाँ रक्खेंगे ? (राजपूताना, १६४६)

पटना, इन्टर कामर्स

७. व्यापार का आरम्भ करने के पहले किन-किन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है ? विस्तारपूर्वक विवेचना कीजिये। (पटना, १६४८ वार्षिक)

बिहार, इन्टर कामर्स

८. व्यापार किसे कहते हैं ? यदि आप व्यापारी होना चाहते हैं, तो आप व्यापार का चुनाव कैसे करेंगे ? (बिहार, १६५४)

बनारस, इन्टर कामर्स

९. मान लीजिये आप एक थोक व्यापार (जैसे किराने, का या साधारण सामान का) चलाना चाहते हैं। आप आवश्यक पूँजी का किस प्रकार अनुमान लगावेंगे ? यदि आप पूरी पूँजी स्वय नहीं लगा सकते, तो शेष पूँजी किस प्रकार प्राप्त करेंगे ? (बनारस, १६४४)

मध्यभारत, इन्टर कामर्स

१०. एक नये व्यवसाय की स्थापना करते समय क्या-क्या बातें ध्यान में रखनी होती हैं और क्यों ? (मध्यभारत, १६५५)

११. मान लीजिये आप थोक व्यापार (किराने, कपड़े या बिसातखाने का) शुरू करना चाहते हैं। आप आवश्यक पूँजी का अनुमान किस प्रकार लगावेंगे, और यदि आप सारी पूँजी स्वयं नहीं लगा सकते तो उसे कैसे प्राप्त करेंगे ! (१६५३)

अध्याय ५१

व्यापारिक समितियाँ

§ १. प्रारम्भिक

आधुनिक काल में उद्योगपति और व्यापारी सामान्य हित के मामलों में सहकारिता और मेल-मिलाप से काम करने के मूल्य को भूतकाल से अधिक समझने लगे हैं। व्यापारी अनुभव करते हैं कि यदि वे आपस में प्रतिद्वन्द्विता इस सीमा तक करते रहे कि उनमें पूर्ण असहयोग हो जाय, तो इससे उनके संयुक्त, और इसलिए उनके व्यक्तिगत, हितों की हानि होगी। इसी कारण वे व्यापारिक संस्थाएँ बनाकर मेल मिलाप से काम करने लगे हैं। हाल में कोई कारणों से इस मेल मिलाप की आवश्यकता और भी सुदृढ़ हो गई है। पहली बात तो यह है कि पुराना सिद्धांत कि "जो सरकार सबसे कम शासन करती है वह सबसे श्रेष्ठ है" अब त्याग दिया गया है, और सरकार व्यापार के सामान्य क्षेत्रों में अधिकाधिक हस्तक्षेप करती जा रही है। अतः यह आवश्यक हो गया है कि व्यापारीगण संगठित हों; अपने हितों की रक्षा करें; और सरकार को अपने कामों में अनुचित हस्तक्षेप करने से रोकें। दूसरे, आजकल श्रम और पूँजी में विरोध तीव्र होता जा रहा है। मजदूर सोचते हैं कि मिल मालिक उन्हें उचित मजदूरी नहीं देते; और मिल मालिक कभी कभी यह सोचते हैं कि वे मजदूरों को उचित से अधिक मजदूरी दे रहे हैं। ऐसे विचारों का परिणाम होता हैं हड़तालें और तालेबन्दी, जिन्हें 'औद्योगिक अशान्ति' कहा जाता है। हड़तालें छूत रोग की भाँति एक कारखाने से दूसरे कारखाने में तेजी से फैलती हैं। ऐसे संयुक्त श्रम मोर्चें का सामना करने के लिए उद्योगपति भी अपनी संस्था संगठित करते हैं जिससे कि मामला जितनी शीघ्रता और आसानी से सुलझ जाय उतना अच्छा। तीसरे, आजकल के प्रगतिशील ज्ञान और याता-

यात एव सन्देशवाहन के शीघ्र साधनो के युग मे यह आवश्यक है कि व्यापारी एक विशिष्ट सेवक-मण्डल नियुक्त करें जो उन्हे सामयिक विकासों के स्पर्श मे रक्खे और उन्हें विभिन्न समस्याओं पर विशिष्ट सम्मति दे सके। ऐसा बहुधा व्यापारी केवल अकेला नहीं कर सकता, किन्तु यदि बहुत से व्यापारी सयुक्त हो जाये तो ऐसा कर सकते है। चौथे, व्यापारी अब समझने लगे हैं कि व्यापारी शिक्षा, विशिष्ट शिक्षा, आविष्कार और अन्वेषण उनके लिए बहुत लाभप्रद और सहायक होते हैं। अतः यदि वे ठीक प्रकार का एक संयुक्त सङ्घ स्थापित कर लें, तो इन बातो को प्रोत्साहित किया जा सकता है। यही कारण है कि उन्होंने ससार के प्रत्येक देश मे चेम्बर आव कामर्स तथा इसी प्रकार की अन्य व्यापारिक सस्थाओं की स्थापना प्रोत्साहित की है।

यह स्पष्टतया समझ लेना चाहिये कि ऐसी संस्थाएं पूँजी का सङ्घ नहीं होतीं; वे पूँजीपतियों का सङ्घ होती हैं। पूँजी के सङ्घों के उदाहरण फर्म, संयुक्त पूँजी की कम्पनी, ट्रस्ट आदि हैं जिनका वर्णन हम इस ग्रन्थ की एक पहली शाखा मे कर चुके हैं। ये पूँजी के सङ्घ उन व्यापारिक सस्थाओं से भिन्न होते हैं जिन्हें पूँजीपति अपने सामान्य हित-वर्धन के लिये स्थापित करते हैं।

व्यापारिक समितियाँ दो भागो मे विभाजित की जा सकती हैं—व्यावसायिक समतियाँ (Trade Associations) और व्यापार-मण्डल (Chamber of Commerce)। हम नीचे इन दोनों प्रकार की समिजियों का विवरण देगे।

§ २. व्यावसायिक समितियाँ

किसी विशेष उद्योग के उत्पादकों के संगठन को व्यावसायिक समिति कहते हैं। उदाहरण के लिये, बम्बई की मिलओनर्स एसोसियेशन सूती कपड़ों की मिलों के स्वामियों की समिति है और इसलिये यह व्यापारिक समिति की श्रेणी मे आती है। बहुत से स्थानों मे स्थानीय प्रकाशक समिति बना लेते है, जो इस प्रकार के सङ्गठन का दूसरा उदाहरण है। हम

नीचे अपने देश की कुछ महत्वपूर्ण व्यावसायिक समितियों का ब्यौरा देते हैं।

१. मिल ओनर्स एसोसिएशन, बम्बई—इस सगठन को देश के उद्योगपतियों की सबसे पुरानी तथा इससे महत्वपूर्ण समितियों मे से एक होने का गौरव प्राप्त है। देश की सूती मिल के स्वामी ही इसके सदस्य हो सकते हैं। यह समिति सूती कपड़े के आयात तथा निर्यात सम्बन्धी आँकड़े हर महीने प्रकाशित करती है। समय समय पर यह सूती कपड़े के उद्योग से सम्बन्ध रखने वाले आँकड़े प्रकाशित करती है जो सर्वमान्य होते हैं। देश के सूती कपड़े के हर महत्वपूर्ण व्यापारिक केन्द्र मे इसके संवाददाता उपस्थित रहते हैं और यह अपने सदस्य को मूल्यों के रुझान का बराबर ज्ञान कराती रहती है। सूती कपड़े के आयात मूल्य तथा थोक-मूल्य के आँकड़े भी यह बराबर देती रहती है। समिति की श्रम सम्बन्धी नीति आरम्भ से ही प्रगतिवादी रही है और इसके प्रयास श्रमिकों की अवस्था सुधारने में काफी सफल रहे हैं। इसके अतिरिक्त देश की अर्थ-व्यवस्था मे इस समिति का महत्वपूर्ण स्थान है और पार्लियामेंट, धारा सभाओं तथा अन्य स्थानों मे इसके प्रतिनिधि स्थान पाते हैं।

२. इण्डियन जूट मिल्स एसोसिएशन, कलकत्ता—इस समिति ने देश की जूट की मिलों में निकट सहयोग तथा एकता स्थापित कर दी है और यह इसी के प्रयासों का परिणाम है कि जूट मिलें उत्पत्ति सीमित करने तथा मूल्य के मामले में एक ही नीति का पालन बहुधा करती रही है। इस समिति का एक अन्वेषण विभाग तथा अच्छी प्रयोगशाला भी है जिसमें प्रवीण वैज्ञानिक अनुसंधान करते रहते हैं और सदस्यों की विशिष्ट समस्याओं के हल करने मे सहायक होते हैं।

३. पीसगुड्स नेटिव मर्चेन्ट्स एसोसिएशन, बम्बई—इसके उद्देश्य निम्नलिखित हैं. (अ) बम्बई के पीसगुड्स के व्यापारियों में एकता स्थापित करना और उनके हितों की रक्षा करना, (आ) इस व्यवसाय की कठिनाइयों का निवारण करना और इसके प्रसार का प्रयत्न करना, (इ) आँकड़ों को इकट्ठा

और प्रकाशित करना, और (ई) जो झगड़े इसके पास लाये जाये उनका निर्णय करना।

४. अन्य समितियाँ—इसी प्रकार की देश में काम करने वाली अन्य समितियों के नाम नीचे दिये जाते हैं : East India Cotton Association, All-India Food Preservers' Association, Grain and Oilseeds Merchants' Association of Bombay, Press Association of New Delhi, Pressowners' Association of Bombay.

काम और उद्देश्य

हमारे देश म काम करने वाली कुछ व्यावसायिक समितियों का जो वर्णन ऊपर दिया गया है, उससे इनके कार्यों तथा उद्देश्यों का कुछ अनुमान लगाया जा सकता है। उसका संक्षिप्त ब्यौरा नीचे दिया जाता है :

१. किसी विशेष व्यवसाय या व्यापार में संलग्न व्यापारियों में एकता स्थापित करना।
२. सम्बन्धित उद्योग की उपस्थित कठिनाइयों को दूर करना और उसकी उन्नति तथा विस्तार के लिये प्रयत्न करना।
३. उत्पादकों के लाभ के लिये उत्पत्ति, निर्यात, आयात तथा इसी प्रकार के और आँकड़े प्रकाशित करना।
४. विभिन्न महत्वपूर्ण संस्थाओं में प्रतिनिधित्व प्राप्त करना और प्रतिनिधि भेजना जिससे कि देश की आर्थिक नीति को उद्योग के हित के अनुकूल बनाया जाय।
५. एक सर्वमान्य श्रम-सम्बन्धी नीति का प्रचार करना जो कि मालिकों और मजदूरों के हित में हो।
६. इसके पास जो झगड़े आवें, उनमें बीच बचाव करना।
७. यदि आवश्यक हो तो उत्पत्ति सीमित करना।
८. प्रत्यक्ष तथा परोक्ष रीतियों से यह प्रयत्न करना कि समस्त उत्पादक समान्य मूल्य स्थिर करें जिससे कि उनमें स्पर्द्धा न हो।

९. सदस्यों को विशिष्ट सम्मति देना।

व्यावसायिक समितियों के लाभ

व्यावसायिक समितियाँ कुछ दिशाओं में बहुत लाभदायक सिद्ध हो चुकी हैं और उनकी उपादेयता को पूर्णतया अस्वीकार नहीं किया जा सकता। (१) उनके द्वारा प्रकाशित आँकड़े देख कर अकुशल उत्पादक अपनी लागत कम करने की चेष्टा करते हैं जिससे कि कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। आँकड़ों को देख कर उद्योगपतियों का ज्ञान भी बढ़ता है। (२) अपने सदस्यों की विशिष्ट समस्याओं का ये हल करती हैं और बहुधा ऐसी सहायता कोई उद्योगपति केवल अपने साधनों के आधार पर प्राप्त नहीं कर सकता। (३) एकता और मैत्री हो जाने पर उद्योगपति समान नीति अपनाने लगते हैं जिससे उन सब को लाभ होता है और वे "बाह्य मितव्ययिता" का पूरा लाभ उठाते हैं। (४ उत्पत्ति की मात्रा को सीमित करने तथा समान मूल्य स्थिर करने की नीति को सर्वमान्य बनाकर ऐसी समितियों ने बहुधा उद्योग को संकट से बचाया है, जैसा कि हमारे देश में जूट उद्योग के विषय में हुआ है। (५) बहुधा प्रगतिशील श्रम नीति को अपनाकर उन्होंने औद्योगिक शांति स्थापित की है और उत्पत्ति को बढ़ाया है। (६) उद्योग के दृष्टिकोण को उपस्थित करके उन्होंने उपयुक्त आर्थिक नीति के बनाने में सरकार की सहायता की है। (७) झगड़ों का निर्णय करके वे सदस्यों को अदालत के खर्चे तथा परेशानियों से बचाते हैं।

आलोचना

यह तो निस्सन्देह है कि उद्योग के तथा उसके सदस्यों के दृष्टिको . व्यावसायिक समितियाँ बहुत लाभदायक काम करती हैं, किन्तु यह प्रश्न बहुधा पूछा जाता है उनके कार्य समस्त समाज को भी लाभ पहुँचाते हैं या नहीं।

मूल्यों का नियन्त्रण और स्पर्द्धा को निरुत्साहित करना - बहुधा व्यावसायिक समितियाँ इसलिये स्थापित की जाती हैं कि वे किसी उद्योग के सदस्यों के वैज्ञानिक तथा व्यापारिक आँकड़े और सूचनाएँ देती रहें जो उनके

लिये आवश्यक तथा उपयोगी हैं। किन्तु बहुधा वे अपने काम विस्तृत करती जाती हैं; और अन्त में वे उत्पादकों की स्पर्द्धा घटाने और मूल्यों को बनाये रखने या उनको बढ़ाने के प्रयत्न करने लगती हैं। कभी-कभी वे ऐसा प्रत्यक्ष रूप से करती हैं जैसा कि हमारे देश में इडियन जूट मिल्स एसोसिएशन ने किया है। किन्तु प्रगतिशील औद्योगिक देशों में, जिन्हें एकाधिकार (monopoly) के दुष्परिणामों का अनुभव हो चुका है, वे परोक्ष (indirect) रीतियाँ अपनाती हैं। "मूल्य तथा उत्पत्ति सम्बन्धी आँकड़ों का प्रकाशन, समान और स्थायी मूल्य की नीति के अपनाने में सहायक होता है; और जो मैत्री उत्पन्न हो जाती है वह मूल्य घटा कर स्पर्द्धा करने के विरुद्ध सामान्य भावना उत्पन्न कर देती है, और व्यक्तियों को इस भावना के विरोध करने के लिये निर्बल बना देती है।"* जब मूल्य स्थायी करने या उनके बढ़ाने का प्रयत्न किया जाता है, तब व्यावसायिक समितियों के काम निश्चय ही समाज विरोधी होते हैं।

आर्थिक नीतियों पर अनुचित प्रभाव डालना—कभी कभी ऐसी समितियाँ सरकार पर अनुचित प्रभाव प्राप्त कर लेती हैं, और फिर वे उसे ऐसी नीति अपनाने पर बाध्य करती है जो देश के हित मे नहीं होती। इस प्रकार के भय भारत ऐसे पिछड़े हुए देश में अधिक हैं क्योंकि यहाँ बिना उद्योगपतियों की सहायता के उत्पत्ति नहीं बढ़ सकती। ऐसे चिन्ह दृष्टिगोचर हो रहे हैं कि उद्योगपतियों की अत्यधिक लाभ की तृष्णा सरकार को स्वतन्त्र नीति के अपनाने में, जो देश के सर्वथा हित में हो, बाधक हो रही है। ऐसी समितियों के इस प्रकार के काम देश के लिये अहितकर होते हैं।

देखिये* J. K. Gifford *Economics for Commerce* (Brisbane, 1942), p. 176, A. R. Burns, *The Decline of Competition* (New York, 1936), p. 74.

उपचार

देश की सरकार को निरन्तर सजग रहना चाहिये कि व्यावसायिक समितियाँ मूल्यों को स्थायी बनाकर अथवा देश की आर्थिक तथा व्यापारिक नीति पर अनुचित प्रभाव डाल कर देश के हित के विरुद्ध काम न करें। यदि ऐसी समितियों का उनकी हानिकारक शक्तियों से विहीन कर दिया जाय, तो वे देश का बहुत भला कर सकती हैं।

§ ३. व्यापार मण्डल या चैम्बर आव कामर्स

हम ऊपर बता चुके हैं कि किसी विशेष उद्योग या किसी विशेष व्यापार के सामान्य हितों की रक्षा करने वाले सगठन का "व्यापारिक समिति" कहते हैं। किन्तु जो सगठन समस्त व्यवसाय, व्यापार तथा उद्योगों की हित रक्षा के लिये स्थापित किया जाता है, उसे "व्यापार मण्डल" कहा जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि व्यापारियों तथा उद्योगपतियों के सामान्य हितों की रक्षा तथा उनकी वृद्धि के लिये जो समिति स्वेच्छा से स्थापित की जाती है, उसे व्यापार मण्डल या चैम्बर आव कामर्स कहते हैं।

काम और उद्देश्य

व्यापार मण्डल के उद्देश्य बहुधा विभिन्न तथा विस्तृत होते हैं किन्तु उन सब का उद्देश्य व्यवसाय, व्यापार तथा उद्योग को प्रोत्साहन देना होता है। इनके कामों का संक्षिप्त ब्यौरा नीचे दिया जाता है :

१. व्यवसाय, व्यापार तथा उद्योग को सहायता और प्रोत्साहन देना।

२. देश के व्यापारियों तथा उद्योगपतियों के हितों की रक्षा करना।

३ सदस्यों के मतविरोधों को दूर करना।

४. झगड़ों का पञ्चायत के आधार पर फैसला करना।

५. विभिन्न सगठनों में अपने प्रतिनिधि भेजना जिससे कि देश की आर्थिक नीति व्यावसायिक हितों के अनुकूल हो।

६ सदस्यों को लाभदायक, वैज्ञानिक, और व्यावसायिक सूचना तथा आँकड़े देते रहना।

७ देश में व्यापारिक तथा वैज्ञानिक शिक्षा के प्रचार तथा प्रसार में सहायता देना।

८ उद्गम के प्रमाण पत्र (Certificate of Origin) निर्गमित करना तथा अन्य रीति से विदेशी व्यापार में सहायता पहुँचाना।

९ देश और विदेश के आयातकर्ताओं और निर्यातकर्ताओं में सम्पर्क स्थापित करना।

१० सदस्यों को ऋण वसूल करने में सहायता देना।

११ व्यापार और उद्योग से सम्बन्धित समस्याओं पर सरकार और जनता का ध्यान आकर्षित करना।

१२ सदस्यों के आर्थिक स्थिति के सम्बन्ध में विश्वस्त सूचना देना।

ऊपर के विवरण से स्पष्ट है कि व्यापार मण्डल व्यक्तिगत व्यापारियों का ही नहीं वरन् देश के व्यापार और उद्योग भर को लाभ पहुचाता है। पाठक को चाहिए कि व्यापार मण्डल के उपरोक्त कामों को दो वर्गों में बाँटे—व जो व्यक्तिगत व्यापारियों को उपयोगी हैं और वे जो व्यापार और उद्योग को सामूहिक रूप से लाभ पहुचाते हैं।

भारत मे व्यापार मडल

भारत में व्यापारमण्डलों की स्थापना हाल म ही हुई है। जब अँग्रेजों ने इस देश में व्यापार करना तथा उद्योग चलाना आरम्भ किया, तब उन्होंने अपने हितो की रक्षा तथा वृद्धि के लिए व्यापार मण्डल की स्थापना की। बाद को जब देशवासी भी व्यापार तथा उद्योग के क्षेत्र में उतरे तो उन्होंने भी इस प्रकार के सगठन के महत्व को समझा, और अपने हितों की रक्षा तथा वृद्धि के लिए उन्हें स्थापित किया। देश के जो भाग व्यापारिक तथा औद्योगिक दृष्टि से बढे हुये हैं, वहाँ ऐसे सगठन बड़ी सख्या में पाये जाते हैं।

हम वर्तमान चैम्बरों को तीन भागों में बाँट सकते हैं : (१) वे जिनकी सदस्यता केवल योरुप निवासियों को खुली हुई है, (२) वे जिनकी सदस्यता केवल भारतीय व्यापारियों को खुली हुई है जैसे बम्बई का इडियन मर्चेन्टस चैम्बर; और (३) वे जिनकी सदस्यता योरुप निवासी और भारतवासी दोनों ही के लिये खुली हुई है। हम नीचे देश के कुछ महत्वपूर्ण चैम्बरों की सूची देते हैं : Bengal Chamber of Commerce, Bengal National Chamber of Commerce, Indian Chamber of Commerce, International Chamber of Commerce, and Associated Chamber of Commerce—ये सब बंगाल में हैं; Bombay Chamber of Commerce, Indian Merchants' Chamber, Maharashtra Chamber of Commerce—ये सब बम्बई में हैं, Madras Chamber of Commerce and Southern India Chamber of Commerce —ये सब मद्रास में हैं, Northern India Chamber of Commerce, Upper India Chamber of Commerce and Merchants' Chamber of U P, and U. P. Chamber of Commerce—ये सब यू० पी० ही में हैं।

इंडियन चैम्बर आव कामर्स—हम नीचे कलकत्ते के इण्डियन चैम्बर आव कामर्स के उद्देश्यों का उदाहरण के लिये वर्णन करते हैं जो इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि ऐसी संस्थाओं का क्या उद्देश्य होता है। यह चैम्बर सन् १९२५ ई० में भारत के व्यापार, व्यवसाय और उद्योगों की उन्नति करने के लिए, और विशेषकर ऐसे व्यापार, व्यवसाय और उद्योगों के प्रोत्साहन के लिए जिनमें भारतवासी संलग्न हों, स्थापित हुआ था। इसके उद्देश्य इस प्रकार हैं : भारत के ऐसे व्यापार, व्यवसाय और उद्योगों की सहायता करना और उन्हे प्रोत्साहित करना जो भारतीय पूँजी से चलाये गए हों और जिनका प्रबन्ध भारतीय हो; भारत और उसके किसी भी भाग के सामान्य व्यापारिक हितों पर दृष्टि रखना और उनकी रक्षा करना, मुख्यतया भारत में व्यापार व्यवसाय और उद्योगों में संलग्न भारतीयों के हितों की रक्षा करना, इस चैम्बर के सदस्यों

के पारस्परिक झगड़े निबटाना; चैम्बर की पचायत से जो पक्ष निर्णय कराना चाहें और उस निर्णय के अनुकूल काम करने को राजी हों, उनके व्यापारिक सौदे सम्बन्धी झगड़े निबटाना, व्यापारिक और विशिष्ट शिक्षा को तथा कला और विज्ञान की उच्च शाखाओं के अध्ययन को, जो व्यापार व्यवसाय और उद्योगों का विकास कर सकते हैं, प्रोत्साहित करना; कलकत्ते में व्यापारिक विनिमय के लिए उपयुक्त इमारतें लेना, उन्हें नियमबद्ध करना और उन्हें चलाना; अन्य सब ऐसे काम करना जो व्यापार और व्यवसाय और उद्योगों की उन्नति में सहायक हों; और ऐसे काम करना जो उपरोक्त उद्देश्यों को पूरा करने में सहायक हो सकें।

व्यापार मण्डल का फैडरेशन—सन् १९१३ ई० में सबसे पहले बम्बई के एक बड़े औद्योगिक और व्यापारिक नेता, सर फजल भाई करीम भाई,ने इस बात का सुझाव रक्खा कि देश के समस्त चैम्बरों को एक इडियन कामर्शियल कांग्रेस में सयुक्त हो जाना चाहिये। यह सुझाव बहुत अच्छा था और देश के विभिन्न भागों ने इसका समर्थन भी किया। अतः यद्यपि प्रथम महायुद्ध छिड़ जाने के कारण इस सुझाव को तुरन्त ही रचनात्मक रूप न दिया जा सका, किन्तु सन् १९१५ में इडियन कामशियल कांग्रेस का पहला अधिवेशन बम्बई मे हुआ। देश के विभिन्न भागों से अनेक डेलीगेट कांग्रेस में उपस्थित हुये। कांग्रेस ने निश्चय किया कि एक सयुक्त भारतीय चैम्बर आव कामर्स (Associated Indian Chambers of Commerce) स्थापित किया जाय और इस काम के लिये कमेटी भी नियुक्त की गई है। किन्तु समर्थन के अभाव के कारण यह सगठन स्थापित न हो सका। सन १९२६ के लगभग जब कि देश के सामने महत्वपूर्ण चलन सम्बन्धी समस्यायें उपस्थित हुईं, तब ऐसे सगठन की ओर फिर ध्यान गया। एक और कांग्रेस कलकत्ते में सन् १९२६ में बुलाई गई जिसमें Federation of Indian Chambers of Commerce and Industry की स्थापना का निश्चय हुआ। यह फैडरेशन स्थापित हो चुकी है और इसने अच्छा काम किया है। इस फैडरेशन के उद्देश्य निम्नलिखित हैं .

(अ) भारतीय व्यापारियों को देशी और विदेशी व्यापार, यातायात, उद्योग, द्राम्यिक तथा अन्य आर्थिक मामलों में प्रोत्साहित करना।

(आ) भारतीय व्यापार के सामान्य हित से सम्बंधित समस्त विषयों पर व्यापारिक समुदाय और संस्थाओं में मैत्री भाव एवं एकमत उत्साहित करना।

(इ) फेडरेशन के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किसी भी सरकार, म्युनिसिपल बोर्ड, स्थानीय बोर्ड अथवा अन्य किसी अधिकृत संस्था के साथ समझौता करना, किसी सरकार या अधिकृत संस्था से समस्त अधिकार, सुविधायें या रियायतें प्राप्त करना, जिनको फेडरेशन उचित समझे, और ऐसे समझौतों, अधिकारों, सुविधाओं और रियायतों का उपयोग करना।

(ई) फैडरेशन के उपक्रम या उसके किसी भाग की बिक्री या व्यवस्था ऐसे प्रतिफल के लिये करना जो फैडरेशन ठीक समझे और 'विशेषतया किसी भी ऐसी कम्पनी के शेयर, डिबेंचर या सिक्योरिटी के लिये जिसके उद्देश्य पूर्णतया या अंशत. फैडरेशन के समान हों।

(उ) फेडरेशन के पूर्णतया या अंशतः समान उद्देश्य वाली कम्पनी के शेयरों को खरीदना या और किसी प्रकार प्राप्त करना।

(ऊ) किसी ट्रस्ट को लेना और उसका काम करना यदि उसका करना फैडरेशन को उचित प्रतीत हो।

(ए) बिल आव एक्सचेंज, प्रामिसरी नोट, जहाजी बिल्टी, आदेश पत्र, डिबेंचर या अन्य सिक्योरिटियों ? नेचान साध्य या हस्तातरण योग्य रुक्कों का लिखना, ?नाना, स्वीकार करना, भुनाना, या निर्गमित करना।

भारतीय व्यापार मंडलों की आलोचना—व्यापार मण्डलों ने व्यापारियों तथा उद्योगपतियों में एकता स्थापित करने तथा भारतीय व्यवसाय के अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न करने में प्रयत्नशील होकर अच्छा काम किया है। किन्तु उनमें कुछ दोष भी है :

१. कुछ व्यापार मण्डल ऐसे संगठन के महत्व तथा कामों को बिना समझे

स्थापित कर लिये जाते हैं और कभी कभी उनके सदस्य भी अनपढ़ होते हैं। परिणाम यह होता है कि वे अपना काम ठीक तरह नहीं कर पाते और थोड़े समय बाद ही वे बन्द हो जाते हैं।

२. कभी-कभी उनके पदाधिकारी स्वयं अपने लाभ और हित की वृद्धि की चेष्टा करने लगते हैं जिससे असतोष तथा अशाति फैलने लगती है।

३. कुछ मण्डलों का दृष्टिकोण सीमित होता है और वे पुराने तरीकों का पालन करते हैं।

४. कुछ मण्डलों के सदस्य केवल विदेशी ही हो सकते हैं और वे विदेशों के हित का ही ध्यान रखते हैं।

५. कुछ मण्डल साम्प्रदायिक आधार पर स्थापित होते हैं और वे भारतीय व्यवसाय को बहुत हानि पहुँचाते हैं।

६. कुछ मडलों का सगठन तथा प्रबध इतना दूषित होता है कि इने गिने व्यक्ति ही समस्त शक्ति प्राप्त कर लेते हैं।

परीक्षा-प्रश्न

उत्तर प्रदेश, इन्टर कामर्स

१. चैम्बर आव कामर्स से व्यापारी क्या लाभ उठाता है? (यू० पी०, १९४५)

राजपूताना, इन्टर कामर्स

२. चैम्बर आव कामर्स क्या होता है? भारत में चैम्बर आव कामर्स के सगठन और कार्यों की व्याख्या कीजिये, और भारतीय व्यापार एव उद्योग को उनकी उपादेयता बढाने के लिये सुभाव दीजिए। (राजपूताना, १९५३)

३. व्यापारिक समिति और चैम्बर आव कामर्स में क्या अन्तर है? भारत में उनका महत्व भी बताइये। (राजपूताना, १९५२)

४. व्यापार मण्डल के प्रधान कार्य क्या होते हैं? यह औद्योगिक व्यापारियों तथा सामान्य व्यापारियों की किस प्रकार सहायता करता है? भारत के

किन्हीं तीन व्यापार-मण्डलों के नाम लिखिये और यह भी बताइये कि वे कहाँ स्थित हैं। (राजपूताना, १६५१)

५. व्यावसायिक समिति (Trade Association) और व्यापार मंडल (Chamber of Commerce) में अन्तर बताइये और भारतीय व्यापारियों को उनके महत्व बताइये। (राजपूताना, १६५०)

६. व्यापारिक सस्था और चैम्बर आव कामर्स का भेद बताइये। उनका व्यापारियों के लिये महत्व भी बताइये। (राजपूताना, १६४६)

७. भारत में विभिन्न व्यापारों का प्रतिनिधित्व करने वाली संस्थाओं में से कुछ के नाम बताइये। इनके क्या लाभ हैं? (राजपूताना, १६४८)

८. चैम्बर आव कामर्स क्या होता है? भारत में इनके संगठन तथा कार्यों की विवेचना कीजिए और बताइये कि उनकी उपादेयता किस प्रकार बढ़ाई जा सकती है। (राजपूताना, १६४६)

६. चैम्बर आव कामर्स के प्रमुख काम क्या होते हैं? यह व्यक्तिगत व्यापारियों तथा व्यापारी वर्ग की किस प्रकार सहायता करता है? भारत में काम करने वाले तीन प्रमुख चैम्बर आव कामर्स के नाम बताइये और उनकी स्थिति भी लिखिए। (राजपूताना, १६४४)

पटना, इन्टर कामर्स

१०. व्यावसायिक समिति और व्यापार मण्डल में अन्तर बताइए, और भारतीय व्यापारियों को उनके महत्व बताइये। (पटना, १६५२ वार्षिक)

११. व्यापारिक संस्थाओं के क्या उद्देश्य होते हैं? बिहार की इस प्रकार की संस्थाओं का वर्णन कीजिये। (पटना, १६५१ पूरक)

१२. समाज को और विशेषतया व्यापारी वर्ग को, चैम्बर आव कामर्स क्या लाभ पहुँचाते हैं? (पटना, १६५१)

१३. व्यापारिक सगठन क्या होता है? इसके विभिन्न स्वरूप और उनके कामों की विवेचना कीजिए। (पटना, १६४७)

१४. व्यापारिक समिति के क्या काम होते हैं और क्या काम होने चाहिये ! ऐसी समितियाँ किस प्रकार सामान्य हित की वृद्धि कर सकती हैं ? (पटना, १६४६)

बिहार, इन्टर कामर्स

१५. व्यापारिक समितियाँ क्या होती हैं ? उनके सामान्य कार्य क्या हैं, और वे (अ) व्यक्तिगत व्यापारियों की तथा (आ) सामान्य व्यापारिक वर्ग क किस प्रकार सहायता करती हैं ? (बिहार, १६५५)

अध्याय ५२

पेटेंट, डिजाइन तथा ट्रेड मार्क

§ १. पेटेंट, डिजाइन तथा ट्रेड मार्क का अर्थ

व्यापारिक वस्तुओं की विक्रयशीलता (Saleability) कई बातों पर निर्भर होती है जिसमें निम्न महत्वपूर्ण हैं :

(१) वस्तु की उपादेयता और उसका सस्तापन,

(२) वस्तु की आकृति (appearance) का आकर्षण, तथा

(३) वस्तु की बाजार में लोकप्रियता।

(१) वस्तु की उपादेयता बढ़ाने तथा लागत घटाने के लिये उत्पादक आविष्कारों (inventions) का प्रयोग करते हैं। अविष्कारकर्ता आविष्कारों को उद्योगपतियों को बेच देते हैं। आविष्कार करने में बड़े लगन से काम करना पड़ता है और इसमें बहुत बलिदान करना पड़ता है। अतः कानून आविष्कारकर्ता को यह अधिकार देता है कि आविष्कार का वही अकेला प्रयोग कर सकता है। आविष्कार की रक्षा प्राप्त करने के लिए आविष्कारकर्ता इंडियन पेटेंट एण्ड डिजाइस एक्ट १६११ के भाग १ के अन्तर्गत पेटेंट प्राप्त कर सकता है।

(२) वस्तु की आकृति आकर्षक बनाने के लिये नई और मौलिक डिजाइनें व्यवहार में लाई जा सकती हैं। डिजाइन बनाने वाले बहुत लगन के साथ काम करने पर और बलिदान करके नई और मौलिक डिजाइनें निकालते हैं। अतः यदि और लोग उनकी नकल करने लगें और कानून उन्हें ऐसा करने दे, तो डिजाइन बनाने वाले को कोई उत्साह ही न होगा। अतः कानून मौलिक डिजाइनों की रक्षा करता है अर्थात् केवल बनाने वाले को उसका प्रयोग करने का एकमात्र अधिकार देता है। नई और मौलिक डिजाइनों की

रक्षा इंडियन पेटेंट्स एण्ड डिजाइन्स एक्ट, १६११, के भाग दो के अन्तर्गत डिजाइनों की रजिस्ट्री कराके प्राप्त की जा सकती है।

(३) यदि कोई माल उपयोगी हो और साथ ही साथ सस्ता भी हो, तो उसकी माँग बढ़ जाती है और उत्पादक का लाभ भी बढ़ जाता है। ऐसा पदार्थ बाजार में लोकप्रिय हो जाता है। ऐसी अवस्था में धोखेबाज व्यापारी उस माल से मिलता जुलता माल मँगाने लगते है और असली माल का बाजार बिगाड़ने लगते हैं। अतः ऐसे पदार्थ की लोकप्रियता की रक्षा करने के लिये जो उपादेयता तथा सस्तेपन के लिये विख्यात हो चुकी है, कानून ने यह व्यवस्था की है कि उत्पादक माल पर कोई विशिष्ट चिन्ह (ट्रेडमार्क) लगावे; और ऐसे चिन्ह के प्रयोग का एकमात्र अधिकार उस उत्पादक या व्यापारी का ही रहे। टेड मार्क की रक्षा के लिये ट्रेड मार्क की रजिस्ट्री ट्रेड मार्क्स एक्ट १६१४ के अन्तर्गत कराई जा सकती है।

कार्यालय के पते

पेटेंट और डिजाइन की रजिस्ट्री के लिये आवेदन पत्र Controller of Patentsand Designs, Patent Office, 214 Lower Circular Road, Calcutta को भेजना चाहिये, और ट्रेड मार्क की रजिस्ट्री के लिये आवेदन-पत्र भेजने का पता यह है : Registrar of Trade Marks, Trade Marks Registry, Central Buildings, Queen's Road, Bombay.

२. पेटेंट प्रणाली

पेटेंट का अर्थ

किसी आविष्कार के बनाने, बेचने तथा प्रयुक्त करने का निश्चित अवधि के लिये और सरकार द्वारा प्रदत्त एकमात्र अधिकार पेटेंट (Patent) कहलाता है। पेटेंट के विषय में दो बातें समझ लेनी चाहिये : (अ) पेटेंट केवल आविष्कार का कराया जा सकता है, और (आ) पेटेंट आविष्कार की नवीनता का प्रमाण-पत्र होता है, उसकी उपादेयता का नहीं।

पेटेंट प्रथा के लाभ

आविष्कारकर्ता को लाभ—(१) इससे आविष्कारकर्ता को आविष्कार के प्रयोग का एकमात्र अधिकार प्राप्त हो जाता है। अतः आविष्कार का वह पूरा लाभ उठा सकता है। (२) आविष्कार का पता चल जाने पर भी और लोग इसका इस्तेमाल नहीं कर सकते। (३) यदि कोई बिना आज्ञा के आविष्कार का प्रयोग करे तो कानून द्वारा उसे दण्ड दिलाया जा सकता है। (४) आविष्कारकर्ता को एकमात्र अधिकार प्राप्त होने के कारण, उसे व्यापारिक पैमाने पर मशीन बनाने के लिये पूँजी एकत्रित करना आसान हो जाता है। (५) यदि आविष्कारकर्ता चाहे, तो अपना आविष्कार बेच भी सकता है और अपना एकमात्र अधिकार दूसरे को दे सकता है। (६) पेटेंट इस बात का प्रमाण है कि अमुक व्यक्ति ने अमुक आविष्कार किया।

समाज को लाभ—इस प्रथा के फलस्वरूप आविष्कारों की संख्या बढ़ जाती है और समाज की औद्योगिक उन्नति गतिपूर्वक होती है। (१) यह आविष्कारकर्ता को एकमात्र अधिकार देकर नये आविष्कार प्रोत्साहित करती है। (२) यह जन-साधारण में नये-नये आविष्कारों का ज्ञान फैलाती है। (३) यह आविष्कारों के व्यापारिक पैमाने पर उत्पन्न किये जाने को सम्भव बनाती है।

पेटेंट प्राप्त करने की रीति—आविष्कारकर्ता पेटेंट स्वयं प्राप्त कर सकता है। इसके लिये उसे इस रीति का पालन करना पड़ता है :

(१) **पेटेन्ट के लिये आवेदन-पत्र देना**—यह आवेदन पत्र निर्धारित स्वरूप में देना चाहिये। साथ में आविष्कार का विस्तृत समाचार (Specification), चित्र तथा फीस भी भेजनी पड़ती है।

(२) **परीक्षा और स्वीकृति**—इसके बाद पेटेन्ट आफिस में इस बात की परीक्षा की जाती है कि आविष्कार निर्माण-रीति (Process manufacture) से सम्बन्धित है और इसके बनाने की रीति सही-सही व्यक्त की गई

है। यदि परीक्षा सफल हुई, तो स्वीकृति दी जाती है और वह Gazette of India में प्रकाशित कर दी जाती है।

(३) विरोध—प्रकाशित होने से चार महीने के अन्दर कोई भी व्यक्ति आवेदन-पत्र का विरोध कर सकता है। विरोध का कारण यह हो सकता है कि आवेदक वास्तविक आविष्कारकर्ता नहीं, इसका विवरण ठीक नहीं दिया गया, आदि। कन्ट्रोलर दोनों पक्षों को सुनकर उचित निर्णय देता है।

(४) पेटेंट पर मुहर लगाना—विरोध का निवारण हो जाने पर, पेटेंट आफिस आवेदक से ३०) की फीस लेकर पेटेंट पर मुहर लगा देता है। फिर पेटेन्ट की प्रविष्टि Register of Patents में कर दी जाती है।

पेटेंट की अवधि और उसका नवकरण

पेटेन्ट १६ साल के लिये दिया जाता है। पहले ४ सालों में नवकरण आवश्यक नहीं होता। किन्तु इसके बाद प्रति वर्ष निश्चित फीस देकर पेटेन्ट का नवकरण (renewal) कराना आवश्यक होता है।

§ ३. डिजाइन की रजिस्ट्री

किसी वस्तु की डिजाइन की भी रजिस्ट्री कराई जा सकती है। ऐसा Indian Patents and Designs Act के अन्तर्गत कराया जा सकता है।

परिभाषा

जब किसी वस्तु की आकृति (appearance) को औद्योगिक रीति द्वारा नया या मौलिक रूप दे दिया जाय, तो उसे नई या मौलिक डिजाइन कहते हैं और उसकी रजिस्ट्री कराई जा सकती है। रजिस्ट्री तभी होगी जबकि आकृति में कुछ नवीनता लाई गई हो। जिन पदार्थों को डिजाइनें रजिस्टर्ड कराई जा सकती हैं, वे १४ वर्गों में विभाजित कर दिये गये हैं।

रजिस्ट्री कराने की रीति

· **आवेदन पत्र**—आवेदन को एक आवेदन पत्र निर्धारित स्वरूप में भरना

चाहिये और उसे पेटेन्ट आफिस में भेज देना चाहिये। इसके साथ निर्धारित फीस और डिजाइन की चार नकल भेजना अनिवार्य है। नवीनता का संक्षिप्त विवरण भी देना पड़ता है जैसे "ऐश ट्रे (Ash tray) की नवीनता उसकी शक्ल में है जैसा चित्र से विदित है", "नवीनता चाय के बर्तन पर अंकित फूलवाली सजावट में है", आदि।

रजिस्ट्री के प्रमाण पत्र का निर्गम—आवेदन पत्र की पेटेन्ट आफिस में परीक्षा की जाती है और यह निश्चय किया जाता है कि डिजाइन वास्तव में नई या मौलिक है। सब बातें ठीक होने पर आवेदन-पत्र स्वीकार कर लिया जाता है, और आवेदन को रजिस्ट्री का प्रमाण पत्र दे दिया जाता है। इसकी प्रविष्टि Register of Designs में भी कर दी जाती है।

अवधि और नवकरण

प्रमाण पत्र पहले पहल पाँच साल के लिये दिया जाता है। उसके बाद यह दो बार १०) की फीस देकर पाँच पाँच साल के लिए बढ़वाया जा सकता है।

'रजिस्टर्ड' शब्द का अङ्कित करना

जिस वस्तु की डिजाइन रजिस्टर्ड करा ली गई हो, उसके हर अदद पर 'Registered' या 'Regd' या 'Rd' शब्द अङ्कित करना अनिवार्य है।

§ ४. ट्रेड मार्क

१९४० का ट्रेड मार्क्स एक्ट व्यापारिक चिन्हों की रजिस्ट्री की व्यवस्था करता है। यह विधान पूरे भारत में (जम्मू और काश्मीर को छोड़ कर) लागू है।

परिभाषा

ट्रेड मार्क उस चित्र, ब्राड, शीर्षक, लेबिल, टिकट, नाम, हस्ताक्षर, शब्द, अक्षर या संख्या को कहते हैं जो किसी वस्तु पर लगाई जाती है और जिसका उद्देश्य यह बताना होता है कि वह वस्तु किस उत्पादक की बनी हुई है।

रजिस्ट्री कराने की रीति

रजिस्ट्री कराने वाले व्यापारी को एक आवेदन-पत्र नियत स्वरूप में भर कर ट्रेड मार्क्स आफिस, बम्बई, को फीस तथा आवश्यक प्रलेखों के साथ भेज देना चाहिये। रजिस्ट्रार आवेदन-पत्र की परीक्षा करेगा; और सब बातें संतोष-जनक होने पर, वह आवेदन-पत्र का विज्ञापन करेगा। विज्ञापन से चार महीने के अन्दर कोई भी व्यक्ति आवेदन-पत्र का विरोध कर सकता है। ऐसा किया जाने पर रजिस्ट्रार दोनों पक्षों को सुनता है और अपना निर्णय देता है। विरोध का निवारण हो जाने पर रजिस्ट्रार ट्रेड मार्क की रजिस्ट्री कर देता है।

अवधि और नवकरण

ट्रेड मार्क पहले-पहल सात साल के लिए रजिस्टर्ड किया जाता है। उसके बाद, यह १५ साल के लिए बढ़ाया जा सकता है।

अभ्यास के प्रश्न

१. पेटेन्ट किसे कहते हैं? इसके क्या लाभ होते हैं?
२. भारतीय पेटेंट प्रथा का वर्णन कीजिये?
३. डिजाइन क्या होती है? इसकी रजिस्ट्री कैसे कराई जाती है?
४. ट्रेड मार्क की परिभाषा दीजिए। इसकी रजिस्ट्री कराने की प्रथा का संक्षिप्त विवरण दीजिये।

अध्याय ५३

क्रम-बंधन (Grading) तथा प्रमापीकरण (Standardisation)

व्यापार में वस्तु की किस्म कई प्रकार से व्यक्त की जाती है। जैसे नमूना (sample) दिखाकर, विवरण (Description) देकर, क्रम (Grade) का हवाला देकर, या प्रमाप (Standard) बताकर। नमूना दिखाकर या विवरण द्वारा वस्तु की किस्म स्थिर करने में बहुत कठिनाई होती है और बहुधा मत भेद तथा मनमुटाव भी हो सकता है। फिर भविष्य के माल का क्रय-विक्रय (Future trading) विवरण या नमूने के आधार पर सदैव नहीं हो सकता है। अत आधुनिक काल म वस्तुओं के क्रय-विक्रय में क्रम (grade) या प्रमाप (standard) का सकेत देकर वस्तु की किस्म निश्चित कर देने का रिवाज बढ़ता जा रहा है।

§ १. प्रमाप तथा क्रम का अर्थ

प्रमाप (Standard)—जिस वस्तु की किस्म सदैव समान रक्खी जा सकती है, उसका प्रमाप स्थिर किया जा सकता है। उदाहरण के लिए एक मोजा बनाने वाला अपने मोजा की किस्म का सकेत इस प्रकार कर सकता है 'क प्रमाप', 'ख प्रमाप', 'ग प्रमाप' आदि। इसका यह अर्थ होगा कि 'क प्रमाप' का मोजा खरीदने पर क्रेता को उसी किस्म की वस्तु मिलेगी जो 'क प्रमाप' के नाम से जानी जाती है, और यही बात अन्य प्रमापों पर लागू होती हैं। बहुधा सरकार स्वयं प्रमाप निश्चित कर देती है और देश भर के उत्पादक इस बात को बता कर व्यापार करते हैं कि उनका माल किस प्रमाप या स्टैंडर्ड का है। उदाहरण के लिए भारत में भारतीय प्रमाप सस्था (Indi-

an Standards Institute) पक्के माल के प्रमाप या स्टेन्डर्ड निश्चित करती है। प्रमाप या स्टेन्डर्ड अधिकतर पक्के माल के नियत किये जाते है क्योंकि प्रकृति-दत्त कच्चे माल की किस्म सदैव और पूर्णतया समान नहीं होती। प्रमाप स्थिर करने की क्रिया को प्रमापीकरण (Standardisation) कहा जाता है।

क्रम (Grade)—कच्चे माल की किस्म सदैव एक-सी नहीं रहती। एक खेत में कई किस्म का गेहूँ पैदा हो सकता है। एक व्यापारी की मुर्गियाँ छोटे-बड़े कई प्रकार के अंडे दे सकती हैं। अतः इन वस्तुओं का क्रम-बन्धन (Grading) कर दिया जाता है। दूसरे शब्दों में, हर वस्तु के क्रम या वर्ग (Grades) बना दिए जाते हैं; हर क्रम या वर्ग के अधिकतम और न्यूनतम गुण निर्धारित कर दिये जाते हैं; और फिर उत्पन्न की हुई वस्तु को विभिन्न वर्गों या क्रमों में छाँट दिया जाता है। उत्पादक वस्तु के विभिन्न वर्गों को अलग अलग मूल्य पर बेच लेता है। इससे खरीदार को यह आश्वासन हो जाता है कि वह अमुक प्रकार का माल खरीद रहा है। व्यापारी को उच्च वर्ग का मूल्य अधिक मिलता है और निम्नवर्ग का कम; किन्तु औसत मूल्य उसे कुछ अधिक ही पड़ता है। क्रम या वर्ग स्थिर करने की क्रिया क्रम-बन्धन (Grading) कहलाती है। क्रम-बन्धन अधिकतर कच्चे माल का किया जाता है। भारत में एगमार्क (Agmark) इसका उदाहरण है।

§ २. भारत में क्रम-बंधन की वर्तमान अवस्था

हमारे देश में कृषि की उपज को क्रम-बन्धन की कई चेष्टायें की गई हैं। इनका संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया जाता है।

एग्रीकल्चरल प्रोड्यूस एक्ट के अन्तर्गत

सन् १९३७ में भारत सरकार ने Agricultural Produce (Grading and Marketing) Act बनाया। इसके अन्तर्गत खेती की उपज के क्रम-बन्धन की व्यवस्था की गई है। इस अधिनियम में एक सूची (Schedule) दी है जिसमें लिखी हुई खेती की वस्तुओं के क्रम-बन्धन का

आयोजन किया गया है। गेहूँ, आटा, चावल, तम्बाकू, आलू, फल, तिलहन, वनस्पति घी आदि वस्तुयें इस सूची में सम्मिलित हैं। सूचीबद्ध वस्तुओं का क्रम-बन्धन कर भी दिया गया है।

ऐगमार्क—इस अधिनियम के अन्तर्गत कुछ नियम बनाये गये हैं जिनके अनुसार विभिन्न केंद्रों में सरकारी पैकर (authorised packers) नियुक्त किये गये हैं जिन्हें निश्चित क्रम या वर्ग या ग्रेड के माल को पैक करके उस पर AGMARK का लेबिल या चिह्न लगाने का अधिकार है। इस लेबिल का माल देश में शुद्ध और अन्य बाजारू माल से श्रेष्ठ माना जाता है। सरकार बराबर जाँच और नमूनों की परीक्षा करती रहती है जिससे कि ऐगमार्क पदार्थों की किस्म खराब न होने पावे।

अभाग्य का विषय है कि यह प्रथा अभी लोकप्रिय नहीं हुई। सन् १९५१ में केवल २१ करोड़ रुपये की वस्तुओं ने ही क्रम-बन्धन से लाभ उठाया। यह कुल खेती की उपज का केवल १% है।

(२) ईस्ट इण्डिया काटन ऐसोसियेशन द्वारा

बम्बई की ईस्ट इण्डिया काटन ऐसोसियेशन कपास का क्रय बन्धन करती आ रही है। इसके नियत क्रम या वर्ग देश-विदेश में प्रसिद्ध हैं।

(३) राज्य सरकारों द्वारा

राज्य सरकारों ने भी कृषिजन्य पदार्थों के क्रम बन्धन की दिशा में कुछ काम किया है और इस ओर और भी उन्नति हो रही है।

§ ३. भारतीय प्रमाण संस्था

भारत सरकार यह चाहती थी कि भारतीय उद्योगपति अपनी वस्तुओं की किस्म बनाये रक्खें और ऐसा माल उत्पन्न करें जो विदेशी माल से मुकाबला कर सके। यह काम तब पूरा हो सकता है जब भारत सरकार कुछ प्रमाप या स्टेन्डर्ड स्थिर कर दे और देश भर के उत्पादक उन प्रमापों के अनुकूल माल

बनावें। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसने सन् १९४६ में भारतीय प्रमाण संस्था (Indian Standards Institute) स्थापित की।

संस्था के उद्देश्य—इस संस्था के निम्नलिखित उद्देश्य हैं :

(१) प्रमाप बनाना और उनको राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता दिलाना,

(२) उद्योगों में प्रमापीकरण, क्वालिटी नियन्त्रण तथा सरलकरण (Simplification) प्रोत्साहित करना,

(३) वस्तुओं के प्रमाणों की रजिस्ट्री का प्रबन्ध करना, और

(४) वस्तुओं की जाँच और परीक्षा के लिये सुविधा प्रदान करना।

इस संस्था ने आरम्भ से ही इस दिशा में अच्छा काम किया है और व्यापार में आने वाले अधिकतर पक्के माल के प्रमाप निश्चित किये जा चुके हैं। किंतु इन प्रमापों की लोकप्रियता अधिक नहीं हो पाई। कुछ लोगों की धारणा है कि बिना कानून द्वारा अनिवार्य बनाये इस दिशा में अधिक सफलता प्राप्त नहीं हो सकती। इस संस्था ने अब "प्रमाण चिन्ह" (Certification Marks) देने की योजना चलाई है। इसके अंतर्गत यह संस्था माल की जाँच करेगी और नियत प्रमाप के होने पर उन पर प्रमाण चिन्ह डाल देगी। इससे ग्राहक को माल की किस्म अच्छी होने का आश्वासन हो जायगा।

अभ्यास के प्रश्न

१ क्रम बन्धन तथा प्रमापीकरण का अर्थ समझाइये। इनमें क्या भेद होता है?

२ भारत म खेती की उपज के क्रम बन्धन की वर्तमान दशा बताइये। ऐगमार्क से आप क्या समझते हैं?

३ भारतीय प्रमाप संस्था के उद्देश्य और कार्यों पर प्रकाश डालिये।